श्री पार्श्वनाथाय नमः ।

श्रीजैनज्ञान-गुणसंग्रह ।

लेखक और संग्राहक

मुनिश्रीसौभाग्यविजयजी महाराज

गोलनगर के श्रीजैनसंघ की आर्थिकसहायतासे

प्रकाशक---

श्रीकविशास्त्रसंग्रह समिति,

जालोर (मारवाड)

वीरसंवत् २४६२

विक्रमसंवत् १९९२ ईस्वी स० १९३६

प्रथमावृत्ति

मूल्य सवा रूपया । १ ३२-०

इदं पुस्तकं श्रीशारदामुद्रणालये तदधिपतिना
श्रावकहर्षचन्द्रात्मजेन पण्डितभगवानदासेन मुद्रितम्
जैनसोसाइटी नं० १५-अमदावाद

प्रस्तावना

मारवाड के विहारसे अनुभव हुआ कि इस प्रदेशके निवासियोंके लिये ऐसी पुस्तकोंकी खास जरूरत है जिन्हें सामान्य मनुष्य भी पढ सके और श्रावककर्म तथा उससे सबन्धित अन्य सामान्य बात सुगमतासे जान सके। जो कि इस आवश्यकता को किसी अशमें पूरा करने वाली गुजराती भाषाकी पुस्तक मिल सकती हैं, परन्तु इस प्रदेशवासियों के लिये गुजराती पुस्तक उतनी उपयोगी नहीं हो सकती, जितनी कि हिन्दी हो सकती है, यह मन विचार करने पर यही निश्चय हुआ कि यहा के जैनगृहस्थों के लिये एक ऐसे ग्रन्थकी योजना होनी आवश्यक है जो हर प्रकारसे उपयोगी हो सके, हमने इस कार्य क लिये मुनिवर्यश्री सौभाग्यविजयजी को सूचना की और उन्हों ने परिश्रमपूर्वक एक गद्यपद्य का संग्रह कर के हमारे सुपुर्द किया जो "जैनज्ञान-गुणसग्रह" नामक पुस्तक के रूपमें पाठकगण के सामने है।

"जैनज्ञान-गुणसग्रह' एक 'सग्रह' ग्रन्थ है। इस में दो खण्ड और उनमें अनेक प्रकरण है।

ग्रन्थ का पहला खण्ड हिन्दीगद्यमें है जो अन्य ग्रन्थों के आधारसे मुनि श्रीसौभाग्यविजयजीने लिखा है, सिर्फ "शरणागति अथवा नामाजोडा" और "रोगिमृत्युज्ञान' नामक

दो अप्रसिद्ध लेख इसमें हमारे भी शामिल किये गये हैं जो "निनिधविचार" शीर्षक प्रकरणमें छपे हैं।

दूसरा खण्ड पद्यमय है, इसमें कुछ रचनायें मुनिश्रीगौभाग्यविजयजीकी खुद की है, और बाकी सब नये पुराने अनेक कवियो की। इन की पसदगी इस प्रदेश के श्रावक-श्राविकागण की रुचि के अनुसार की गई है।

इस प्रकार इस सदर्भ के दो खण्डोंमें क्रमश जैनज्ञान और जैनगुणोंका सग्रह होने के कारण ही इसका सार्थक नाम "जैनज्ञान-गुणसग्रह" रक्खा गया है।

"जैनज्ञानगुणसग्रह" की भाषा सरल और सुबोध बनानेका लक्ष्य रक्खा गया है, इसी कारण इसमें कहीं कहीं देशप्रसिद्ध शब्दों का प्रयोग किया गया है और कुछ हिन्दी शब्दों के उच्चारण देश्यभाषा के अनुसार लिखे गये है।

दूसरे खण्ड में प्राचीन लेखकों के स्तुति, स्तवन, सज्झाय, पद आदि सब मुद्रित पुस्तकों में से लिये गये हैं परन्तु अवकाश न मिलने के कारण उनका हस्तलिखित-मूलपुस्तकों से मिलान नहीं हो सका, इस कारण कदाचित् अशुद्धि रह गइ हो तो पाठकगण सुधार कर पढ़े।

ग्रन्थ के अन्तमें "गोलनगरीयपार्श्वनाथप्रतिष्ठाप्रबन्ध" और "पोषधविधि" नामक दो परिशिष्ट जोडे गये हैं, जिनमें

"पोषधविधि" का तो ग्रन्थ के साथ खास सबन्ध है, क्यों कि 'पोषधव्रत' का ग्रन्थमें निरूपण है तो उस के लेने पारनेकी विधि भी बतानी चाहिये ही, अत. 'पोषधविधि' का इस के साथ जोडना बिलकुल प्रासंगिक है परन्तु 'प्रतिष्ठाप्रबन्ध' का इस ग्रन्थ के साथ क्या सबन्ध है ? यह एक प्रश्न है और उत्तर इस का यह है कि प्रस्तुत "जैनज्ञानगुणसग्रह" 'गोलनगरीयपार्श्वनाथप्रतिष्ठा' का स्मारक ग्रन्थ है, गोलनगर के श्री जैनसघकी प्रार्थना और आर्थिक सहायता से ही यह ग्रन्थ प्रसिद्ध किया गया है, इस दशा में "गोलनगरीयपार्श्वनाथ प्रतिष्ठाप्रबन्ध" का भी इस के साथ छपना अत्यन्त जरूरी था।

'प्रतिष्ठाप्रबन्ध' को इस स्थायीसाहित्य के साथ जोडने का एक और भी कारण है, वह यह कि मारवाडमें प्रतिवर्ष छोटी बडी अनेक प्रतिष्ठायें हुआ करती हैं, और उनमें हजारों रुपया खर्च होता है, परन्तु कई जगह पर प्रतिष्ठाकारकों को अपने काम में 'यश' नही मिलता, इसका मुख्य कारण प्रतिष्ठाकार्य सम्बन्धी योग्य व्यवस्था की खामी होती है। प्रतिष्ठा में कार्यव्यवस्था कैसी होनी चाहिये और उसके व्यवस्थापकों को अपने कार्य में किस प्रकार तत्पर रहना चाहिये, यह जानने के लिये 'गोलनगरीयपार्श्वनाथप्रतिष्ठाप्रबन्ध' एक पठनीय निबन्ध है। कोई भी प्रतिष्ठाकर्ता साधु और श्रावकगण इसमें लिखे मुजब प्रतिष्ठाकार्य की व्यवस्था करेंगे तो उन्हें अपने

कार्य में कभी 'अपयश' नहीं मिलेगा।

अन्त में पाठकगण से निवेदन है कि वे इस पुस्तक को जिज्ञासावृत्ति से पढ़ें और इसमें लिखी हुई शिक्षाओं को अपने हृदय में स्थापित करें, निस्सन्देह इससे उनको अपने जीवन सुधार में मदद मिलेगी और ऐसा होने से ही इस पुस्तक के लेखक, प्रकाशक और सहायकों का परिश्रम भी सफल होगा। तथास्तु।

तखतगढ
ता० २५-५-३६
ज्येष्ठसुदि ५ स० १९९३

मुनि कल्याणविजय

श्रीजैनज्ञान-गुणसंग्रह का विषयानुक्रम

प्रथमखण्डे—

द्वितीयखण्डे—

शुद्धिपत्रक

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७	२०	जुने	जूने	१९८	८	मीनै	मीनै
१६	१०	किसौं	क्सिी	१९५	१२	द्दीन	हीन
१६	२२	पहने	पहनने	२११	०	३११	२११
३७	२२	सेज्ञ	सेज्ञ	२१९	१'	क्षिण	निम
३९	३	रीसोंसो	रासो	२३०	१३	वाजित	वाछित
६१	११	डागें	डालें	२३९	७	प्रति	प्राति
६८	२	ऊपरऊपर	ऊपर	२८९	१०	पचावन	चौपन
६०	२०	थार	वेर	२७७	८	णई	इण
७१	६	२२	३२	३०१	१	पायर	पायर
७४	९	गितनो	गिनती	३०६	११	रहा	इहा
०२	५	पसाद	पसाध	३ ७	१९	शुद्द	शुद्ध
९०	१८	का० का०	का०	३९९	१	क्रिमानजी	क्रिमन जी
१०८	२१	दूसरी	दूसरी	४०४	१३	घनकूट	फूट
११६	२१	ताउपत्र	ताडपत्र	४०१	११८	घाफूट	फूट
१२१	१०	सख्या	स०	४११	९।११	समितियों	समितियां
१५०	८	ऋपम	ऋपम	४६१	७	नवकारका	नवकार का[2]
१५७	३	वृपे	वृप	४ १	७	प्रस्तरलोगस्स[2]	प्र०लोगस्स[3]
१ ८	१२	घघेगा	घचेगा	४७१	६	पठ	पट
१८४	१०	दीध	दीघ	४७०	५	फरे'	फरे'
				४५	१७	पोपण	पोषध

—— ० ——

श्रीवर्धमान जैनविद्याभवन-जालोर

ऊपर की सस्था सवत् १९९२ (मारवाडी १९९१) के वैशाख शुदि ६ के दिन जालोर में स्थापित हुई और अच्छी उन्नति कर रही है। इस समय इसमें १०० जैन विद्यार्थी धार्मिक, महाजनी, हिन्दी और अंग्रेजी का अभ्यास कर रहे हैं।

कार्यवाहकों की लगन और श्री जैनसघ की मदद से आज तक यह सस्था ३००००) का चन्दा और बिल्डिंग के वास्ते ६०००० गज जमीन प्राप्त करने में समर्थ हुई है। चन्दा अभी चालू है, और पूर्ण आशा है कि सकल श्री जैनसघ इसमें योग्य सहायता देकर इसकी नींव मजबूत करेंगे, ताकि भविष्य में यह विशेष कार्य कर सके।

कम से कम २५०) रुपया मकानखाते में देनेवाले सज्जनों के नाम आरसपाषाण की तख्तियों पर खुदवा कर मकानों के द्वार पर लगवाये जाते हैं।

मोननफण्ड, स्थायीफण्ड, आदि किसी भी खाते में कम से कम ५००) रुपया देने वाले सद्गृहस्थ इस सस्था के 'कार्यवाहक-सभासद' बनाये जाते हैं और उनकी सलाहके अनुसार सस्था का कारोबार चलाया जाता है।

संस्था को २०००० या १०००० अथवा तो ५००० की सहायता देने वाले व्यक्ति अथवा श्रीसंघ इसके क्रमशः पहले, दूसरे और तीसरे वर्ग के पेट्रन बनाये जाते हैं।

पेट्रनों के बड़े फोटू संस्था अपने खर्च से बनवा कर मुख्य हॉल में स्थापित करेगी।

पेट्रनों, मेम्बरों और अन्य खास सहायकों की शुभनामावली उनकी दी हुई सहायता के उल्लेख और संवत् मिति के साथ शिलाओं पर खुदवा कर व शिलालेख हाल में लगवाये जायगे।

किसी भी प्रकार की फुटकर मदद देनेवाले भाइयों को संस्था के नाम की पक्की रसीदें दी जाती हैं।

विद्यार्थी भेजिये—

हमारी प्रार्थना केवल आर्थिक सहायता के लिये ही नहीं विद्यार्थी भेजने के सम्बन्ध में भी है।

जिन मा बापों को अपने पुत्रों को धार्मिक के साथ २ व्यावहारिक विद्या में प्रवीण बनाना हो वे उन्हें वर्धमान-जैन विद्याभवन में भर्ती करें। कम खर्च और कम समय में बच्चों को तैयार करनेवाली इसके सिवा दूसरी कोई संस्था नहीं है।

७ साल से १४ साल तक के बालक इसमें भर्ती हो सकते हैं।

१० वर्ष की उमर तक विद्यार्थियों को मासिक रु० ३) और इसके ऊपर की उमर में मासिक रु ४) भोजन खर्च के देने पडते हैं।

खर्च देने में असमर्थ विद्यार्थियों को मुफ्त भी लिया जाता है।

११ रुपया डीपाझीट और तीन साल की गेरटी ली जाती है। ३ साल पूरा करने पर डीपाझीट की रकम लौटा दी जाती है।

विशेप जानकारी के लिये पत्रव्यवहार नीचे के पते से करें।

शा० नवलमल मूलचन्द,
मे० सेक्रेटरी श्रीवर्धमान जैन विद्याभवन-जालोर(मारवाड)



जाहिर सूचना-

इस पुस्तक के उपरान्त नीचे की पुस्तकें भी हमारे शास्त्रसंग्रहमें मिलती हैं—

१-वीरनिर्वाणसंवत् और जैनकालगणना ।

इस पुस्तक की रायबहादुर म० म० प० श्रीगौरीशङ्करजी ओझा आदि धुरन्धर विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। इतिहास के अभ्यासियों और जैन पाठकों के लिये बड़े ही काम की चीज है। मूल्य १)

२-चारह चर्चामा सत्यांश केटलो ? ।

(देवद्रव्यचर्चाविषयक निबन्ध)

करीब १७ वर्ष ऊपर जैनसंघ में एक सैद्धान्तिक चर्चा चल पड़ी थी जो 'देवद्रव्यचर्चा' के नाम से प्रसिद्ध है। उसी चर्चा का स्फोट करने वाला मुनिमहाराजश्रीकल्याणविजयजी द्वारा लिखा गया यह विद्वत्तापूर्ण निबन्ध है। मूल्य =)

३-जिनस्तुतिकुसुमाञ्जलि ।

मुनिमहाराज श्रीकल्याणविजयजी विरचित संस्कृत-प्राकृत स्तुति-स्तोत्र-चैत्यवन्दनों का संग्रह है। मूल्य भेंट ।

१ ली पुस्तक मंगानेवालों को पिछली दोनों ही पुस्तकें भेंट भेजी जायगी ।

पता—सेक्रेटरी श्रीकविशास्त्रसंग्रह-समिति,
जालोर (मारवाड)

॥ श्रीजिनाय नम ॥

श्रीजैनज्ञान–गुणसंग्रह ।

प्रथम–खण्ड ।

नमन करी जिनदेव को, वदन करी गुरुराज ।
"जैन ज्ञान–गुण सग्रह" लिखू बाल हितकाज ॥ १ ॥
दर्शनविधि १ पूजाविधि २, गृहिद्वादशव्रतसार ३ ।
तपविधि ४ विविधविचार ५ इति, प्रथम खड अधिकार ॥२॥

१ देव–दर्शन विधि ।

सामान्य उपदेश—

प्रत्यक जैन श्रावक श्राविका का यह कर्तव्य है कि प्रति-दिन जैन मदिरमें जा कर देव दर्शन करें ।

देवदर्शन जाते वक्त सब से पहले बाह्य शुद्धि रखनी चाहिये। कारण कि बाह्य शुद्धि अतर शुद्धिमें निमित्त कारण है। इसी लिये मदिर-जाते यदि स्नान न बने तो हाथ पाव आदि

तो अवश्य धोने चाहिये। फिर उत्तम कपडे पहिन कर दर्शन करने को जाय। भक्ति-पवित्र भाव से एक एक कदम रखने वाला मनुष्य कितना फल प्राप्त करता है वह नीचे दिये हुए श्लोक में पढिये—

"यास्याम्यायतनं जिनस्य लभते ध्यायश्चतुर्थं फलं,
षष्ठं चोत्थित उद्यतोऽष्टममथो गन्तुं प्रवृत्तोऽध्वनि।
श्रद्धालुर्दशमं बहिर्जिनगृहात्प्राप्तस्ततो द्वादशं,
मध्ये पाक्षिकमीक्षिते जिनपतौ मासोपवासफलम्॥१॥

तात्पर्य—मंदिर में जाने का विचार करने पर १ उपवास का फल, दर्शन के लिये खडा होते २ उपवास का फल, चलने को तैयार हुआ कि ३ उपवास का फल, मन्दिर तर्फ चला हुआ कि ४ उपवास का फल, मंदिर के पास पहुचा कि ५ उपवास का फल, मंदिर में प्रवेश करते ६ उपवास का फल, मंदिर के मध्य भाग में जाते १५ उपवास का फल, और साक्षात् भगवान् को देखते तो १ मासखमण का फल होता है।

यहा ध्यान रहना चाहिये कि ऊपर मुजब फल तब ही होगा जब कि दर्शन करने वाला मन वचन और काया के अशुद्ध व्यापार को रोक कर मंदिर तर्फ पवित्र भावना से गमन करेगा।

श्रीमान् आनन्दघनजी महाराज श्री सुविधिनाथ भगवान् के स्तवन में फर्माते है—

"द्रव्य भाव शुचि भाव धरिने, हरखे देहरे जइये रे।
दहतिक पण अहिगम साचवतां, एकमना धुरि थइये रे १

मन्दिर जाते रास्ते में दूसरी ससार की झझटा में न पड़कर सीधा मंदिर पहुचना चाहिये। मंदिर में जाने के बाद सब जगह नजर डालते कहीं धूल कचरा या कोई भी अशुद्धि मालूम हो तो स्वय दूर करें या मंदिर के पूजारी को कह कर दूर करावे।

दर्शन करते भगवान के नजदीक न जाना मतके अवग्रह के बाहर दूर खडे रह कर प्रार्थना करें।

पुरुष भगवान् के दाहिनी (जीमणी) तर्फ और स्त्री बायी (डाबी) तर्फ खडे रहकर दर्शन करे। उस वक्त यह भी ध्यान रहना चाहिये कि कोई दूसरा दर्शन करता हो उसको हरकत न पहुचे वैसे खडे रहना चाहिये और कोइ आगे चैत्यवदन स्तवनादि बुलद आवाज से बोलता हो तो खुद अपने दिल में ही पढे, कारण कि ऐसा न करने से गाने वाले की एकाग्रता में भग पहुचने का सभव है।

मंदिर में जहा तक हो सके शांति रहनी चाहिये। न किसी से ससारिक बात चीत करे और न मुख से गाली गलोज बोले। दर्शन करने वाले कई एक महाशय मंदिर में हा हू मचा देते हैं। एक कहता है मैं पहले पूजा करूगा दूसरा कहता है मैं करूगा, पालिताणा जैसे तीर्थ स्थानो में मंदिर में

दर्शन करने वक्त और पूजा के वक्त इतनी भीड और हल्ला मच जाता है कि उसमें पता नहीं लगता कि कौन क्या कहता है, वहां उस समय शांति भी नहीं दखी जाती। जब शांति के स्थान में आत्मा को शांति न मिली तो अन्यत्र कहा मिलेगी। दुनिया की झझट को छोड कर घडी भर शांति प्राप्त करने को मंदिर में गया और वहा भी वही खटपट, तो कहिये वहा जाने म अपने आत्मा को क्या लाभ मिला। जिन मंदिर शांतिका स्थान है,वहा सब मनुष्य जा सकते है,किसी रईस या शेठ साहूकार के बगले पर जाने में प्रतिबंध और रोक टोक हो सकती है, मगर भगवान के स्थान पर ऐसा हिसाब नहीं है। राजा भर्तृहरि ने इस विषय पर क्या ही मनोरंजक श्लोक कहा है—

"नाथ ते समयो रहस्यमधुना निद्राति नाथो यदि,
स्थित्वा द्रक्ष्यसि कुप्यति प्रभुरिति द्वारेषु येषा वच ।
चेतस्तानपहाय याहि भवन देवस्य विश्वेशितु–
र्निर्दौवारिकनिर्दयोक्त्यपरुष निस्सीमशर्मप्रदम् ॥१॥"

तात्पर्य—'अरे अभी जाने का समय नहा है। वहा खानगी बातें हो रही है। शेठ निंदमें है। अगर तू देखेगा तो शेठ कोपायमान होंगे।' इस प्रकार के वचन जिनके दरवाजे पर सुने जाते है, अये दिल ! ऐसे स्थानो को छोड कर परमात्मा के उस सुखप्रद स्थान पर जा, जहा न द्वारपाल है,

न कठोर वचन सुनाई देते हैं, और न किसी प्रकार की हरकतें हैं।

कहने का तात्पर्य कि ऐसे शांति के स्थान मंदिर में शांति रखना इसी में दर्शन की सफलता है, यूरोपीयन लोगों के चर्च (दवल) में देखो कैसी शांति होती है? सिर्फ एकही पादरी प्रार्थना बोलता है और दूसरे लोग खामोश रहकर सुनते हैं। जरा भी गडबड नहीं होने पाती। इस प्रकार की शांति जिनमंदिर में रखनी चाहिये जिससे दर्शन का यथार्थ लाभ प्राप्त हो।

मंदिर जाने वालों को ८४ आशातना भी टालनी चाहिये जिनके नाम नीचे गुजरे हैं—

८४ आशातना

१ मंदिर में थूकना।
२ जुआ शतरंज पत्ते आदिसे खेलना।
३ टंटा फिसाद करना।
४ धनुर्विद्या सीखना (धनुष बाण चलाना)।
५ जल से कुरले करना।
६ पान खाना।
७ पान खाकर थूकना।
८ गाली गलोज देना।
९ टट्टी या पैसाब करना।
१० हाथ पात्र आदि धोना।

११ मस्तक के केश समारना।
१२ नख समारना।
१३ सूत का गिरना।
१४ सुखडी (मिठाइ) आदि खाना।
१५ फोडे आदिकी चमडी उखेड कर गिराना।
१६ दवाइ खाकर पित्त गिराना।
१७ उल्टी करना।
१८ मुखमें से हिलता दात गिराना।
१९ हाथ पाव के मालिश कराना।
२० घोडा ऊट आदि बांधना।
२१ दातों का मैल गिराना।
२२ आख का मैल गिराना।
२३ नख का मैल निकालना।
२४ गाल का मैल उतारना।
२५ नाक का मैल निकालना।
२६ मस्तक का मैल गिराना।
२७ शरीर का मैल उतारना।
२८ कान का मैल निकालना।
२९ भूत जक्ष आदिकी साधना करना।
३० विवाह शादी की पचायत करना।
३१ व्यापार का लेखा हिसाब करना।

३२ गन संबंधी श्रम करना अपने भाई विगेरह की माल मिल्कत बांटने की व्यवस्था करना।

३३ घर की मिल्कत मंदिरमें रखना।

३४ पाव पर पांव चढ़ाकर बैठना।

३५ मन्दिर की दिवार पर गोबर थपाना या टट्टर लगाना।

३६ कपड़े सुखाना।

३७ दाल दलना।

३८ पापड़ विगेरह सुखाना।

३९ बड़ीयां बनाना कर आदि सुखाना।

४० पोलिस आदि के भय से मन्दिरमें छिप जाना।

४१ पुत्र स्त्री आदि के निमित्त रोना।

४२ राजकथा देशकथा भक्तकथा स्त्रीकथा करना।

४३ घाट घनुष तलवार आदि शस्त्र तय्यार करना।

४४ गाय भैंस आदि बांधना।

४५ टटके मार सीगड़ी लगा कर तापना।

४६ अनाज पकाना।

४७ नाणे परखना।

४८ निधि से निस्सिही न कहना।

४९ छाता (छत्री) धारण करना।

५० जूते बूट या स्लीपर पहनना।

५१ क्रोध करना।

५२ चामर ढलाना।
५३ मन को एकाग्र न करना।
५४ शरीर पर अत्तर सेंट आदि लगाना।
५५ शरीर के सचित्त पुष्पमालादिका त्याग न करना।
५६ हार कुंडल अंगूठी विगेरह जेवर उतारना।
५७ भगवान को देख कर हाथ न जोडना।
५८ उत्तरासन न रखना।
५९ मस्तक पर मुकुट रखना।
६० मस्तकको रुमाल आदि से लपेटना
६१ फूल का गजरा पास में रखना।
६२ श्रीफल आदिका छिलका डालना।
६३ दडे से खेलना।
६४ पिता आदिको प्रणाम करना।
६५ भांड भवाये की चेष्टा करना।
६६ तुकारा वचन बोलना।
६७ लेहणे के लिये पिकेटिंग-धरना देना।
६८ युद्ध करना।
६९ मस्तक के बाल सुखाना।
७० पलथी लगाकर बैठना।
७१ खडाउ पांव में रखना।
७२ पांव लंबे कर बैठना।

७३ पगरखी रखना।
७४ द्वार पर कीचड़ करना।
७५ पाँव के लगी हुई धूल झाड़ना।
७६ मैथुन सेवन करना।
७७ जूँ निकालना।
७८ भोजन करना।
७९ शरीर के गुप्त भाग ढाँक कर न बैठना।
८० वैद्य का धंधा करना।
८१ खरीदने और बेचने का काम करना।
८२ बिस्तरा बिछाकर सोना।
८३ जल पीने की मटकी रखना।
८४ स्नान करने के वास्ते स्थान बनाना।

ये चोरासी आशातना उत्कृष्ट कही जाती हैं और मध्यम आशातना ४० तथा जघन्य आशातना १० हैं जिन के क्रम वार नाम नीचे मुजब हैं—

४० मध्यम आशातना

१ पेशाब करना।
२ जंगल जाना।
३ जूते पहनना।
४ जल पीना।
५ भोजन करना।
६ सोना।

७ मैथुन क्रीडा करना ।
८ पान खाना ।
९ थूकना ।
१० जुगार खेलना ।
११ जुगार देखना ।
१२ विकथा करना ।
१३ पलथी लगा कर बैठना ।
१४ पाव अलग अलग लंबे करना ।
१५ टंटा फिसाद करना ।
१६ हासी ठठ्ठे करना ।
१७ किसी पर इर्षा करना ।
१८ ऊंचे आसन पर बैठना ।
१९ शरीर का शणगार बनाना ।
२० मस्तक पर छाता रखना ।
२१ तलवार बंदूक आदि शस्त्र रखना ।
२२ मुकुट मस्तक में रखना ।
२३ चामर ढलवाना ।
२४ स्त्रियों के साथ मजाक करना ।
२५ धरणा लगाना ।
२६ खेल करना ।
२७ मुख कोश विना पूजा करना ।

२८ मलिन कपडों से पूजा करना ।
२९ पूजा करते मनको स्थिर न रखना ।
३० शरीर पर सचित्त पुष्पमालादि पहन कर जाना ।
३१ गहने उतार कर जाना ।
३२ उत्तरासण न रखना ।
३३ भगवान् को देख कर नमस्कार न करना ।
३४ शक्ति होने पर भी पूजा न करना ।
३५ खराब फलों से पूजा करना ।
३६ पूजा में आदर भाव न रखना ।
३७ प्रतिमा के निंदक को न डाटना ।
३८ मंदिर के द्रव्य की हिफाजत न रखना ।
३९ शक्ति होने पर भी सवारी पर चढ कर जाना ।
४० बडे पुरुषका अपमान करना ।

१० जघन्य आशातना

१ मंदिरमे पान सुपारी खाना ।
२ जल पीना ।
३ भोजन करना ।
४ जूते पहिनना ।
५ स्त्री क्रीडा करना ।
६ सोना ।
७ थूकना ।
८ पेसाब करना ।

९ टट्टी जाना ।
१० जुगार चोपट पत्ते खेलना

ऊपर लिखी हुइ आशातना टालने में विनय धर्म प्रकट होता है और भक्ति भी विशुद्ध मानी जाती है। दरबार की इजलाश में या कोर्ट कचहरियोंमें जाना पडता है तो वहाभी कितना अदब (विनय) रखना पडता है ? । कपडे अच्छे पहनते है, विचार कर बोलते है, गाली गलोच मुख से नहीं निकालते, हर तरह से सोच विचार कर चलते है तो भगवान् तो तीन जगत् के स्वामी है, इन का अदब करें उतनाही थोडा है। भगवान् वीतराग है, इन को किसी प्रकारकी दरकार नहीं है, मगर भक्ति करने वाले का फर्ज है कि पूज्य पुरुष के प्रति अपना अंत करण से बहुमान दिखलावे और किसी प्रकार की आशातना न करें ।

---

७ जिनपूजाविधि ।

सामान्य उपदेश ।

तीर्थंकर देव की पूजा करना यह भी हर एक जैन श्रावक का खास कर्तव्य है। शास्त्रकारों ने श्रावकों के जो षट्कर्म बतलाये हैं उनमें जिनपूजा को प्रथम नम्बर में रक्खा है, कारण कि एकनिष्ठा से की गई यह जिनपूजा समकितकी शुद्धि करने के साथ मोक्ष तक के उत्तम फल देने वाली है। कहा भी है—

"जो पूएइ तिसञ्झं, जिणिंदराय तहा विगयदोसं।
सो तइयभवे सिज्झइ, अहवा सत्तट्ठमे जम्मे ॥ १ ॥

इसका तात्पर्य यह है—"जो मनुष्य शुद्ध अंतःकरण से जिनेश्वर देवकी त्रिकाल (सुबह–दोपहर–शाम को) पूजा करता है वह तीसरे भव में या सातवे आठवे भव में मोक्षसुख को प्राप्त करता है।" देखिये कैसा उत्तम फल दिखलाया है? मोक्षाभिलाषी गृहस्थ के लिये पूजाभक्ति सच मुचही मोक्ष का साधन है।

मूर्ति पूजा की जरूरत—

इस साधन के द्वारा देवाधिदेव तीर्थंकरों की भक्ति करनी चाहिये। क्यों कि वे हमारे महान् उपकारी हैं। उन्होंने अपनी वाणी द्वारा तत्त्वज्ञान और मोक्ष का मार्ग बता कर हम पर बडा भारी उपकार किया है। इस उपकार को न भूलना इसी का नाम कृतज्ञता है। यह कृतज्ञता तब ही मानी जायगी जब कि हम भगवान् की पवित्र हृदय से भक्ति करेंगे।

परंतु यहा पर एक सवाल उठता है, भगवान् यहा साक्षात् नहीं है, फिर हम किसकी भक्ति करें? इसका जवाब यही है कि भगवान् की गैरहाजरी में उनकी मूर्ति ही हमारे लिये भगवान् है। जिनविरह में जिनमूर्ति ही जीवों के लिये पूर्ण आलंबन है। उसमें भगवान् का आरोप कर उसके सामने जो कुछ भक्तिभाव किया जायगा उससे जिन भक्ति का

ही फल-लाभ होगा। क्रिश्चियन प्रजा मूर्ति पूजा को नहीं मानती फिरभी वह चर्च में (गिरिजाघर में) जेसस् क्राइष्ट की मूर्ति रखती है। मुसल्मान मूर्ति पूजा के कट्टर विरोधी हैं फिर भी वे मक्का की तरफ वह करके निमाज पढ़ते हैं जो कि एक तरह से मूर्ति पूजा का ही स्वीकार है। चीन जापान मालोन आदि में बौद्ध लोग बुद्ध देव को पूजते हैं और भारत वर्ष में हिंदू लोग विष्णु शंकर आदि को। अतः व्यापदृष्टि से देखा तो जमाने हाल में मूर्तिपूजा एक व्यापक धार्मिक मार्ग है। किसी भी व्यक्ति के आध्यात्मिक गुण-दोषों की परीक्षा के लिये उसकी मूर्ति ही आदर्श भूत साधन है। तीर्थंकर देव अन्य देवों से श्रेष्ठ थे यह बात भी हम उनकी मूर्ति से ही जान सकते हैं। तीर्थंकरकी मूर्ति में जो शान्ति, क्षमा, वीतरागता आदि गुण झलकते हैं वे अन्य मूर्तियों में नहीं पाये जाते। इस विषय में पंडित धनपालका नीचे लिखा श्लोक पढ़ने लायक है—

> "प्रशमरसनिमग्नं दृष्टियुग्मं प्रसन्नं,
> वदनकमलमङ्कः कामिनीसङ्गशून्यः।
>
> करयुगमपि यत्ते शस्त्रसम्बन्धवन्ध्यं,
> तदसि जगति देवो वीतरागस्त्वमेव ॥१॥"

भावार्थ—"हे प्रभो! तेरे दोनों नेत्र शांतरस से भरे हुए हैं, तेरा मुखकमल प्रसन्न है, तेरा अङ्कस्थान (गोद) स्त्री

राग से रहित है और तेरे दोनों हाथ शस्त्ररहित हैं इस लिये तू ही सत्य वीतराग देव है।" हरिभद्र सूरि का भी एक श्लोक यहां याद आ जाता है—

"मूर्तिरेव तवाचष्टे, भगवन् ! वीतरागताम् ।
नहि कोटरसंस्थेऽग्नौ, तरुर्भवति शाड्वलः ॥१॥"

"हे भगवन् ! आपकी मूर्ति ही वीतरागदशा को बता रही है। यदि आपमें राग-द्वेषादि दोष होते तो आपकी यह मूर्ति ऐसी शान्त कभी नहीं होती, क्यों कि मूल में अग्नि के रहते वृक्ष कभी हरा नहीं होता।"

ज्यादा क्या कहें, जैसी मूर्ति होती है वैसा ही प्रभाव देखने वालों पर पड़ता है। कोट पटलून बूट स्टोकिंग पहने हुए एक जेंटलमेन् का फोटो देखने पर शौकिनी का भाव पैदा होता है और ध्यान समाधि में बैठे हुए एक त्यागी महात्मा की तसवीर देख कर वैराग्य भाव पैदा होता है। इसी तरह सर्वथा राग-द्वेष रहित तीर्थंकर भगवान् की शांत मूर्ति देखकर हमें वैराग्यभाव पैदा हो इसमें आश्चर्य ही क्या है ?। इसी लिये कहा जाता है कि—

"वीतराग स्मरन् योगी, वीतरागत्वमश्नुते ।"

"योगी पुरुष वीतराग का स्मरण करते हुए वीतराग दशा को प्राप्त होते हैं।"

इस प्रकार [illegible] शुभभाव वाली सिद्ध हुई तो इसके

द्वारा तीर्थंकर भगवान् की पूजा भक्ति करना भी स्वत सिद्ध होता है और इससे गृहस्थ धर्म में 'पूजा' विषय कितना जरूरी है यह अच्छी तरह सिद्ध हो चुका ।

प्राथमिक कार्य—

प्रात काल में उठकर प्रथम पचपरमेष्ठी मत्र को (नवकार को गिने और सामायिक का नियम हो अगर मात्र हो तो वह भी कर लेवे, बाद जरूरी कामों से निवृत्त होकर जहा जीव-जतु न हो ऐसी शुद्ध जमीन पर बैठ कर गरम जलसे या छाने हुए जल से स्नान करे, (यहा ध्यान रहना चाहिये कि अगर किसी के शरीरके किसी भाग में कुछ भी जखम हो और उसमें से खून या पीप निकलता हो तो पूजा नहीं हो-सकती) स्नान करते वक्त अगर नवकारसी का पच्चखाण आ गया हो तो दातून भी कर सकते हैं । स्नान करने के बाद रूमाल या दुशाल से अपने शरीर को अच्छी तरह पोंछ लेवे फिर अच्छी सफेद धोती जो फटी न हो सधावाली न हो जिससे पेसाब या टट्टी न गया हो बिलकुल अखड हो पहिन लेवे । उत्तरासन भी ऐसाही सफेद अखड बायीं तर्फ से तिरछा जनोइ की तरह धारण कर ले । पूजा षोडशक ग्रंथ के अभिप्राय से पूजा के लिये रेशमीन कपडा भी चल सकता है । परतु वह रेशमीन कपडा भी सिवाय पूजा के और किसी काम में नहीं पहिनना चाहिये, तथा इन पूजा के कपडों से हाथ नाक या मुख न पोंछना चाहिये, दूसरे पहने के कपडा के शामिल भी

न रक्खे।

इस तरह जब पवित्र कपडे पहिन कर ठीक ठाक होजावे तब पूजा का सामान तय्यार करें।

शास्त्र में द्रव्य और भाव भेद से दो प्रकार की पूजा बताई है। द्रव्य पूजा ८ द्रव्य से की जाती है, अष्टद्रव्य के नाम ये हैं—

१ जल, २ चंदन, ३ पुष्प, ४ धूप, ५ दीप, ६ अक्षत (चावल), ७ नैवेद्य, ८ फल। इन आठ द्रव्यों को लेकर घर से जिनमंदिर की तर्फ चले, रास्ते में नीचे दिये हुए दोहे दिल में याद करता रहे।

पूजाभावना के दोहे।

प्रभुपूजन कुं मैं चला, घसि चंदन घनसार। नव अंगे पूजा करी, सफल करू अवतार ॥१॥ पांच कोडी के फूल से, पाया देश अठार। कुमारपाल राजा हुआ, वरता जय जयकार ॥२॥ तीर्थंकर को पूजते, उत्कृष्ट परिणाम। पाया है कइ जीवने, स्वर्ग मोक्ष के धाम ॥३॥ समकित को अजुआलवा, उत्तम यही उपाय। पूजा से तुम जाणजो, मन वंछित सुख भाय ॥४॥ पूजा कुगति की अर्गला, पुण्य सरोवर पाल। मोक्षगति की प्रियसखी, देवे मंगलमाल ॥५॥ जिन दर्शन पूजा विना, दिन जितने ही जाय। निष्फल वे सब जाणजो, अरु जन्म अकारथ जाय ॥६॥

जिनमदिरमें प्रवेश और द्रव्यपूजा ।

इस तरह की भावना के साथ ५ (१)अभिगम (सन्मुख जाने के ५ नियम) और १० (२)त्रिक का पालन करता हुआ जिनमदिरमें प्रवेश करे। प्रवेश करते वक्त 'निसीही' बोल

---

(१) पाच अभिगम-१ सचित्त वस्तुका त्याग (पास में फल फूल माला विगैरह हो तो छोड देना)

२ अचित्त वस्तुका अत्याग-अर्थात् पास में रहे हुए आभूषणादि को न छोडना।

३ खेस का उत्तरासन रखना

४ जिनप्रतिमा पर दृष्टि पडते ही दूरसे नमस्कार करना।

५ अपने मनको एकाग्र करना।

(२)-१० त्रिक के नाम-अवग्रहत्रिक, आलंबनत्रिक, प्रदक्षिणात्रिक, क्षमाश्रमणत्रिक, प्रणिधानत्रिक, निस्सिहीत्रिक, अवस्थात्रिक, मुद्रात्रिक, दिशात्रिक भूप्रमार्जनत्रिक।

दशत्रिक का तात्पर्य है-अलग अलग तीन तीन बातों के दश नियम, जिन का क्रमवार वर्णन इस मुजब है।

१ अवग्रहत्रिक-अवग्रह भगवान के नजदीक के उस भूमि भागको कहते हे जिसको छोड कर चैत्यवदन आदि करने के लिये बैठते हैं। यह अवग्रह उत्कृष्ट ६० हाथ मध्यम ९ हाथ और जघन्य ३ हाथ का होता है, अर्थात् भगवानसे इतना दूर बैठना चाहिये।

२ आलंबनत्रिक-१ वर्णालंबन २ अर्थालंबन ३ प्रतिमालंबन। शुद्ध पद बोलने को वर्णालंबन कहते हैं, पदके अर्थ विचार को अर्थालंबन कहते हैं और प्रतिमा के सामने दृष्टि रखना इसे प्रतिमालंबन कहते हैं।

कर भीतर जावे और तीन वार प्रदक्षिणा देवे। पहेले अपने

---

३ प्रदक्षिणात्रिक-मंदिर की भमती में ३ वार परिक्रमा करना इसे प्रदक्षिणात्रिक कहते हैं।

४ क्षमाश्रमणत्रिक-भगवान् को तीन वार खमासमण देना।

५ प्रणिधानत्रिक-दोनों जावंति और जयवीयराय का पाठ बोलना यह प्रणिधानत्रिक कहा जाता है।

६ निस्सीहीत्रिक-गृहव्यापारादि निषेध सूचक तीनवार 'निस्सीही' शब्द बोलना।

७ अवस्थात्रिक-भगवान् की छद्मस्थ अवस्था, केवली अवस्था, और सिद्ध अवस्था ये तीनों अवस्था विचारना इसको अवस्थात्रिक कहते हैं।

८ मुद्रात्रिक-१ योगमुद्रा २ जिनमुद्रा ३ मुक्ताशुक्ति मुद्रा।

दोनों हाथ की १० अंगुलियां परस्पर मिलाकर कमल के डोडे की शकल में दोनो हाथ जोड पेट पर कुणी रख कर चैत्यवंदन करना यह 'योगमुद्रा' कही जाती है।

दोनों पांव के अंगुठों के बीच ४ अंगुली का अन्तर और दोनों एडी के बीच ३ अंगुलीका अन्तर रखकर खडे खडे काउस्सग्ग करना यह 'जिनमुद्रा' कही जाती है।

दोनों हाथ बराबर पक्त्र कर ललाट के लगाकर जयवीयराय का पाठ बोलना यह 'मुक्ताशुक्तिमुद्रा' कही जाती है।

९ दिशात्रिक-आसपास की दो दिशायें तथा पिछली दिशा इन तीन दिशाओं से दृष्टिको हटाकर भगवान् के सामने देखना इसका नाम दिशात्रिक है।

१० भूप्रमार्जनत्रिक-चैत्यवंदन करते तीन वक्त खेस से भूमि पोंछना इस का नाम भूप्रमार्जनत्रिक है।

ललाट में तिलक न किया हो तो तिलक करे फिर आठ पडका मुखकोश बांध कर दूसरी बार 'निसीही' कह कर गूढ मंडप में जा घुटने टेक कर तीनवार नमस्कार करे, फिर मूल गभारे में जावे, प्रथम मूलनायक भगवान् पर अगले दिन के चढे हुए पुष्पादि निर्माल्य मोरपीछ से प्रमार्जन करे, इसी तरह आसपास के बिंबो पर प्रमार्जन करे। बादमें पंचामृत से (दही दूध घी शक्कर और जल से) प्रक्षालन (पखाल) करने

१ यहांपर ललाट के सिवाय अपने शरीर के दूसरे अंग-उपांग-मस्तक-कान-गला-हाथ आदि पर कितनेक लोग केशर का तिलक करते हैं लेकिन् यह सिर्फ देखादेखी की रूढि है, पूजा की विधि में ऐसा लेख नहीं है पूजा करने वालों को चाहिये के ऐसी रूढि पर ध्यान न देकर मूल बात पर खयाल रक्खे।

ललाटमें जो केशर का तिलक किया जाता है उसके लिये केशर साधारण खाते का होना चाहिये, मंदिर का उपयोग में नहीं आ सकता। मंदिर खाते का केशर सिर्फ भगवान् की पूजा में ही काम आता है। कितनीक जगह देखा जाता है कि जो मंदिर खाते का केशर घीस कर भगवान् की पूजा के लिये तय्यार किया जाता है, उसीसे अपने ललाट में भी तिलक करते हैं, परंतु उस में देवद्रव्य का दोष लगता है। हां अगर पूजा करने वाले महाशय अपने घर का ही केशर पूजा के वास्ते ले जावे तो वह केशर अपने तिलक में और पूजा में दोनों जगह काम आ सकता है, वहां देवद्रव्य का दोष नहीं लगता। तिलक के लिये केशर दूसरी वाटकी में ले लेना चाहिये।

के बाद शुद्ध जलसे अभिषेक करे उस वक्त दिल में जन्माभिषेक की भावना करे।

जलाभिषेक में भावना और जयणा—

बालत्तणम्मि सामिय, सुमेरुसिहरंमि कणयकलसेहिं।
तियसासुरेहिं ण्हविओ, ते धन्ना जेहि दिट्ठो सि ॥१॥

"हे प्रभो! बचपन में मेरुशिखर पर ६४ इन्द्रोंने सुवर्ण कलशोंसे आप का अभिषेक किया उस समय जिन्होंने आपका दर्शन किया वे धन्य हैं।" इस भावना से प्रक्षालन करे, यहा ध्यान रहना चाहिये कि भगवान् के शरीर पर कहीं केशर चिपक गया हो तो धीमे हाथ से या अंगलूणे से साफ करे वालाकुंची को अधिक न घिसे, कारण के उससे मूर्ति पर सदा घसारा लगने से किसी समय मूर्ति के खड्डे होने का संभव है, हां अगर किसी जगह हाथ या कपडे से भी केशर रह जाता हो तो उस जगह अवश्य वालाकुंचीका उपयोग कर सकते हैं। आज कल कई जगह देखा गया है कि मंदिर के भाड़ुती पूजारी पूजाविधिका पूरा रहस्य न समझने से वालाकुंची से भगवान पर टूट पडते हैं, जल छिडक कर खूब घिसने लग जाते हैं, कई जगह श्रावक लोग भी जानकारी न होनेसे इसी तरह वालाकुंची का उपयोग करते हैं यह सब अविवेक है। पूजा करने वालों को चाहिये कि ऊपर लिखे मुताबिक जहा जरूरत हो वहीं वालाकुंची का उपयोग करें, संक्षेप में कहना यही है कि बडी जयणा के साथ जल से भगवान् का प्रक्षा-

ललाट में तिलक न किया हो तो तिलक करे फिर आठ पडका मुखकोश बाध कर दूसरी बार 'निसीही' कह कर गू मडप में जा घुटने टक कर तीनवार नमस्कार करे, फिर मूल गभारे में जावे, प्रथम मूलनायक भगवान् पर अगले नि के चढे हुए पुष्पादि निर्माल्य मोरपीछ से प्रमार्जन करे, इसी तरह आसपास के जिनों पर प्रमार्जन कर । बादमें पचामृत से (दही दूध घी शक्कर और जल से) प्रक्षालन (पखाल) करने

---

१ यहापर ललाट के सिवाय अपने शरीर के दूसरे अग-उपाग-मस्तक-कान-गला-हाथ आदि पर कितनेक लोग केशर का तिलक करते हैं लेकिन यह सिर्फ देखादेखी की रूढि है, पूजा की विधि में ऐसा लेख नहीं है, पूजा करने वालों को चाहिये के ऐसी रूढि पर ध्यान न देकर मूल बात पर ख्याल रक्खें ।

ललाटमें जो केशर का तिलक किया जाता है उसके लिये केशर साधारण खाते का होना चाहिये, मदिर का उपयोग में नहीं आ सकता । मदिर खाते का केशर सिर्फ भगवान् की पूजा में ही काम आता है । कितनीक जगह देखा जाता है कि जो मदिर खाते का केशर घीस कर भगवान् की पूजा के लिये तय्यार किया जाता है, उसीसे अपने ललाट में भी तिलक करते हैं, परतु उस में देवद्रव्य का दोष लगता है । हा अगर पूजा करने वाले महाशय अपने घर का ही केशर पूजा के वास्ते ले जावे तो वह केशर अपने तिलक में और पूजा में दोनों जगह काम आ सकता है, यहा देवद्रव्य का दोष नहीं लगता । तिलक के लिये केशर दूसरी वाटकी में ले लेना चाहिये ।

के बाद शुद्ध जलसे अभिषेक करे उस वक्त दिल में जन्माभिषेक की भावना करे।

जन्माभिषेक में भावना और जयणा—

बालत्तणम्मि सामिय, सुमेरुसिहरम्मि कणयकलसेहिं।
तियसासुरेहिं ण्हविओ, ते धन्ना जेहिं दिट्ठो सि ॥१॥

"हे प्रभो! बचपन में मेरुशिखर पर ६४ इन्द्रोंने सुवर्ण कलशोंसे आप का अभिषेक किया उस समय जिन्होंने आपका दर्शन किया वे धन्य हैं।" इस भावना से प्रक्षालन कर, यहां ध्यान रहना चाहिये कि भगवान् के शरीर पर कहीं केशर चिपक गया हो तो धीमे हाथ से या अगलूणे से साफ करे वालाकुंची को अधिक न घिसे, कारण के उससे मूर्ति पर सदा घमारा लगने से किसी समय मूर्ति के खड्डे होने का सभव है, हा अगर किसी जगह हाथ या कपड से भी केशर रह जाता हो तो उस जगह अवश्य वालाकुंचीका उपयोग कर सकते हैं। आज कल कई जगह देखा गया है कि मंदिर के भाड़ुती पूजारी पूजाविधिका पूरा रहस्य न समझने से वालाकुंची से भगवान पर टूट पडते हैं, जल छिडक कर खूब घिसने लग जाते हैं, कई जगह श्रावक लोग भी जानकारी न होने से इसी तरह वालाकुंची का उपयोग करते हैं यह सब अविवेक है। पूजा करने वालों को चाहिये कि ऊपर लिखे मुताबिक जहा जरूरत हो वहीं वालाकुंची का उपयोग करें, संक्षेप में कहना यही है कि बडी जयणा के साथ जल से भगवान् का प्रक्षा-

लन करे। इस के बाद स्वच्छ अगलूणां से यथाक्रम सब मूर्तियों को पोंछ कर स्वच्छ कर लेवे। पीछे केशर चंदन से पहले मूलनायक की, बाद दूसरे भगवान की नव अंगे पूजा करे। पूजा करते समय नीचे मुजब भावना के साथ एक एक दुहा बोलता जावे।

पूजा के दोहे—

जल भरी संपुट पत्रमां, युगलिक नर पूजंत।
ऋषभ चरण अंगुठडो, दायक भवजल अंत॥ १॥

इस तरह बोल कर भगवान् के दाहिने और बाये अंगूठे पूजा करे।

जानुबले काउस्सग्ग रह्या, विचर्या देश विदेश।
खडा खडा केवल लह्यु, पूजो जानु नरेश॥ २॥

ऐसा बोल दोनों घुटनों की (गोडों की) पूजा करे।

लोकांतिक वचने करी, वरस्या वरसीदान।
कर कांडे प्रभु पूजना, पूजो भवि बहुमान॥ ३॥

दोनों हाथों की पूजा करे।

मान गयु दोय अंसथी, देखी वीर्य अनंत।
भुजा बले भव जल तर्या, पूजो खंध महंत॥ ४॥

दोनों खंधो की पूजा करे।

सिद्धशिला गुण ऊजली, लोकांते भगवंत।
वसिया तिण कारण भवि, शिरशिखा पूजंत॥ ५॥

मस्तक पर पूजा करे।

तीर्थंकर पद पुण्य थी, त्रिभुवन जन सेवत ।
त्रिभुवन तिलक समा प्रभु, भाल तिलक जयवंत ॥ ६ ॥
ललाट में पूजा करे ।

सोल पहर प्रभुदेशना, कंठ विवर वर्तुल ।
मधुर ध्वनि सुर नर सुणे, तेणे गले तिलक अमूल ॥७॥
कंठ भाग में पूजा करे ।

हृदय कमल उपशम बले, बाल्या रागने रोष ।
हिम दहे वन खंडने, हृदय तिलक संतोष ॥ ८ ॥
हृदय भाग में पूजा करे ।

रत्नत्रयी गुण ऊजली, सकल सुगुण विश्राम ।
नाभिकमलनी पूजना, करता अविचल धाम ॥ ९ ॥
नाभिस्थान मे पूजा करे ।

इस तरह मूलनायक की नव अंगे पूजा करने के बाद आस पास के बिंबोंकी तथा इनसे और अधिक बिंब हों तो उनकी भी पीछे (उतावल न हो तो) पूजा कर लेवे ।

पूजा में मूलनायक की मुख्यता—

यहां पर शंका पैदा हो सकती है कि पहिले मूलनायक की पूजा और पीछे आसपास की पूजा करने पर स्वामी सेवक भाव (छोटे बडे का हिसाब) हो जाता है, एक तीर्थंकर की विशेष पूजा करना और दूसरों की साधारण, यह भेद तीर्थंकरो में क्यों होना चाहिये ? । इसका समाधान यह है कि बेशक तीर्थंकर भगवान् सब समान हैं, उनमें स्वामी सेवक

भाव नहीं हो सकता,तो भी यह व्यवहार है कि जिस बिंबकी पहले स्थापना की गई हो वह मुख्य बिंब है इस लिये उसका पूजन पहले किया जाता है। ऐसा करने पर शेष तीर्थंकरों के नायकभाव में कमी नहीं होती। सघाचार भाष्य में भी मूलनायक की पूजा विशेष प्रकार से करने के लिये कहा है—

"उचिअत्त पूआए, विसेसकरण तु मूलबिंबस्स।
ज पडइ तत्थ पढम, जणस्स दिट्ठी सह मणेण ॥१॥"

अर्थात्—"उचित रीति से सर्व बिंबों की पूजा करनी चाहिये परतु खास कर मूल बिंबकी, क्यों कि अदर जाते ही लोगों की दृष्टि और मन पहले उसी पर (मूल नायक पर) ठहरते है।'

पुष्पपूजा में विवेक—

केशर चदन से पूजा कर चुकने पर भगवान को पुष्प चढाये जाते है। पुष्प गुलाब, चपेली, जाई, जुइ, मरुआ, मोगरा आदि के सुगधी होने चाहिये। देखिये इस विषय में जिन हर्षसूरि अपने 'विंशतिस्थानकविचारामृतसग्रह' ग्रथ में क्या फरमाते हैं—

"न शुष्कैः पूजयेद्देव, कुसुमैर्न महीगतैः।
न विशीर्णदलैः स्पृष्टै-र्नाशुभैर्नाऽविकाशिभिः ॥१॥
कीटकेनापविद्धानि, शीर्णपर्युषितानि च।
वर्जयेदूर्णनाभेन, वासित यदशोभनम् ॥२॥
पूतिगन्धीन्यगन्धीनि, आम्लगन्धीनि वर्जयेत्।

मलमूत्रादिनिर्माणा–दुत्सृष्टानि कृतानि च ॥३॥
ग्रथिमादिचतुर्भेदैः, पुष्पैः सद्यस्कसौरभैः।
निजान्यहृदयानन्द–दायिनीं कुरुतेऽर्चनाम् ॥४॥

तात्पर्य—"जो सूखे हों, जमीन पर गिरे हुए हों, जिन की पखडिया खडित हो, खराब चीज क स्पर्शवाले हों, पूरे तौर से न खिले हों, कीडों से काटे हुए हों, छिन्ने हुए हों, बासी हों, जिन पर मक्डी का जाला लगा हो, खराब वास वाले हों, सुगध रहित हो, खट्टी वास वाले हो, मलमूत्र करते समय पास रहने से छोड दिये गये हों ऐसे फूलों से देव की पूजा न करे। इनके विपरीत १ ग्रथिम (गुथे हुए माला आदि) २ वेष्टिम (किसी आकार में वीट हुए) ३ पूरिम (नकसी के रूप में बने हुए), ४ सघातिम (ढगले के रूप में बने हुए) इन चार प्रकार में से किसी भी प्रकार के ताजे और खुशबूदार फूलों से पूजा करे। ये फूल सूर्य उदय होने के पहले नहीं लाने चाहिये। अधेरे में जीवजतु का उपयोग नहीं रहता। लाये हुए फूलों को सुइ से छेदना नहीं चाहिये, और उनकी पाखडिया नहीं तोडना चाहिये। वे ज्यों के त्यों अखड ही चढाने चाहिये जिससे जयणा धर्म का पालन होता रहे।

अङ्ग-अग्रपूजा विषयक भावना—

इस तरह–जयणा और विवेकपूर्वक लाये हुए फूलों से पूजा कर इस मुजब भावना करे—

"हे प्रभो ! ये उत्तम सुगंधी फूल जैसे सुगन्ध से भरे हुए हैं वैसेही मेरे विचार समकित रूप सुगन्ध से भरपूर हो"

यहा पर ध्यान रहना चाहिये कि जल चंदन पुष्प और अगी विगेरह की पूजा को अगपूजा कहते हैं, कारण कि उक्त जलादि पदार्थ भगवान् के शरीर पर चढाये जाते हैं।

धूप दीप अक्षत नैवेद्य और फल पूजा अग्रपूजा कही जाती है।

इस अग्रपूजा मे प्रथम धूप अगरबत्ती या दशाग धूप का कर, उस वक्त मन में भावना करे—

"हे प्रभो ! इस धूपको अग्नि में डालने से जल कर इसका धूआ ऊर्ध्व गमन करता है इसी तरह मेरी आत्मा के साथ लगे हुए कर्म जल कर मेरी आत्मा ऊर्ध्व गमन करो। अर्थात् मोक्षगति को प्राप्त हो"

धूप करने के बाद पवित्र घीका दीपक करे उस वक्त यह भावना होनी चाहिये—

"हे त्रिलोकीनाथ ! यह दीपक जैसे अधकार को दूर कर प्रकाश करता है इसी तरह मेरी आत्मा में रहा हुआ अज्ञान रूप अधकार दूर हो और आत्मा केवलज्ञान से प्रकाशमान हो"

इसके बाद अक्षत (चावल) से बाजोठ पर अष्टमंगल (१ दर्पण २ भद्रासन (सिंहासन) ३ वर्धमान ४ कलश ५ श्रीवत्स ६ मीनयुगल ७ स्वस्तिक ८ नद्यावर्त) इनका आले-

खन करे अथवा अकेला स्वस्तिक करे यहा पर ऐसी भावना होनी चाहिये—

"हे नाथ चार गति के भ्रमण को हठा कर मुझे अखंड-पद (मोक्षस्थान) दीजिये जिससे जन्म जरा मरण वाले ससार में मुझे फिर भ्रमण करना न पडे"

इसके बाद शक्कर, ताजी मिठाई विगैरह नैवेद्य चढावे और मनमें भावना करे—

"हे दीन दयाल ! जैसे इस आहार का त्याग कर आपने अणाहारी पद प्राप्त किया वैसे मुझे भी यही पद प्राप्त हो"

इसके बाद श्रीफल सुपारी विगैरह फल चढा कर ऐसी भावना करे—

"हे कृपालु स्वामिन् ! यह फल आपके चरणो में रख-कर मैं यही चाहता हू कि मुझे उत्तम मोक्ष रूपी फल जल्द-ही प्राप्त हो"

इस तरह क्रमवार अष्टद्रव्य चढाने के बाद और भी बा-दाम, पिस्ता, इलायची, लवग आदि मेवा चढाना, अशरफी रुप-या पैसा चढाना, आरती और मगलदीप करना, बाजे बजवाना इत्यादि सब अग्रपूजा में गिना जाता है। भाष्य में भी कहा है—

"गधव्व नट्ट वाइय—लवणजलारत्तिआइदीवाई।
ज किच्च सव्वपि उ, ओअरई अग्गपूआए ।१॥"

अर्थात्—"गान, नाच, वादित्र, लवणजल, आरती और मङ्गलदीपक आदि जो कुछ पूजा कर्तव्य है उन सबका अग्रपू-

जामें समावेश होता है। '

स्वस्तिक—

द्रव्यपूजा कर रह तब मंडपमें आकर चोखा सुपारीकी डबिया खोल कर पाटले पर अक्षतका स्वस्तिक (साथिया) नीचे का दुहा बोलता हुआ करे।

" अक्षतपूजा करता थका, सफल करु अवतार।
फल मागु प्रभु आगले, तार तार मुझ तार ॥ १ ॥ "

उसके बाद—

" दर्शन ज्ञान चारित्रना, आराधनथी सार।
सिद्धशिलानी उपरे, हो मुज वास श्रीकार॥२॥ "

इस तरह दुहा बोल कर चावलकी तीन ढगलिया तथा अर्ध चंद्राकार सिद्धशिलाका आकार बनावे।



इनका भावार्थ भी पढिये—

ऊपर दिये गये साथिये के चार पाखडिया है जिनसे देव मनुष्य तिर्यञ्च नरकरूप चार गतियो की सूचना होती है, साथिये के ऊपर चावल की तीन ढगलियां १ ज्ञान २ दर्शन और ३ चारित्र इन तीन रत्न की सूचना करती है, ३ ढगलि

यों के ऊपर जो अर्ध चन्द्राकार किया गया है वह सिद्धशिला का सूचक है, इससे भावना यह होनी चाहिये—

हे त्रिलोकीनाथ ! चार गति के भ्रमण को हटा कर मुझे ज्ञान दर्शन और चारित्र दे कर मोक्षस्थान पहुचनेको शक्तिमान् कर।

ऐसी भावना के साथ साथिया कर उसपर सुपारी निंगैरह फल रक्खे।

भावपूजा—

भगवान् की दाहिनी तर्फ (जीमणी तर्फ) बैठ कर चैत्यवदन करना यह भावपूजा है।

चैत्यवदन के तीन भेद है—जघन्य मध्यम और उत्कृष्ट।

जघन्य चैत्यवदन वह है जिसमें सामान्य नमस्काररूप कोई एक श्लोक या दुहा बोला जाता है।

मध्यम वह है कि जिसमें चैत्यवदन नमुत्थुण दोनों जावति स्तवन जयवीयराय तथा अरिहंत चेइयाण बोलकर एक नवकार का काउस्सग्ग कर ऊपर एक स्तुति बोली जाती है।

उत्कृष्ट वह है कि जिसमें चार अथवा आठ स्तुतियोंसे चैत्यवदन किया जाता है।

इन तीनों भेदों के चैत्यवदनमें स्तवन स्तुति आदि पाठ शुद्ध अर्थ विचारणापूर्वक बोलना चाहिये। अशुद्ध और उपयोग रहित बोलनेसे उसका यथार्थ फल नहीं मिलता। मिठाई बहुत मीठी होती है लेकिन उसमें कङ्कर या धूल पड़ी

हुई हो अथवा खानेवाला मनुष्य ध्यानहीन हो तो खाने का स्वाद बिगड जाता है अगर उसका पता ही नहीं लगता। इसी तरह अशुद्ध उच्चारणमें अथवा उपयोगशून्यतामें समझ लेना चाहिये।

अब चैत्यवन्दन स्तवनादि मन्दिरमें कैसे बोलने चाहियें यह बात भी समझने लायक है।

चैत्यवन्दन स्तवनादि कितनेक सर्वत्र (मन्दिरमें पडिकमणा या पोसहमें) बोलने लायक होते हैं, कितनेक अमुक स्थानमें कहने लायक। कितनेक पुरुषके कहने लायक होते हैं और कितनेक स्त्रीके कहने लायक।

जिस चैत्यवन्दनमें स्तवनमें और स्तुतिमें सिर्फ भगवान् के गुणो का वर्णन हो अथवा अपनी आत्मनिन्दा हो वे मन्दिर प्रति क्रमणादिमें सर्वत्र बोले जाते हैं, परन्तु जिनमें आठम ग्यारस आदि तिथियोंका वर्णन हो या दान शील तपस्या ध्यान पूजा विगैरहका उपदेश हो ऐसे स्तवनादि प्रतिक्रमण सामायिक या पौषध में ही बोलने चाहिये मन्दिरमें नहीं बोलने चाहिये।

स्तुतियाके विषयमें भी यही बात है। पांचम आठम इ ग्यारस आदि तिथियोंकी स्तुतिया प्रतिक्रमणादिमें बोल सक्ते है परन्तु भगवान् के सामने तो भगवान के गुणवर्णनवाली स्तु ति ही बोलनी चाहिये।

चार स्तुतियोंमें पहली स्तुतिमें एक तीर्थङ्करका गुणव-र्णन, दूसरीमें सब तीर्थङ्करोका गुणवर्णन, तीसरीमें ज्ञान का

वर्णन और चौथीमें समकितदृष्टि शासन देवदेवियाकी प्रशंसा आती है। ऐसे क्रमपूर्वक वर्णनवाली चारों स्तुतिया बोलनी चाहिये। कई ऐसी भी स्तुतिया होती हैं जिनमें उक्त क्रम नहीं पाया जाता, व नहीं बोलनी चाहिये।

ऊपरकी सूचना मुजब स्तुति स्तवनादि भावपूजामें पढ़ने चाहिये और वह भी बहुत शातिपूर्वक एकाग्रचित्तसे। क्योंकि लाभ स्थिरतामें है उतावलमें नहीं। स्थिरतासे की गई यह भावपूजा द्रव्यपूजासे अधिक श्रेष्ठ है। भावमें शुद्धि करानेवाली होनेसे उत्कृष्ट फल इसीसे प्राप्त होता है। भावपूजा के समय इतना एकाग्र हो जाना चाहिये कि आसपास क्या हो रहा है उस तर्फ जरा भी खयाल न जाय। एक यूरोपीयन् Astrologer (खगोलशास्त्री) Sir Issac Newton सर आइजार् न्युटन जो कि ई सन् १६४२ में जन्मा था, जिसकी कुल उम्मर ८४ वर्षकी थी उसका मन इतना एकाग्र था कि जब कभी Philosophical (तत्त्वज्ञान) और Arithmetical (गणित) विद्या सबन्धी विचारोंमें मग्न होता था उस वक्त खाना पीना भी भूल जाता, यहा तक कि रात है या दिन है इसकी भी उसको खबर न रहती थी।

इसके सिवाय और भी एक आर्किमिडीज् नामका मश-हूर गणितशास्त्री अपना अभ्यास इतनी एकाग्रतासे करता

कि बाहर क्या हो रहा है उस तर्फ उसका लनिक भी ध्यान न जाता था। एक रोज किसी परदेशी दुश्मनने उसके गाम-पर हमला किया और बंदूक तथा तोपों के धडाकोंसे वहांके मनुष्यों को भगाने लगा उस वक्त यह विद्वान् Geometry (भूमिति) संबंधी जटिल प्रश्नके सुलझानेमें मशगुल था, फौज के सिपाइयोंने उस के बंद कमरे की दिवार तोडकर भीतर जाकर कहा—'हमारे तावे हो जा अन्यथा तेरी जानको खतरा है' यह सुन न तो वह डरा और न गभराया, शांतिसे जवाब दिया—

' Please wait some time till I finish this my knotty ridle "

" कृपाकर थोडी देर ठहरिये मेरा यह कठिन कोयडा पूर्ण करने दीजिये । "

अहा देखिये उसकी एकाग्रता और मन की स्थिरता ! यह तो आधुनिक दृष्टांत है परन्तु शास्त्रमें भी सुना जाता है—

एक रोज लङ्कापति रावण अपनी रानी मन्दोदरी के साथ अष्टापद तीर्थ पर गया और चोइस भगवान् की प्रथम अष्ट द्रव्य से पूजा की बाद भावपूजामें लगा । जिस वक्त मंदोदरी नाच करती थी और रावण वीणा बजाते हुए गाते थे उस वक्त उनकी भावना इतनी बढ गइ थी कि वहां उन्होंने तीर्थङ्कर गोत्र कर्म बांध लिया ।

देखिये कितना है भावपूजा का प्रभाव ! इसी लिये शास्त्रकारोने द्रव्यपूजाका उत्कृष्ट फळ बारवा अच्युत देवलोक तक गमन बताया है और भावपूजा का फल एव अन्तर्मुहूर्तमें मोक्षप्राप्ति तक बताया है। दोनो पूजाओंका लाभ श्रावक को उठाना चाहिये।

उक्त अष्टप्रकारी पूजा के उपरात सतरामेदी और इकीस प्रकारी पूजा भी शास्त्र म बताई है जिन का दिग्दर्शन नीचे मुजब है।

सतरा भेदी पूजा

१ स्नात्र करना, विलेपन करना।
२ चक्षु चढाना।
३ सुगधी फूल चढाना।
४ पुष्पमाला पहनाना।
५ पचरगी फूल चढाना।
६ बरास कपूर आदिका चूर्ण चढाना।
७ अलकार (अगी आदि) चढाना।
८ फूला का घर बनाना।
९ फूलो का ढेर करना।
आरती तथा मंगलदीवा करना।
बत्तियो का दीपक धरना।
धूप करना।

१३ नवद्य चढ़ाना ।
१४ उत्तम फल चढ़ाना ।
१५ गीत गान करना ।
१६ नाटक करना ।
१७ बाजे बजाना ।

इक्कीस प्रकारी पूजा

१ स्नात्र अभिषेक करना ।
२ विलेपन करना ।
३ अलंकार चढ़ाना ।
४ फूल चढ़ाना ।
५ वास खेप चढ़ाना ।
६ धूप करना ।
७ दीपक करना ।
८ फल चढ़ाना ।
९ अक्षत चढ़ाना ।
१० पत्र चढ़ाना (नागर बेल के पान चढ़ाना) ।
११ सुपारी बादाम चढ़ाना ।
१२ नैवेद्य चढ़ाना ।
१३ जलाभिषेक करना ।
१४ वस्त्र चढ़ाना ।
१५ चामर वींजना ।

१६ चादी के छत्र धाधना।
१७ याजे पजवाना।
१८ गीत गान करना।
१९ नाटक करना।
२० स्तुति बोलना।
२१ भंडार वृद्धि करना (च्हावा बोल कर देवद्रव्य म वृद्धि करना)।

इस मुजन यथाशक्ति अष्टप्रकारी सतग भेदी और इक्वीस प्रकारी पूजा कर श्रावक को भगवान् के आगे अपना भक्ति-भाव प्रकट करना चाहिये।

दर्शन और पूजन सबन्धी कुछ सूचनायें—

(१) जिनमदिरमें दर्शन करने का टाइम सूर्य उदय होने के बाद समझना चाहिये अधेरे में दर्शन करना नहीं कल्प सकता, कई जगह देखा जाता है कि पिछली रात करीब घडीभर रहती है तब जैन श्राविका दर्शन करने को चली जाती हैं, राजपूताना के कई बडे बडे शहरों में तो पर्दा वाली श्राविकायें हमेशा पिछली रात में ही दर्शन करने को जाती हैं, इस के सिवाय किसी जगह ऐसा भी देखा गया है कि पजूसण या नवपद ओली के पर्व दिनो में पिछली एक पहर जितनी रात रहती है उस वक्त दर्शनकी उतावल करने लग जाती है, मगर तत्त्व दृष्टि से देखा जाय तो यह प्रवृत्ति बगैर उपयोग की है, जय-

णा धर्म मानने वाले जैन गृहस्थों को ऐसी प्रवृत्ति बंद करने में ही लाभ है।

(२) मंदिर में भगवान् का प्रक्षालन (पखाल) सूर्य उदय होने के बाद करना चाहिये जहा तक अंधेरा हो नहीं हो सकता, कारण कि अंधेरे में जीवजंतु का उपयोग नहीं रहता। प्रक्षालन के लिये जल अंधेरे में नहीं बल्के प्रकाश होने पर लाना ठीक है। साथ में यह भी ध्यान रहना चाहिये कि जल का कलश लाने वाला पूजारी जहा तक बन सके खुद स्नान कर शुद्ध कपडे पहन कर जल का कलश लावे।

(३) भगवान् के प्रक्षालन अंगलुणे करना तथा केशर पूजा करना इत्यादि सब अंगपूजा का कार्य स्वयं श्रावक ही करे, रावल सेवक आदि पूजारी के पास कराना ठीक नहीं, कारण वे नोकर हैं, उन में भक्तिभाव नहीं होता, पूजारी का काम तो जल का कलश लाना, केशर घोंटना, झाड़ू निकालना, मंदिर के बरतन साफ सूफ करना इत्यादि है, मगर आज कल श्रावकों में प्रमाद बहुत बढ जाने से प्रक्षालन अंगलूणा आदि सब कारोबार पूजारी को सुपुर्द कर देते हैं, जिस से पूजारी जी चाहे जैसा कार्य करे, श्रावक लोग तो जब पूजारी प्रक्षालन सिंगार कुल कार्य कर चुके तब सिर्फ भगवान् के टिक्का लगाने को आ[illegible] यह [illegible] है, पूजाभक्ति करना [illegible] है, हां अगर [illegible] श्रावक ही पूजारी के

अधिकार पर रखा हुआ हो तो बात और है, कारण कि वह जैन श्रावक होने से विवेक और भक्तिपूर्वक ही कार्य करेगा।

यहा कोई सवाल करेगा कि श्रावक पगारदार पूजारी कैसे हो सके ?, इसका उत्तर यह है कि कोई श्रावक गरीब हालत म हो तो वह साधारण खाते से मासिक पगार ले कर पूजारी बन सकता है। साधारण खाते से पगार लेने पर देव-द्रव्य का दोष नहीं लगता। मंदिर में चावल सुपारी फल नैवेद्य विगैरह जो पूजापा आवे वह देवका निर्माल्य होने से श्रावक पूजारी को न देकर मंदिर में झाड़ निकालने वाला या कोई नोकर हो उसको दे दिया जावे और सिर्फ साधारण खाते से पगार देकर पूजारी रखा जाय तो श्रावक को कोई दोष नहीं।

(४) मंदिर में खुले दीवों की रोशनी न होनी चाहिये। कई जगह देखा है कि जिस दिन मंदिर म अंगी बनाई जाती है उस दिन शामको (सध्या समय में) खूब रोशनी करते हैं वहा खुले गिलासो में तैल भर कर बत्ती लगा देते हे जिससे पतंगिया विगैरह अनेक जीवों का विनाश होता है। बताइये ऐसी रोशनी किस काम की। अगर रोशनी की इच्छा हो तो काच के बंद फाणस लगावे जिससे जीवों की हिंसा रुक जावे। दीवा रोशनी में पूरा विवेक रखना चाहिये।

(५) अन्त में कहना यह है कि श्रावक लोग अगर बुद्धि-मान् है और उन में विचारशक्ति है तो अपने यहा प्रतिमाओं का सग्रह न करके जहा खास जरूरत हो वहा भेजे दें, और

ले जाने वाले अपनी खुशी से जो नज़र दें उसी से संतोष करें, क्या कि मन्दिर में ज्यों छोटी प्रतिमा रहेंगी त्यों उनकी पूजा भक्ति विशेष होगी और विशेष लाभ प्राप्त होगा।

३ श्रावक-द्वादशव्रत।

सम्यक्त्व अथवा समकित स्वरूप—

निश्चय दृष्टि से वस्तु के यथार्थ स्वरूप पर श्रद्धा होना उसका नाम 'सम्यक्त्व' है और व्यवहार से १ सुदेव २ सुगुरु और ३ सुधर्म इन तीन तत्वों पर श्रद्धा करना सो सम्यक्त्व अथवा समकित कहलाता है।

(१) सुदेव—जो अठारा दोष रहित, बारह गुण सहित चौतीस अतिशय युक्त और पैंतीस गुणयुक्तवाणी से देशना देने वाले, जिनका ज्ञान सर्वव्यापक है, जिनको पुनर्जन्म लेना नहीं है और जो नाम स्थापना द्रव्य और भाव इन चार निक्षेपों से पूजनीय है ऐसे प्रभावशाली अरिहत देव 'सुदेव' है।

(२) सुगुरु—पंच महाव्रतधारी, सतरा भेद से संयम को पालने वाले, नवगुप्तियुक्त ब्रह्मचर्य पालक, पांच समिति और तीन गुप्ति रूप आठ प्रवचन माता के आराधक, बयालीस दोष रहित शुद्ध आहार लेने वाले, तीर्थंकर भगवान् के आगमानुसार शुद्ध प्ररूपणा करने वाले ऐसे निस्पृही त्यागी मुनि 'सुगुरु' हैं।

(३) सुधर्म—तीर्थंकर भगवान् ने समवसरण में बैठ कर चार पर्षदा के सामने द्वादशांगी की प्ररूपणा कर उसमें शुद्ध

स्याद्वादमय नय निक्षेपा सहित साधुधर्म और श्रावक धर्म का जो स्वरूप बताया वही 'सुधर्म' है।

सम्यक्त्वधारीको कोइन तीन तत्वों का श्रद्धापूर्वक आदर और इनसे विपरीत कुदेव कुगुरु और कुधर्म का त्याग करना चाहिये।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक मिथ्यात्व का त्याग कर सम्यक्त्व स्वीकार करता हूं। आज से जीवित पर्यन्त जिनदेव, महाव्रत-धारी साधु और दयामय जैनधर्म पर ही श्रद्धाविश्वास रक्खुगा"

सम्यक्त्वधारी को निम्न लिखित सम्यक्त्व संबंधी पांच अतिचार, छ अपवाद और चार आगार ध्यान में रखना चाहिये—

अतिचार—

(१) शंका—तीर्थंकर भगवान् के वचनों में संशय करना उसका नाम 'शंकातिचार'।

(२) कांक्षा—अन्य धर्म वालों में कुछ चमत्कार अथवा आडंबर देख कर उस तर्फ झुकने की इच्छा करना।

(३) विचिकित्सा—यह धर्म क्रिया करता हूं परन्तु इसका फल मिलेगा या नहीं इस तरह शंकाशील होना।

(४) मिथ्यात्विप्रशंसा—अज्ञान कष्ट करने वाले तापस सन्यासियों की प्रशंसा करना उनके तप की महिमा करना।

(५) कुलिंगिसंस्तव—मिथ्यामतावलम्बी साधु अथवा गुणहीन वेशधारी का परिचय करना।

अपवाद—

(१) रायाभियोगेण—राजा के हुक्म से कभी समकितधारी को अपने नियमविरुद्ध कार्य करना पडे तो उसमें समकित का भग नहीं होता।

(२) गणाभियोगेण—ज्ञाति जाति के समुदाय के कहने से कोइ कार्य करना पडे तो उस म समकित का भग नहीं होता।

(३) बलाभियोगेण—बलवान् चोर म्लेच्छादिक के पजे में फसा हुआ नियमविरुद्ध कार्य करे तो सम्यक्त्व भग नहीं होता।

(४) देवाभियोगेण—भूत प्रेतादिक की परवशता से व र्जित कार्य करे तो भग नहीं होता।

(५) गुरुनिग्गहेण—माता पिता अथवा गुरु के कहने से वर्जित कार्य करना पडे तो भंग नहीं होता।

(६) वित्तिकंतारेण—आजीविका के लिये कोई वर्जित काम धधा करना पडे तो भग नहीं होता।

आगार—

(१) अन्नत्थणाभोगेण—उपयोग विना कोइ वर्जित कार्य हो जाय तो भग नहीं।

(२) सहसागारेण—अकस्मात् यकायक वर्जित कार्य हो जाय तो भग नहीं।

(३) महत्तरागारेण—घर के बडेरे पुरुष के कहने से मिथ्यात्व प्रवृत्ति करनी पडे तो भग नहीं।

(४) सव्वसमाहिवत्तियागारेण—शरीर में सन्निपात आदि भयकर रोग के आक्रमणसमय में कोई विरुद्ध आचरण हो जाय तो भग नहीं होता।

नियम—

१ प्रति दिन——चार देवदर्शन करूंगा।
२ ,, नौकारसी या मास में——करूंगा।
३ ,, नौकारमत्र की माला——गिनूंगा।
४ महीने में——वार या——तिथि पूजा करूंगा।
५ प्रति वर्ष छोटी बडी तीर्थयात्रा——करूंगा।
६ ,, सप्तक्षेत्र में——खर्च करूंगा।
७ ,, साधारण में——खर्च करूंगा।
८ ,, ज्ञान खाते में——खर्च करूंगा।
९ ,, साधर्मिक की भक्ति——वार करूंगा।

ऊपर के नियम जीवन पर्यन्त पालूंगा। आगाढ कारण विशेष की जयणा है। मन शरीर अथवा आत्मा की परवश दशा में भी जयणा है।

सम्यक्त्व सब व्रत और नियमों का मूल और आधार कहा गया है इस वास्ते पहले धर्मश्रद्धारूप सम्यक्त्व दृढ करना चाहिये फिर गृहस्थ योग्य दूसरे व्रत नियमों को अंगीकार करें।

जैन श्रावक के लेने योग्य अनेक नियम अभिग्रहों में स्थूल प्राणातिपातविरमण आदि बारह व्रत मुख्य हैं जिनका संक्षिप्त स्वरूप नीचे दिया जाता है।

स्थूलप्राणातिपातविरमण।

स्वरूप—

स्थूल यानी त्रसेंद्रिय आदि बड़े जीवों के प्राणों के अतिपात (विनाश) से विरमण-रुकना उसका नाम 'स्थूल प्राणातिपात विरमण' है। अर्थात् जीव हिंसा न करने की प्रतिज्ञा।

जीवहिंसा के विषय में द्रव्य और भाव आदि से चतुर्भंगी बनती है जैसे—

(१) द्रव्य और भाव से हिंसा।
(२) द्रव्य से हिंसा भाव से नहीं।
(३) भाव से हिंसा द्रव्य से नहीं।
(४) द्रव्य से नहीं और भाव से भी नहीं।

(१) पहले भंग की द्रव्य और भावसे हिंसा, जैसे कोई शिकारी 'मैं मारूं ऐसा सोचता हुआ मारने के इरादे से तीर फेंक कर जंगल में हिरण आदि का शिकार करता है, यहां पर द्रव्य जीव मारा जाता है और भाव मारने का इरादा होता है।

(२) भंग में द्रव्य से हिंसा है लेकिन भाव से नहीं, जैसे ध्यान पूर्वक चलते हुए मुनि के पैर नीचे कोई कीडी मर गई, यहां पर द्रव्य-कीडी की हिंसा हुई, मगर भाव से नहीं, क्योंकि भाव मारने का नहीं था।

(३) भंग में भाव से हिंसा है, द्रव्य से नहीं, जीव मारने का उपाय किया मगर वह मरा नहीं, जैसे अंगारमर्दकाचार्य ने रात को जीव जान कर कोलसे पावसे दबाये, यहा पर मारने का भाव था मगर द्रव्य से जीव नहीं मरा।

(४) भंग में न द्रव्य से हिंसा है, न भाव से। जैसे मन वचन और काय इन तीन योगों को स्थिर कर काउस्सग्ग ध्यान में खडे मुनि में न द्रव्य से हिंसा है, न भावसे।

बीस विश्वा और सवा विश्वा दया—

त्रस—चलते फिरते जीव और स्थावर—पृथिवी—जल—अग्नि—वायु और वनस्पति, ये पाच प्रकार के स्थिर जीव। इन त्रस और स्थावर जीवों की हिंसा का त्याग करने से बीस विश्वा दया होती है, ऐसी दया मुनि मार्ग में पाली जा सकती है। श्रावक सिर्फ सवा विश्वा ही दया पाल सकता है।

यह हकीकत नीचे के विवेचन मे समझ में आयगी।

"जीवा सुहुमा थूला, सकप्पारभओ भवे दुविहा।
सावराहनिरवराहा, साविक्खा चेव निरविक्खा॥१॥"

अर्थात्—जीव के दो भेद है—सूक्ष्म और स्थावर, अर्थात् स्थावर और त्रस इन दो भेदों में तमाम जीव आ जाते है, उन सब की रक्षा करना उस का नाम बीस विश्वा दया है। इस प्रकार की दया त्यागी मुनि रख सकते है, इस लिये मुनि की दया बीस विश्वा मानी जाती है। श्रावक थावर जीवो की

हिंसा का त्याग नहीं कर सकता, कारण कि सचित्त अनाज जल अग्नि आदि काम में लाता है इस वास्ते बीस विश्वा में से थावर सबन्धी दश विश्वा कम किये तब त्रस सबन्धी दश विश्वा शेष रह।

हिंसा दो तरह से होती है, सकल्प (इरादे) से और आरंभ से। गृहस्थ इरादे से त्रसहिंसा नहीं करेगा मगर आरंभ में अर्थात् घर बार सबन्धी कामों के करने में वह होही जायगी, इस कारण दश में से भी आरंभ के पांच विश्वा निकाल देने से शेष पांच विश्वा रहे।

गृहस्थ सकल्प से भी निरपराध त्रसजीव की हिंसा टाल सकता है, अपराधी की नहीं, इस लिये सापराध के २॥ ढाइ विश्वा कम करने पर शेष २॥ विश्वा रहे।

निरपराध त्रस जीवों की सकल्प हिंसा भी अपेक्षा विशेष से हो जाती है इस वास्ते सापक्षता का १। सवा विश्वा कम करने पर शेष १। विश्वा दया रहती है, बस इतनी ही दया व्रतधारी श्रावक से पल सकती है।

उपयोग रखना चाहिये—

श्रावकों का अपने घर कामों में बहुत उपयोग रखना चाहिये जिस से कि निरर्थक किसी भी जीव की हिंसा न हो। उपले (छाणे) इंधन विगैरह जलाने को लेवे उन को देख भाल कर लेवे ता कि उन में फिज़ूल जीव हिंसा न हो। घी, तैल, गुड,

नमक, आटा निगैरह के वरतन खुले मुह न रक्खें। चूले, पनेहरे पर, खाने तथा सोने की जगह पर, और घरटी तथा ऊखल पर कपडा कतान या चद्रोआ बाधना चाहिये जिस मे किसी जीव का विनाश न हो। जीव जतु की उत्पत्ति न हो वैसी हिफाजत से अनाज रक्खें। जल छानने के लिये उमदा खद्दर का गलना रक्खें और उस से जल छान कर जीवानी जैसा जल हो वैसे स्थान में डाले। अर्थात् मीठे जल का जीवानी मीठे जलाशय में और खारे का खारे में डाले, अन्यथा एक दूसरे में रद्दोबदल करने से उन जीवों का विनाश हो जाता है।

सोने के माचे पलग या पाट में खटमल पैदा न होने देना चाहिये और किसी हालत म पैदा हो गये हो तो उन को धूप में न रखना चाहिये, क्यों कि ऐसा करने से जीव मर जाते है।

भोजन या जल जूठा नहीं रखना चाहिये, क्यो कि उन मे समूर्च्छिम जीवों की उत्पत्ति और हिंसा होती है। मुख से लगा हुआ लोटा गिलास आदि मटकी में न डाले, क्यो कि ऐसा करने से मटकी का जल भी जूठा हो जाने के कारण वहा जीव उत्पन्न होते हैं।

सूखे साक भाजी को देख भाल कर काम में लाना चाहिये। मीठाइ पक्वान्न निगैरह सीआले (ठडी) में एक महीना उन्हाले (गर्मी) में वीस दिन और चोमासे (वर्षाकाल) में १५ पद्रह दिन के उपरात न खाने चाहिये, क्यों कि उक्त काल

क उपरांत उन म जीव उत्पन्न हो जाने का अधिक संभव है। यहा तक लिखें, चूना जलाने में मवेशी को घास चारा डालने में दलने में खाडने म चीज वस्तु लेने रखने आदि हर एक काम में पूरा खयाल रख कर कार्य कर, ताकि जीवदया का निरतर पालन होता रह।

प्रतिज्ञा—

"म दरगुरु साक्षिक स्थूल-हिंसा का त्याग करता हूँ। जीवन पयन्त निरपराध त्रस (स्थूल) जीवों की सकल्प हिंसा (सविचारहिंसा) न स्वय करूगा न दूसर से कराऊगा।"

अतिचार—

१ वध—क्रोध या अभिमान के वश हो कर मनुष्य अथवा गाय, भैंस, बैल, घोडा, ऊट आदि पशु पक्षियों को निर्दयपनेसे मार प्रहार करे इसका नाम 'वध' अतिचार है।

(२) बन्ध—घोडा बैल गाय भैंस आदिको सख्त बधन मे बाधे अथवा गुन्हेगार मनुष्य को भी बुरी हालत से मजबूत बाधे जिस मे उन का नाश दम आ जावे इस को 'बन्ध अतिचार' कहते है।

(३) छविच्छेद—बैल ऊट आदि का कान आदि शरीर के अवयव का छेद करना कराना सो 'छविच्छेद' नामा अतिचार है।

(४) अतिभारारोपण—बैल ऊट आदि के ऊपर उनकी

शक्ति के अनुसार जितना भार बोझा लादना चाहिये उस से ज्यादह लादना उसका नाम 'अतिभारारोपण' अतिचार है।

(५) भक्तपान व्यवच्छेद—गाय भैंस बैल ऊंट आदिको खुराक देना बंध कर दे अथवा खुराक में से कुछ निकाल ले या खाने का समय व्यतीत कर खिलावे तो अतिचार होता है, अपने नोकर दास दासी की रोजी में खलल पहुंचाने या बगैर कारण पगार में कमी करे तो भी दोष है। किसी पर कामण ट्रमण मारण मोहन उच्चाटण मूठ चलाना विगैरह भी इसी व्रत के अतिचारो में गिना जाता है।

स्थूलमृषावादविरमण।

स्वरूप—

'स्थूल' का अर्थ है बडा, 'मृषावाद' का अर्थ है झूठ बोलना और 'विरमण' का अर्थ है रुकना, इस कारण 'स्थूलमृषावाद विरमण' का शब्दार्थ 'बडे झूठ बोलने से रुकना' यह होगा, गृहस्थमें छोटे झूठ वचन का तो त्याग नहीं हो सकता मगर बडे झूठ वचन का त्याग अवश्य करना चाहिये।

मृषावाद दो प्रकार का है—१ द्रव्य मृषावाद और २ भाव मृषावाद। लेन देन में जो झूठ वचन बोला जाता है वह 'द्रव्य मृषावाद' है और शास्त्र विरुद्ध भाषण करना-उत्सूत्र वचन बोलना यह 'भाव मृषावाद'।

द्रव्य मृषावाद में १ कन्यालीक, २ गवालीक, ३ भूम्य-

लिक, ४ न्यापनामृषा और ५ कूटसाक्षी, इन पाच बडे असत्या का त्याग अवश्य करना चाहिये।

इन असत्योंका विवरण नीचे मुजब है।

(१) कन्यालीक-कन्या सबधी झूठ, कन्या के विषय में किसी के पूछने पर अथवा वगैर पूछे गुणवती को निर्गुणा बतावे और निर्गुणा को गुणवती अथवा उसकी उमर कमी वेशी बतावे, लक्षणा म विपरीत बात कहे उस का नाम 'कन्यालीक' है।

जहा तक हो सके कन्या के लेन देन की झझट में व्रतधारी श्रावक को पड़ना ही ठीक नही, पर वैसी मध्यस्थ वृत्ति न रह सके और कन्या सबधी व्यवहार में पडना ही पडे तो जो सही हकीकत हो वही कहे, किसी तरह झूठ न बोले।

कन्यालीक की ही तरह अन्य किसी भी मनुष्य सबन्धी असत्य नहीं बोलना चाहिये।

(२) गवालीक-गाय भस वैल हाथी घोडा विगैरह की उमर के बारे मे उन के गुण दोष बताने में उन की कीमत करने में जैसा हो वैसा कहे कभी झूठ न बोले।

(३) भूम्यलीक-जमीन सबधी झूठ दूसर की जमीन को अपनी कहना, थोडी जमीन हो और ज्यादह बताना, घर दुकान बगला हवेली वाडी बाग विगैरह क बारे म झूठ बोलना, दूसरे के कबजे का मकान जूठी गवाही खडी कर राज के हुकम से अपने कबजे कर लेना इत्यादि असत्य का

नाम भूम्यलीक है। श्रावक को चाहिये कि ऐसे झूठ से दूर रहे।

(४) स्थापना मृषा-विश्वास पात्र जान कर अपने घर बिना साक्षी बिना लिखत-दस्तावेज के रखी हुई अमानत को दबा लेने की नीयत से 'मेरे पास नहीं है, मैं इस विषय में कुछ भी नहीं जानता' इस प्रकार अपने यहा रखी हुई चीज के विषय में नाक़बूल होना इसको 'थापणमोसा'-स्थापना मृषा कहते हैं।

(५) कूट साक्ष्य-झूठी शहादत। दो आदमी आपस में झगडते हों उस वक्त पक्षपात से या लोभ के वश हो कर झूठी गवाही देना 'कूट साक्ष्य' कहलाता है। व्रतधारी को झूठी गवाही कभी नहीं देना चाहिये।

प्रतिज्ञा-"मैं देवगुरु-साक्षिक स्थूल असत्य भाषणका त्याग करता हूं। आजीवन कन्यालीकादि पांच प्रकार का असत्य न स्वयं बोलूंगा न दूसरे से बोलाऊंगा।"

अतिचार-१ सहसाभ्याख्यान-बिना विचारे किसी पर झूठा इलजाम लगाना, जैसे-'तू चोर है, तू लोफर है' इत्यादि। व्रतधारी ऐसा किसी पर दोष न लगावे, अगर किसी में अवगुण हो तो भी उस की निंदा करना जब मना है तो झूठा इलजाम लगाना तो बडा ही अपराध है।

(२) रहस्याभ्याख्यान-खानगी बात करनेवालों पर झूठा इलजाम लगा कर कहना 'तुम अमुक बात करते हो'

इस का नाम 'रहस्याभ्याख्यान' है।

(३) स्वदारमन्त्रभेद-अपनी स्त्री की गुप्त बात किसी के आगे जाहिर करना, खानगी मर्म प्रकट करना इसका नाम 'स्वदार-मन्त्र-भेद' अतिचार है।

(४) मृषा उपदेश-किसी को दुःख में डालने के लिये झूठी राय देवे, झूठी दलीलें सिखावे, टंटे फिसाद उत्पन्न करने वाली तरकीबें बतावे इस को मृषाउपदेशनामक अतिचार कहते हैं।

(५) कूट लेख-किसी के नाम पर झूठा खतपत्र लिखना असल आंक को तोड कर दूसरा जाली अंक लिखना या अक्षर रद्दोबदल करना झूठी मुहर छाप लगाना ये सब काम 'कूटलेख' अतिचार में शामिल है।

स्थूलअदत्तादानविरमण

स्वरूप-

जिस चोरी से राजदरबार में सजा मिले या दुनिया में बदनामी हो ऐसी बडी चोरी नहीं करनी चाहिये।

अदत्तादान के दो भेद हैं १ द्रव्य अदत्तादान २ भाव अदत्तादान।

किसी का घर फाडना जबरन किसी के पास से चीज छीन लेना किसी की रखी हुई चीज के देने में इनकार करना तथा हीरा मोती पन्ना विगैरह में झूठे सच्चे का अदल बदल करना यह तमाम द्रव्य अदत्तादान है।

२ भाव अदत्तादान—वर्ण गंध रस स्पर्श आदि तेईस विषय तथा आठ कर्म की वर्गणा यह आत्मा से पर वस्तु है इन को ग्रहण करना यह भाव अदत्तादान।

प्रकारान्तरसे अदत्तादान के ४ भेद है—१ स्वामि अदत्त २ जीव अदत्त ३ तीर्थंकर अदत्त ४ गुरु अदत्त।

(१) किसी भी चीज को उस के मालिक की आज्ञा सिवाय लेना उस को 'स्वामि अदत्त' कहते हैं।

(२) अपने दास या दासी अथवा अन्य किसी भी जीव को उस की इच्छा बगैर दूसरे के सुपुर्द करना लेना 'जीव अदत्त' कहा जाता है, क्यों कि उस में उस के जीव की आज्ञा नहीं होती।

(३) जिस चीज के लिये तीर्थंकर भगवान्ने निषेध किया हो वह नही लेना चाहिये, लेवे तो तीर्थंकर अदत्त—चोरी कही जाती है। जैसे मुनि के वास्ते भगवान् ने अशुद्ध आहार लेने का निषेध किया है तथा श्रावक के लिये अभक्ष्य वस्तुका निषेध किया है अगर मुनि और श्रावक इन निषिद्ध चीजो को ग्रहण करें तो 'तीर्थंकर अदत्त' लगता है।

(४) गुरु की आज्ञा सिवाय जो चीज ग्रहण करे उस को 'गुरु अदत्त' कहते हैं।

इस के सिवाय किसी की कुछ भी चीज रास्ते में गिरी हुई मिले तो उस के मालिक का पता लगा कर उस के हवाले कर दे, यदि मालिक का पता न लगे तो उस को धमाद कर

ल, अगर वह चीज ज्यादह कीमती हो और सब धर्म मार्ग में खर्च करने को जी न चहे तो जितना जी चले उतना तो अवश्य खर्च करे।

अपनी जमीन में से धन निकला हो तो वह स्वय रख सकता है, उस में चोरी नहीं लगती।

किसी दूसरे का मकान किराये लिया हो और उस में से कभी खोद काम करते धन निकले तो उस का हकदार मकान का मालिक होता है उस को वह धन दे देना चाहिये, अगर ऐसा करने में अपना दिल अनाकानी करता हो तो धन में से आधा हिस्सा खुद रक्खे और आधा धर्म मार्ग में खर्च करे।

अपने पास किसी की रकम हो और उसका मालिक गुजर गया हो और उस का कोई वारस भी न हो तो वह रकम खुद न रख कर गाव के पचों के सुपुर्द करे अथवा पच कहे वहा खर्च कर दे।

अपने घर की मिलकत के मालिक जब तक माता पिता या और कोई बडेरा हो तब तक व्रतधारी उन की आज्ञा ले कर चीज उठावे, हा, अगर माता पिता अपना पुत्र जान कर कोई एतराज न करें तो वह उनकी आज्ञा के सिवाय भी चीज उठा सकता है।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक स्थूल अदत्तादान का त्याग करता

हूँ। आजीवन न स्वय चोरी चोरी करूगा, न अन्य से कराऊगा। "

अतिचार—

(१) स्तेनाहृत-चोरी का माल खरीदना यह स्तेनाहृत अतिचार है। चोरी का माल लेने वाला भी एक तरह का चोर ही है। हेमचद्राचार्य ने योगशास्त्र में सात प्रकार के चोर बताये हैं देखो—

" चौरश्चौरापको मन्त्री, भेदज्ञ' काणकक्रयी।
अन्नद. स्थानदश्चैव, चौर. सप्तविध स्मृत ॥१॥"

तात्पर्य-चोरी करने वाला १, चोरी कराने वाला २, चोरी की राय देने वाला ३, चोरी का भेद जाननेवाला ४, चोरी का माल खरीदने वाला ५, चोर के खान पान की व्यवस्था करने वाला ६, तथा चोर को रहने की जगह देनेवाला ७, ये सात प्रकार के चोर होते हैं।

(२) स्तेनप्रयोग-चोरी करने वाले को चोरी की प्रेरणा करना 'तुम आजकल चुपचाप क्यों बैठे हो ?, तुम्हारे पास खर्चा न हो तो मैं दू, तुम्हारी लाई हुई चीज मैं बेच डालूगा' इस तरह प्रेरणा करना इसका नाम 'स्तेनप्रयोग' अतिचार है।

(३) तत्प्रतिरूपक व्यवहार-अच्छी चीज में खराब चीज मिला कर बेचे, जैसे दूध में जल, केशर में कसुंबा, घी में वेजिटेबल घी मिला कर बेचे। पुराने कपडे को रग कर नये कपडे के भाव में बेचे। यह तीसरा अतिचार है।

(४) विरुद्ध गमन—अपने देश के राजाने जहां जाने की मना किया हो वहां जाय तो चोथा 'विरुद्ध गमन' नाम का अतिचार।

(५) कूटतुला कूटमान—खोटे तोल माप रक्खे, कमती तोल से देवे और अधिक तोल से लेवे यह पाचवाँ अतिचार।

स्वदारसंतोष-परस्त्रीविरमण

स्वरूप—

इस व्रत के दो भाग हैं—'स्वस्त्रीसंतोष' और 'परस्त्री विरमण।' अपनी स्त्री से संतोष कर दूसरी स्त्री का त्याग करना इसका नाम है 'स्वदार संतोष' और दूसरे की स्त्री का त्याग करना उसका नाम 'परस्त्री विरमण'।

मैथुन दो प्रकार का होता है, १ द्रव्य मैथुन और २ भाव मैथुन।

द्रव्य मैथुन का अर्थ है स्त्री पुरुष का शारीरिक संबंध, और भाव मैथुन है शरीर से संबंध न होते हुए दिल में स्त्री विषयक ध्यान करना अर्थात् दिल में विषयों की चाहना करना।

भाव मैथुन संसारी से कतई बंद होना कठिन है परंतु द्रव्य मैथुन में परस्त्री का त्याग कर अपनी स्त्री से संतुष्ट रहना गृहस्थ से हो सकता है। अपनी स्त्री से भी दिन को कभी संबंध न करना चाहिये, धार्मिक दृष्टि से ही नहीं, बल्कि वैद्यक दृष्टि से भी दिन में स्त्रीसंग का निषेध है, क्यों

कि वैसा करने से संतान कम जोर होती है और उस की उमर भी थोडी होती है।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक परस्त्री विषयक स्थूल मैथुन का त्याग करता हूँ। अपनी कायासे आजीवन परस्त्री गमन नहीं करूंगा।"

अतिचार—

(१) अपरिगृहीता गमन—जिस के स्वामी नहीं है ऐसी कुमारी विधवा वैश्या आदि से 'यह दूसरे की स्त्री नहीं है' इस कल्पना से सम्बन्ध करे तो 'परस्त्री त्यागी' को अतिचार लगे और 'स्वस्त्री-संतोष-व्रतधारी' का व्रतभंग हो।

(२) इत्वरपरिगृहीता गमन—थोडे समय के लिये वेश्या आदि को अपनी कर रख ले और अपनी समझ उस से समागम करे तो 'स्वस्त्री संतोषव्रत' वाले को अतिचार लगे।

(३) अनंगक्रीडा—काम वासना जगाने की चेष्टा को अनंगक्रीडा कहते है। चतुर्थव्रतधारी को जिनसे काम विकार हो ऐसे वचन नहीं बोलने चाहिये और कामोत्तेजक चेष्टा न करनी चाहिये करे तो अतिचार लगे।

(४) परविवाहकरण—अपने पुत्र पुत्री आदि के सिवाय बडाई के खातिर अथवा पुण्य मार्ग समझ कर दूसरों के विवाह शादी करावे तो अतिचार लगता है, जहां तक बन सके व्रतधारी विवाह जैसे कार्यों में अगुआ न बने, वहीं

अपने बगैर न चले तो मामाजिक दृष्टि समझ कर वह कार्य करे, दिल में हर्ष या खुशी न मनावे।

(५) तीव्र अनुराग–पुरुष का स्त्री पर और स्त्री का पुरुष पर हद से ज्यादह प्रेम 'तीव्रानुराग' कहलाता है। व्रतधारी को इस प्रकार के अमर्यादित विषय राग में लीन न होना चाहिये। क्यों कि इस प्रकार का विषयानुराग चौथ व्रत का पाचवाँ अतिचार है। व्रतधारी को विकारों को रोकना चाहिये। ऐसा न करने से इच्छा अत्यत बढती जाती है और परिणाम स्वरूप अतिक्रम व्यतिक्रम अतिचार और अनाचार तक हो जाते हैं।

अति स्त्री प्रसग से धर्म हानि ही नहीं शरीर हानि भी होती है इस लिये उक्त अतिचार टाल कर श्रावक इस व्रत पर साबित कदम रहे।

नियम—

कृष्णपक्षकी ______ इन तिथिओं में ब्रह्मचर्य रक्खूगा।
शुक्लपक्षकी ______ इन तिथिओं में ब्रह्मचर्य रक्खूगा।
प्रतिमास ______ दिन ब्रह्मचर्य पालूगा।
अथवा सर्वथा ब्रह्मचर्य पालूगा।

स्थूल परिग्रहपरिमाण

स्वरूप—

अपनी हकदारी के माल मिलकतका परिमाण कर इच्छा काबूमें लाना इसका नाम 'परिग्रहपरिमाण' है।

यह जीव अनादि काल से परिग्रहमें आसक्त है । इसकी इच्छा कभी पूरी नहीं होती, उत्तराध्ययन सूत्र में इच्छा को आकाश की उपमा दी है इसका भी यही कारण है कि जीव की 'इच्छा' का वहीं अंत ही नहीं आता। इस अमर्यादित इच्छा को मर्यादित करने के लिये इस को परिमित करना चाहिये।

परिग्रह के दो भेद है-१ द्रव्यपरिग्रह और २ भावपरिग्रह।

धन धान्यादि नौ प्रकार के परिग्रह को 'द्रव्यपरिग्रह' कहते है और लोभ ममता मूर्च्छा को 'भावपरिग्रह'। द्रव्यपरिग्रह के १ धन २ धान्य ३ क्षेत्र ४ वास्तु ५ रुप्य ६ सुवर्ण ७ कुप्य ८ द्विपद और ९ चतुष्पद ये नव भेद हैं।

(१) धन-दोआनी, पावली, धेली, रुपया, विगेरह रोकड और हुंडी, नोट विगेरह, अथवा गणिम-(नालियर विगेरह जो गिनती से बेचा जाय) धरिम-(गुड प्रमुख जो तोल कर बेचा जाय) परिच्छेद्य-(सोना चांदी रत्न जवाहरात आदि जो परीक्षा से बेचा जाय) मेय-(घी दूध आदि वस्तु जो माप कर बेची जायँ) भेद से धन ४ प्रकार का है। इसका परिमाण करना इस को 'धन परिमाण' कहते है।

(२) धान्य-१ चावल, २ गेहूं, ३ जुआर, ४ बाजरी, ५ जव, ६ मुग, ७ मोट, ८ उडद, ९ छूट, १० चोडा, ११ मटर, १२ तुअर, १३ रिमारी, १४ कोद्रवा, १५ कगणी, १६ चणा, १७ वाल, १८ मेथी, १९ कुलथ, २० मसूर, २१ तिल, २२ मडवा, २३ कुरी, २४ नरटी, २५ मक्की इन में से जिस

धान की जितनी जरूरत हो उसका वर्षभर के लीये सेर या कलसी में परिमाण कर लेना। व्यापार के लिये अधिक रखना पड उसकी जयणा रखना।

(३) क्षत्र–धान बोने के खेत तथा बाग बगीचे इनका परिमाण करना।

(४) वास्तु–घर हवेली नोहरा तथा दुकान बिल्डींग वगैरह, इनका परिमाण करना। घर के दूसरी खिड़की खोलने तथा दुकान, तबेला, गोदाम, वखारी आदि किराये रखनेकी जयणा। किराय के मकानकी, अपने कुटुम्बी सबधी और मित्र के मकानकी, मालिक के मकान की मरम्मत कराने अथवा चमठा करानेकी जयणा।

(५) रूप्य–नाणे के रूप में चलते हुए सिक्कों को छोड कर चादी, चादी के गहने आदि, इनका तोल में परिमाण करना।

(६) सुवर्ण–सिक्कों को छोड कर शेष सोना तथा भूषणगत सोना इस का परिमाण करना।

(७) कुप्य–तांबा, पीतल, सीसा, लोह आदि धातु के बरतन आदिका नाम कुप्य है। इनकी सख्या कर अथवा मणों या सेरा में तोल कर कुल इतने या इतने मण धातु रखनेका नियम कर लेना। कारण वश दूसरों के वास्ते परिमाण के उपरान्त बरतन लाने पडे तो जयणा।

(८) द्विपद–द्विपद का अर्थ यहा मनुष्य है। अपने आश्रित

दास दासी आदि रखने हो उन की गिनती कर नियम लेना। नोकर, चाकर, मजदूर आदि रखनेकी जयणा।

(९) चतुष्पद-गाय भैंस घोडा ऊंट बैल आदि जानवर चतुष्पद कहलाते हैं, इन की आवश्यकतानुसार गिनती कर नियम लेना। कभी कारण वश किसी अन्य की मवेशी थोडे समय के लिये रखनी पडे अथवा आमीवाले पाली हुई मवेशी कभी आ जाय तो वेचे वहा तक रखनेकी जयणा।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक अपरिमित परिग्रह का त्याग करता हूं और जीवन पर्यन्त के लिये धन धान्यादि वस्तु विषयक इच्छाका परिमाण करता हूँ।"

अतिचार—

(१) धन-धान्यपरिमाणातिक्रम-परिमाण से अधिक धनके बढ जाने पर लोभ के वश कुछ रकम पुत्र स्त्री आदि के नाम पर चढा दे तथा अनाज अपने नियम मुजब घर में रख कर बाकी दूसरे के घर पर रख छोडे और जब चाहे तब ले आवे, इस के सिवाय व्रत लेने के समय में कच्चे मण के हिसाब से अनाज रक्खा हो और परदेश जाने पर वहां पक्के मण का तोल जान कर पक्के मण के हिसाब से रक्खे, इत्यादि कर्तव करने वाले को पहला अतिचार लगता है।

(२) क्षेत्र-वास्तुपरिमाणातिक्रम-घर, दूकान आदि के परिमाण से अधिक हो जाने पर बिचली दिवार तोड कर दो

का एक घर बना दवे, हद तोड कर दो तीन खेतों का एक खेत कर लेवे और दिलमें ख्याल कर 'नियम के उपरान्त मैं ने कुछ नहीं रक्खा, ऐसी करतूत करने वालों को दूसरा अतिचार लगता है।

(३) रूप्यसुवर्णप्रमाणातिक्रम–अपने लिये या अपनी स्त्री आदि के लिये सोना चान्दी के जेवर भारी तोल के बनवा कर संख्या कायम रख कर सोना चान्दी अधिक प्रमाण में रखे तो तीसरा अतिचार लगता है।

(४) कुप्यपरिमाणातिक्रम–तांबा पीतल आदि के बासणों बरतनो की संख्या करने के बाद संपत्ति बढ जाने पर वे बासण वजन में भारी तोल के बनवावे। मन में सोचे 'मैंने बासणों की जो गिनती की है वह टूटती तो नहीं है, फिर वजन में अधिक होने में क्या हर्ज है' इसी तरह पहले कच्चे तोल के परिमाण में रख कर फिर पक्के तोल के परिमाण से रख लेवे तो चोथा अतिचार लगता है।

(५) द्विपद-चतुष्पदअतिक्रम–दास दासी गाय भैंस परिमाण से अधिक हो जावें तब बेच कर फिर गर्भ धारण करावे, तथा अपने भाइ बहना के नाम के कर रख दवे तो पाचवा अतिचार लगता है।

नियम—

१ रोकड धन रु ———	लाख या	-	हजार
२ कुल धान्य कलसी	अथवा		मण

३ खेतीवारीकी जमीन   एकड या   बीघा
४ कुल मकानात
५ चांदी   मण या   सेर या   तोला
६ सोना   सेर अथवा   तोला
७ धातु के बर्तन   नग अथवा   मण के
८ दास—दासिया कुल
९ चतुष्पद—जानवर कुल
१० सर्व परिग्रह मिल कर रु   लाख या   हजार

परिग्रह परिमाण व्रत धारियों को चाहिये कि अपने व्रत धन, धान्यादिका जो परिमाण किया हो उसके ऊपर परिग्रह बढ जाय तो उस को धर्म मार्ग में खर्च कर डालें।

व्यापार के निमित्त तेजी मंदी के समय में सोना, चांदी, धातु, धान्य आदि बेच खरीद कर परिग्रह की जातियोंमें कमी बेशी करना पडे उस की जयणा रखना चाहिये परन्तु कुल परिग्रह का अंक नियम के उपर जाते ही उसे धर्म मार्ग में खर्च कर देना चाहिये।

इस प्रकार पांच अणुव्रतोंका दिग्दर्शन कराया, अणुव्रतों के आगे तीन गुणव्रत आते हैं जिन के नाम नीचे मुजब हैं—

१ दिक्परिमाण गुणव्रत २ भोगोपभोगपरिमाण गुणव्रत और ३ अनर्थदंडविरमण गुणव्रत।

इन का गुणव्रत नाम पडने का कारण यह है कि इन

व्रत के पालन से पूर्वोक्त पाच अणुव्रतों की पुष्टि अर्थात् उत्तरोत्तर गुणवृद्धि होती है जैसे दिशिपरिमाण व्रत धारण करने से परिमाण के ऊपर की तमाम दिशाओं के जीवों को अभयदान मिलता है और प्राणातिपातविरमण व्रत की पुष्टि होती है। बाहर के तमाम जीवों के साथ झूठ बोलना बद होने से दूसरे व्रत की पुष्टि होती है। बाहर के क्षेत्र में रही हुइ वस्तु की चोरी का त्याग होने से तीसरे व्रत की पुष्टि होती है। बाहरी क्षेत्र की सर्वस्त्रियों से मैथुन चेष्टा का त्याग होने से चौथे व्रत की पुष्टि होती है और बाहरी सभी चीज वस्तुओं का क्रय विक्रय बद होने से पाचवें व्रत की पुष्टि होती है।

दिक्परिमाण व्रत

स्वरूप—

पूर्व पश्चिम उत्तर और दक्षिण ये चार दिशा और आग्नेयी (अग्नि कोण) नैर्ऋत कोण, वायव्य कोण और ईशान कोण ये चार विदिशा कहलाती है। ऊर्ध्व (ऊपर) और अधो दिशा (निचली दिशा) मिलाने से कुल १० दिशाए होती हैं। इन दश दिशाओं में जाने आने का नियम करना 'दिक्परिमाण व्रत' है। दिशाओं में जाना आना तीन तरह से होता है जलमार्ग से स्थलमार्ग से और आकाश मार्ग से।

जलमार्गसे नाव, आगबोट, स्टीमर आदिमें, स्थलमार्ग से

गाडी, एका, रेलगाडी, मोटर, साईकल आदि पर और आकाश मार्ग से विमान, हवाई जहाज एरोप्लेन विगैरह पर बैठ कर दशों दिशाओं में जाने आनेका योजनो में, कोशो म, मीलों में, गजो मे अगर कदमो मे नियम करना चाहिये। चार विदिशाओं का ठीक पता न रहने के कारण आज कल पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर, ऊर्ध्व और अधो इन छ दिशाओं का ही नियम किया जाता है।

कूप, बावडी, टाका, भूमिगृह सुरग आदिमें उतरना अथवा पहाडसे नीचे उतरना 'अधो दिशा गमन' है और नीचेवालों को पहाड पर चढना 'उर्ध्व दिशागमन'। व्रत लेने वालों को अपनी स्थिति का विचार कर के इस विषय म नियम करना चाहिये। नियम किये हुए क्षेत्र के बाहर सासारिक कार्य क लिये अथवा मौज शोक और हवा खोरी के निमित्त नहीं जाना चाहिये, तीर्थयात्रा के निमित्त जाने की जयणा। पवन के तूफान से नाव आगबोट विगैरह घसीट कर हद के आगे ले जाय, भूल से हद के आगे चला जाय, चौर विगैरह पकड कर दूर ले जाय तो व्रत भग नहीं होता। नियत क्षेत्र के बाहर कागज-पत्र तार टेलीफोन भेजने मगाने की जयणा।

प्रतिज्ञा—

"मै देवगुरु साक्षिक दिशा गमन को नियमित करता हू। भिन्न भिन्न दिशाओं में जाने के लिये रक्खे हुए अन-

काल के उपरान्त न मैं स्वयं जाऊंगा न दूसरे को भेजूंगा।"

अतिचार—

(१) ऊर्ध्वदिशातिक्रम-प्रमाद से या भूलसे ऊर्ध्व दिशा में परिमाण स अधिक उपर चढे तो 'ऊर्ध्वदिगतिक्रम' नामातिचार।

(२) अधोदिगातिक्रम—भूल प्रमाद से परिमाण से ज्यादा नीचे जाने से 'अधोदिगतिक्रम' नामातिचार।

(३) तिर्यगदिशाअतिक्रम—पूर्व पश्चिमादि तिरछी दिशा विदिशा में परिमाण से अधिक भूल से खुद जावे या अपने नौकर को भेजे तो तीसरा अतिचार।

(४) परस्पर परिमाण परावर्तन-एक दिशा में कम कोश रक्खे है और दूसरी में अधिक, कालान्तर में कम परिमाण वाली दिशा म अधिक दूर जाने के सयोग उपस्थित हो जाय तब जिस दिशामें अधिक दूर जानेकी छूट है उस को कम कर दे और कम परिमाण को अधिक बढा दे, और यह सोचे कि मै अपने नियमित योजना से अधिक आगे नहीं गया। इस प्रकार दिशाविपरिणाम करने से चौथा अतिचार लगता है।

(४) स्मृतिअतर्धान—अपने नियम को भूल जावे, न माल्रूम पूर्व दिशा में १०० कोश रक्खे हैं या ५०। इस तरह सशय में पडा हुआ १०० कोश का परिमाण होते हुए भी ५० कोश से अधिक चला जाय तो पांचवाँ अतिचार

लगता है।

नियम—

१ पूर्व में ———————— योजन जाउंगा।
२ दक्षिण में ———————— योजन जाउंगा।
३ पश्चिम में ———————— योजन जाऊंगा।
४ उत्तर में ———————— योजन जाऊंगा।
५ ऊंचा ———————— योजन चढूंगा।
६ नीचा ———————— योजन उतरूंगा।

छोटे बडे पहाडों के ऊपर चढना, टीलो-टेकरो वृक्षों मकानों पर चढना भी ऊर्ध्व दिशा गमन में शुमार है। इसी प्रकार ऊपरवालों से नीचे उतरना अधोदिशागमन में।

भोगोपभोगपरिमाण

स्वरूप—

इस व्रत में खाने पीने की वस्तु का परिमाण होता है, तथा जिन में ज्यादह हिंसा होती है ऐसे व्यापार धंधों का त्याग किया जाता है, बाईस अभक्ष्य और बत्तीस अनतकाय का त्याग किया जाता है। चौदह नियम भी इसी के अतर्गत है।

आहार, फल, पुष्प, तैल अत्तर विगैरह जो एक वार काम में आवे उस को 'भोग' और घर मकान कपडे जेवर स्त्री विगैरह जो वार वार उपयोग में आवे उस को 'उपभोग' कहते हैं, दोनों तरह की वस्तुओं का नियम करना सो 'भोगो

पभोगपरिमाण ' व्रत कहलाता है।

इस व्रत के अनुसार श्रावक को निर्दोष आहार और निर्दोष व्यवहार करना चाहिये। कमसे कम वह २२ अभक्ष्य और ३२ अनतकाय का त्याग तो अवश्य करे।

२२ अभक्ष्य

१ वड का फल
२ पीपले का फल
३ पिलखण (पाश्व पीपले) का फल
४ कठवर का फल
५ उदुबर (गूलर) का फल।

ये पाच फल अभक्ष्य याने खाने लायक नहीं हैं, कारण कि इन में बहुत से सूक्ष्म जीव होते हैं।

६ मदिरा (दारु)
७ मास
८ मधु (शहद)
९ मक्खन

ये चार ' महाविगई ' कहलाते हैं। इन में उसी वर्ण के सूक्ष्म जीव उत्पन्न होते हैं, वे तद्वर्णवाले और अतिसूक्ष्म होने से देखने में नहीं आते, ये महाविगइया चारों अभक्ष्य गिनी जाती हैं।

१० हिम (बरफ) यह असख्यात अप्काय जीवों का बना हुआ पिंड है, इस के खाने से जल के जीवों की हिंसा

के अतिरिक्त चेतना शक्ति कमजोर होती है, तत्काल शरदी करता है बल को क्षीण करता है इस लिये यह भी अभक्ष्य है।

११ सर्व प्रकार का जहर (विष)—अफीम सिंगरह जहरी पदार्थ प्राणघातक होने से अभक्ष्य ह। अफीम सोमल भाग गाजा चरस तमाखू सिंगरह जहरी पदार्थों का सेवन करने वालो की जो दशा होती है उसका वर्णन करने की जरूरत नही। इन के खाने पीने की जिन को आदत पड जाती है उन की परवशता का क्या वर्णन किया जाय ?, भोजन के वगैर वे रह सकते है लेकिन् इन पदार्थों के वगैर नहीं, उन की शारीरिक और मानसिक प्रकृति भी पराधीन बन जाती है। अभ्यस्त व्यसन की प्राप्ति होने पर ही उन का शरीर और मन किसी भी काम क योग्य हो सकता है, अन्यथा नहीं। इस प्रकार के बुरे परिणामों से बचने के लिये उक्त सभी प्रकार के विषों का त्याग करना चाहिये।

१२ करहा—करह जो आकाश से जल क साथ बर्फ के टुकडे गिरते है जिनको 'ओला' कहते है वे भी अभक्ष्य है।

१३ कची मिट्टी—सर्व प्रकार की कची मिट्टी अभक्ष्य है। कची मिट्टी सचित्त है इस के खाने से दो तरह के नुकसान होते हैं। एक तो यह कि मिट्टी के भक्षण से पेट में कई एक जतु उत्पन्न होते है और पाडुरोग आमवात पित्त पथरी आदि अनेक दर्द भी खडे होते है। दूसरा—व्यय एकेंद्रिय

जीवा की हिंसा होती है। इस लिये इस को अभक्ष्य समझना चाहिये।

१४ रात्रिभोजन-रात में खाना भी अभक्ष्य में गिना गया है। दिन का भोजन सात्विक है और रात्रिभोजन तामसिक-राक्षसी है। इस लिये यह छोडने लायक है। खास कर व्रतधारी को तो रात्रिभोजन का अवश्य त्याग करना चाहिये।

१५ बहुबीजफल-जिस में गूदा (गिर) कम और बीज बहुत हों जैसे बेंगण (वृंताक) पपोटा खसखस विगैरह, फलो म जो बीज होते है वे सब सजीव होते है इस वास्ते इन के भक्षण में अधिक जीवों की हिंसा होने से ये 'बहु बीज फल' अभक्ष्य हैं।

१६ सधान (अथाणा—अचार) यह अथाणा याने अचार केरी का नींबु का करमदे का आदे का इत्यादि कई किसम का होता है, यह खटाई वाला होने से तीन दिन तक खाने योग्य होता है। जिसम खटाइ न हो वह एक दिन के बाद ही अभक्ष्य हो जाता है, कारण कि उसमें सूक्ष्म त्रस जीव उत्पन्न होने का सभव है। गुजरात में नींबु अमचूर या नींबु मिली मिर्ची के अथाणे को तीन दिन क बाद सूरज के धूप में अच्छी तरह सुखा देते हैं फिर उसको गर्म किये तैल में डाल देते है। तेल अचार के ऊपर ऊपर ३-४ उङ्गल तक रहता है। इस हालत में वह अथाणा अभक्ष्य नहीं होता। म-

साला डाल कर योंही महीनों और वर्षों तक रखा हुआ अचार (अथाणा) अभक्ष्य होने से त्याज्य है।

१७ द्विदल (कठोल)—जिन धान्यों की दो दाल (फाड) होती है और उनमें तेल की चिक्नाहट न हो उनको द्विदल कहते हैं। मुग चणा चौला उडद वटाना वाल मटर मेथी दाना आदि सब द्विदल है। कच्चे दूध दहीं या छाम के साथ मिलने से द्विदल अभक्ष्य बन जाता है। क्योंकि उसमें तत्काल जीवोत्पत्ति होजाती है। परंतु गर्म किये हुए दूध दही निगरह में द्विदल मिलने से वह अभक्ष्य नहीं होता, इस वास्ते खान पान के समय द्विदल का पूरा ख्याल रहना चाहिये। मुग चणे जैसे द्विदल का शाक खाते समय अगर हाथ शाक में डाला हुआ हो तो धोकर तथा मुह में कुल्ला कर फिर कच्चा दहीं या छाम खाने का उपयोग रक्खे। इसके सिवाय वेसण गटा पतोल आदि कोई भी द्विदल का शाक छाम या दही मिलाकर करना हो तो पहले दही छाम को गरम करले पीछे उस में द्विदल का चून दाल आदि डालकर शाक बनावे ताकि उसमें अभक्ष्य का दोष प्राप्त न हो।

१८ घोलवडा—दहिका घोल कर उसमें डाले गये वडे। घोल को गर्म कर उसमें डाले गये वडे अभक्ष्य नहीं होते।

१९ तुच्छफल—टींवरु, केरडा के पीचू, पीलु, बोर आदि फल जिसमें खाना थोडा और छोडना बहुत ये सब तुच्छ

फल है और ये अभक्ष्य माने जाते ह व्रतधारी इनका त्याग करे।

२० अनजाना फल—जिस फल का नाम स्वभाव मालूम न हो वह भी अभक्ष्य है।

२१ चलित रस—जिस भक्ष्य पदार्थ का वर्ण गंध रस स्पर्श बदल गया हो, सडने की वजह से जिसमें से खराब बू आती हो, जिसमें से तार निकलते हो वह सब 'चलित रस' नामक अभक्ष्य है। रोटी, शाक, खिचडी, वडा, नरम पूरी, लापसी, सीरा, मालपुआ विगैरह चार पहर के बाद प्राय चलित रस हो अभक्ष्य हो जाते है। दाल के वडो भजियों में जल का भाग मिला हुआ होने से वे भी दूसरे दिन वासी गिने जाते हैं।

दही मे बना हुआ चावल का करबा तथा छास में बनी हुइ मक्का बाजरा आदि की पहले दिन की घेंस दूसरे दिन काम में आ सकती है। कई लोग दूध में आटा बांधकर पुडिया बनाते ह परतु दूध में जल का भाग अधिक और खटाई का भाग बहुत कम होने से वे पुडिया वासी—चलित रस हो जाती हैं इस लिये रात निकलने के बाद अभक्ष्य है। जो जो चीज घी में या तेल में बनाइ जाती हैं वे अमुक काल तक वासी नहीं होती। शीयाले की मोसम में मिठाई का उत्कृष्ट काल एक महीने का, उन्हाले में २० दिन का और चोमासे में १५ दिन का है। वाद में अभक्ष्य हो जाती है। मीठाइ का

यह आखिरी समय है, अगर इस मुद्दत के भीतर खराब हो जावे तो उसी समय अभक्ष्य समझ कर नहीं खाना चाहिये। समझ कर सब चीजों में भक्ष्य अभक्ष्यपन का खयाल रखकर काम में ले। दही तथा छाछ १६ पहर के बाद अभक्ष्य समझनी चाहिये।

२२ अनतकाय—एक शरीर में अनत जीव हो वह वनस्पति अनतकाय कही जाती है। शास्त्र में बत्तीस प्रकार के अनन्तकाय अभक्ष्य कहे है, जो नीचे मुजब है—

(१) भूमिकद (जमीन में जो कद पैदा हों व सब)।
(२) सूरण कद
(३) वज्रकद
(४) लीली हलदी (हरी हल्दी)
(५) आदा लीला (हरा अदरक)
(६) हरिया कचुरा (हरा कचूरा)
(७) वरीयाली की जड (दूसरा नाम बिराली कद)।
(८) शतावरी (सतावर)
(९) कुआर पाठा (घीग्वार)
(१०) थुअर
(११) गिलोय (गुरच)
(१२) लहसुन (लसण)
(१३) करेला वास का
(१४) गाजर

(१५) लाणा (जिसकी सज्जी बनती है)

(१६) लोण वृक्ष

(१७) गिरिकरणी (गिरमिर) कच्छ देश में प्रसिद्ध है।

(१८) कोमल पत्र (वनस्पति के नये उगते अकुरे अनतकाय होते हैं, बढ़न के बाद वेही प्रत्येक वनस्पति कहलाते हैं)

(१९) खरसुयाकन्द (कसेरु)

(२०) थग (जुवार के दाने की तरह का कन्द)

(२१) हरामोथ (नागर मोथा)

(२२) लूणी वृक्ष की छाल

(२३) खिलोडा

(२४) अमृतवेल (अमरवेल)

(२५) मूला (मूली)

(२६) भूमिस्फोट—(जो सफेद छत्र के आकार में चोमासे में जमीन में से निकलते हैं)

(२७) बथुए की भाजी (प्रथम उगती हुई)

(२८) करहार

(२९) सूअर वेल

(३०) पलक की भाजी

(३१) कोमल इमली–(जहा तक बीज न पड़े वहा तक अनतकाय)

(३२) आलु रताल पिंडालु। इसके सिवाय और भी हैं

यहा पर खास खास नाम दिखलाये है। सब अनतकाय अभक्ष्य है।

अनतकाय का लक्षण यह है कि पत्ते, फूल, फल आदि में नसो का गुप्त होना, साधे गुप्त होना, तोडने से बराबर टूट जाना, और जड से काटे जाने पर भी अर्से तक हरा रहना और बोने पर फिर से लग जाना ये सब अनतकाय के लक्षण है।

इन अभक्ष्य वस्तुओ में से भाग अफीण आदि जिनके खाने की आदत पहले पड गई हो और न छुटती हो तो उसके खाने की छूट रक्खे। तथा रात्रिभोजन में चउविहार तिविहार अथवा दुविहार जो भी बने पच्चक्खाण रखने का नियम करे। रोगादिक के कारण अभक्ष्य खानी पडे तो जयणा रक्खे। इसके सिवाय अनजान में किसी वस्तु में अभक्ष्य चीज खाने में आ जावे तो उसकी जयणा है।

चौदह नियम—

"सचित्त दव्व विगई वाणह-तंबोल-वत्थ कुसुमेसु।
वाहण-सयण-विलेवण-बभ दिसि न्हाण भत्तेसु॥"

१ सचित्त—सजीव पदार्थ सचित्त कहलाता है, अनाज जो बोने से उगता है, कच्चा पानी, हरा शाक, फल पान, कच्चा निमक वगैरह सब सचित्त है। इन सब में शस्त्र प्रयोग होने पर ये अचित्त हो जाते हैं। कितनीक चीजें ऐसी भी होती हैं

जो बीज निकालने के बाद कच्ची दो घडी समय के उपरान्त अचित्त होती है, जैसे पके खरबूजे पके आम (करी) इनमें से बीज निकालने पर दो घडी के बाद उसका गूदा रस या टुकडे अचित्त बनते हैं। खान पान में सचित्त का त्याग, सख्या या परिमाण किया जाता है।

२ द्रव्य—जितने प्रकार की चीजें मुख में डालने की हों व सब अलग अलग द्रव्य गिने जाते हैं, रोटी पूरी दाल चावल कढी शाक मिठाइ पापड आदि, इनमें से जिन जिन द्रव्यों की दिन भर के लिये जरूरत समझे गिनती या वजन कायम कर रखना चाहिये।

३ विगइ—कुल विगइ १० हैं जिनमें १ मधु (शहद) २ मास ३ मक्खन ४ मदिरा ये चार महाविगइ अभक्ष्य हैं। श्रावक को इनका अवश्य त्याग करना चाहिये। भक्ष्य (खाने लायक) विगइ ६ हैं–१ दूध, २ दहि, ३ घी, ४ तेल, ५ गुड–खाड और ६ कडाह विगई (घी या तैल में बनाई जानेवाली मिठाई विगैरह)।

हर एक विगई के निवियाते के पाच पाच भेद हैं जिनका विस्तार सहित वर्णन पच्चखाणभाष्य में दिया हुआ है, वहा से देख सकते हैं।

छ विगई में से कम से कम एक एक विगई का त्याग सदा रखना चाहिये।

विगई का त्याग तीन तरह से होता है—

१ कची का त्याग (२) निवियाती का त्याग (३) मूल से त्याग।

कची दूध विगई का त्याग किया हो तो खीर, मावा (खौरा) विगैरह दूधकी बनी चीज अथवा दूध मिली चीज खाई भी जा सकती है, निवियाती का त्याग करने पर दूध विगई के खीर आदि निवियाते भी नहीं खा सकते और मूल से ही दूध का त्याग करने वाला तो जिसमें दूध का या उसके पदार्थों का थोडा भी भाग मिला हो उन चीजों को भी नहीं खा सकता। कची दहि विगई का त्याग करने वाला दहि के बने रायता, मठा आदि का उपयोग कर सकता है परंतु निवियाते दहि का त्यागी उक्त पदार्थ नहीं खा सकता। मूल से दहि का त्यागी दहि जिसमें डाला गया हो एसा कोई भी पदार्थ नहीं खा सकता। कचे घी, तैल का त्याग करने वाला जला हुआ घी या तैल खा सकता है। निवियाते का त्यागी नहीं खा सकता और मूल से त्याग करने वाला जिनमें घी तेल पडे हो ऐसी कुछ भी चीज नहीं खा सकता।

कची कडाह विगई का त्याग हो तो तीन घाण के बाद बनी हुई चीज पूरी भजिया आदि खा सकते हैं। निवियाते का त्याग हो तो तीन घाण के बाद के घाण का भी नहीं खा-सकते। शीरा लापसी आदि कडाह विगई के निवियाते होने से

वे भी नहीं खाये जा सकते। भूजे बघारे शाक आदि कडाह विगई नहीं हैं।

४ वाणह—(उपानह) जूता, बूट, चपल, खडाउ, मोजा जोडी आदि की संख्या कर लेवे। भूल से पहनने में आ जाय तो उसकी जयणा।

५ तंबोल—पान, सुपारी, इलायची, लौंग आदि मुख वास की चीजों का अंदाज करना (नवटाक पाव सेर आदि)

६ वस्त्र—पगडी, टोपी, साफा, अंगरखा, कुरता, कमीस, कोट, धोती, पायजामा, दुपट्टा, अंगोछा, रूमाल आदि मरदाना और जनाना कपडा जो ओढने पहिनने में आवें उनकी संख्या तथा गहने की संख्या कर लेना चाहिये। धर्मकार्य में जयणा। भूल से पहना जाय उसकी जयणा।

७ कुसुम—फूल, गजरा, तुरा, अत्तर, तमाखु, आदि सुंघने की चीजें हों उनका परिमाण करना।

८ वाहन—सवारी का साधन-फिरता, चरता और तिरता यह तीन प्रकार का है। गाडी, मोटर, साइकल, ट्राम, रथ, पालखी, रलवे, गिगराम, उडता एरोप्लाइन आदि फिरता, घोडा, ऊंट, हाथी, खचर, बैल आदि सवारी के वाहन पशु चरता, और नाव-आगबोट-स्टीमर आदि जल मार्ग के वाहन तिरता वाहन कहलाते हैं। अपने काम के लिये इनकी प्रतिदिन संख्या करनी चाहिये।

९ शयन—सोने बैठने का साधन कुरसी, टेबल, पट्टा,

पलग, चारपाई, (माचा), कोच, गादी, तकिया, चटाई, दरी (सेत्रजी), बिस्तरा आदि की संख्या करना।

१० विलेपन—शरीर में लगाने की चीज तेल, अत्तर, चदन, मेंट, सुरमा, काजल, उबटना, साबुन, हजामत, बुरश, कघा, कान, मलम पट्टी का लेप आदि। इनका वजन कर-लेना चाहिये।

११ ब्रह्मचर्य—परस्त्री का त्याग और स्वदार संतोष र-क्खें। उसका भी रात्रि में परिमाण करें। काया से पालन करे। मन वचन की जयणा।

१२ दिशि—(१० दिशा) ४ दिशा ४ विदिशा ऊर्ध्व और अधो इन दश दिशाओं में जाने आने का (अमुक कोश तक का) नियम करना। धार्मिक कार्य की जयणा, तार चिट्ठी भेजना माल भेजना मगवाना आदमी भेजना विगैरह इसी से समझना चाहिये।

१३ स्नान—दिन में इतनी वार स्नान करना ऐसी धारणा करना। धार्मिक कार्य के लिये जयणा।

१४ भत्त—(भक्त) अशन-पान-खादिम-स्वादिम इन चार प्रकार के आहारों में से, जितना खाने पीने में आवे उ-तने का सेरों में परिमाण रखना चाहिये।

इन १४ नियम के उपरात ६ काय और ३ कर्म की म र्यादा भी करनी चाहिये।

छ जीवनिकाय—

पृथिवीकाय मिट्टी, निमक आदि (खाने में या उपभोग में आवे) उसका पावसेर, आधसेर, सेर मण आदि वजन कायम करना।

२ अपकाय—जो पानी पीने में वा दूसरे उपयोग में आवे उसको मग दोमण या चाहिये उतना नियत करना।

३ तेउकाय—चूल्हा, अगीठी, भट्टी, माइमस, दीवा विगैरह में तेउकाय का आरंभ होता है इस वास्ते इन की संख्या नियत करना, एक दो या तीन घर के चूल्हे रखे, हलवाई के चूल्हे की छूट रक्खी हो तो वहां की मिठाइ खा सके अन्यथा नहीं।

४ वायुकाय—हिंडोले और पंखे (अपने हाथमें या हुकुम से) जितने चलते हो उनकी संख्या नियत करना, रुमाल से या कागज से हवा लेना यह भी पंखे में शामिल है उसकी जयणा।

५ वनस्पतिकाय हरा शाक, फलादि इतनी जातके खाने, घर संबंधी मंगावे उसकी गिनती तथा दो सेर तीन सेर का वजन करना।

६ त्रसकाय—चलते फिरते तमाम त्रस जीवों को मारने की बुद्धि से मारु नहीं ऐसा नियम करना हर एक प्रवृत्ति में उपयोग रखना कारण 'उपयोगे धर्म' है।

तीन कर्म—

असि कर्म-तलवार, बंदूक, तमंचा, चाकू, छुरी, कैंची,

खूटी, सुई आदि जो उपयोग में आवे उसकी संख्या करना।

२ मसिकम—लिखने के उपयोगी साधन स्याही, कलम, होल्डर, पन्सील, दवात आदि की संख्या रखना।

३ कसिकर्म—खेती के उपयोगी हल, कुदाला, हलवाणी, फावडा, (पावडा) आदि की संख्या करना।

पद्रह कर्मादान—

१ इगालकर्म—कोयले बनाकर वेचना इट बनाकर वेंचना लुहार का सुनार का कलाल का हलवाई का धधा जो अग्नि आरभ से होता है इसमें आरम ज्यादह है इस लिये जहा तक हो सके यह कर्म श्रावक न करे। लकडी के कोलसे बना कर वेचने का तो अवश्य ही त्याग करे। सूखी लकडी कटाने की जयणा।

२ वनकर्म—लीले लकडे कटाना, फल, फूल, कदमूल हरि वनस्पति विगेरह वेचना इत्यादि काम श्रावक को न करना चाहिये, जगल कटाने का तो अवश्य ही त्याग करे। सूखी लकडी कटाने की जयणा।

३ साडीकर्म—गाडी रथ नाव हल चरखा घूमरा चक्की मूसल विगेरह बनाकर वेचना यह 'साडी कर्म' श्रावक को छोडने लायक है।

४ भाडीकर्म—ऊट बैल खचर घोडा गाडा आदि किराये देकर गुजरान करना यह भाडीकर्म कहलाता है।

फोडीकर्म—आजीविका के लिये कूआ तालाव खुदावे, हल

चलाव, खान, खुदावे, सुरग खुदावे यह 'फोडीकर्म' है।
६ दंतवाणिज्य-(दांतका व्यापार)-हाथी का दांत, विगैरह बेचने का व्यापार 'दंतवाणिज्य' है। इसका ठेका लेना अत्यंत आरंभ-हिंसा का कारण है। श्रावक ऐसा व्यापार न करे। दांत की बनी बनाई चीजें ले कर तंग हालत में व्यापार कर उसकी जयणा है।

७ लाखवाणिज्य (लाख आदि का व्यापार)-लाख, माजीखारा, साबुन, सुहागा, मनसील, हरताल विगैरह का व्यापार न करे। खास कर लाखका व्यापार अवश्य वर्जनीय है।

८ रसवाणिज्य-मदिरा मांस तथा घी तैल गुड खांड आदि में चोमासे के दिनो में मक्खी मकोडा कीडी विगैरह जीवों की बहुत हिंसा होती है इस लिये रसव्यापार न करे। खास कर मद्य मांस का व्यापार श्रावक को वर्जित है।

९ केशवाणिज्य-घेटा बकरा की ऊन, जाट, पक्षियों के रोम, चवरी गाय के बाल विगैरह का बेचना 'केशवाणिज्य' है जो न करना चाहिये।

१० विषवाणिज्य-संखिया, वछनाग, अफीम आदि जहरिली चीजों का व्यापार न करना।

११ यंत्रपीलनकर्म-घाणी कोल्हू विगैरह चला कर तैल रस विगैरह निकालने का काम न करना।

१२ निर्लांछनकर्म-बैल, ऊंट विगैरह के नाक फडवाना वछडों को बधिया (खसी-खोई ससार) करवाना या इन को

जलाना, कोटवाल की नोकरी, जेलखाने की नोकरी विगैरह निर्दयपने का काम करना यह सब निर्लांछनकर्म के शामिल है।

१३ दावाग्निकर्म–जंगल में आग लगा कर जलाना यह दावाग्निदान कर्म है।

१४ शोपणकर्म–तालाब, बंधा, वाव आदि के जलको नहर द्वारा निकलवा कर खेत पिलाना, इस से जल खाली हो जाता है और लाखों जीव जल बिना तडफ कर मरते हैं इस लिये यह 'जलशोषणकर्म' पाप का कारण है।

१५ असतीपोषण–कुलटा–व्यभिचारिणी स्त्री का पोषण कर उससे धन पैदा करना या उस आशयसे उस का पालन करना, कुत्ता बिल्ली आदि शिकारी जानवरों का पालन करना यह सब 'असतीपोषण' कहा जाता है।

यह १५ कर्मादान हैं, याने ज्यादह पापबन्ध के कारण हैं, व्रतधारी इन व्यापारो में न पडे।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक उपभोग–परिभोग व्रत ग्रहण करता हूं। आजीवन अनन्तकाय बहुबीजादि भोजन और कर्मादानादि व्यापारों का यथाशक्ति त्याग करता हूं।"

अतिचार—

(१) सचित्त आहार–सचित्त का त्याग कर बगैर उपयोग के सचित्त को अचित्त समझ कर खावे पीवे, जल पूरा [illegible] न हुआ हो और उस को पीवे तो यह पहला

(२) सचित्तप्रतिबद्धाहार–जिस के सचित्त का नियम है वह वृक्ष (बावलिये) पर लगा हुआ गोंद अथवा इसी प्रकार सचित्त के साथ लगे हुए अचित्त पदार्थ उखाड कर एक मुहूर्त समय होने के पहले खावे तो यह दूसरा अतिचार लगता है।

(३) अपक्वौषधिभक्षण–सचित्त का त्यागी फली पुखडा भाजी विगैरह कच्चे खाने तो यह तीसरा अतिचार लगता है।

४ दुःपक्वौषधिभक्षण–गेहू के होले मक्काइ के सकिये चणों के सरपटिये विगैरह अध पके खाने तो चौथा अतिचार लगता है।

(५) तुच्छौषधि भक्षण– जिस में खाना थोडा और फेंकना ज्यादह ऐसी बेर, सहजने की फली, विगैरह तुच्छ चीज का खाना यह तुच्छ औषधि भक्षण है। नियम–व्रत वाला खावे तो पांचवाँ अतिचार लगता है।

नियम—

१ बाइस अभक्ष्यों में से न ———— को छोड शेष अभक्ष्य भक्षण का त्याग।

२ बत्तीस अनन्तकायों में से न. ———— को छोड शेष अनन्तकाय भक्षण का त्याग।

३ पदरह कर्मादानों में से न ———— को छोड शेष कर्मादान करनेका त्याग।

४ महीने में ——— वार रात्रिभोजनकी छूट कृष्णपक्ष

को ———— और शुक्ल पक्ष की ————
इन तिथियों में रात्रिभोजन का सर्वथा त्याग।

आगे दी हुई सूचीमें रक्खी हुई वनस्पतियों को छोड शेष हरि वनस्पति भक्षणका त्याग। रोगादि कारण अथवा अनजानपन में कभी छोटी हुई चीज खाने में आ जाय उस की जयणा। बाह्य उपभोग में लेने की जयणा।

हरि वनस्पति (लीलोतरी) की टीप—

अजमापत्र	खरबूजा	तुलसी	बेरी (पचाग)
अटवीपत्र	गलका	दूधिया	भाडी
अदरक	गवारफली	द्राक्ष	मकिया
अननस	गिलोय	धनिया	मतिरा
अनार	गुलाब	नारंगी	मिरची
अजीर	गुन्दा (छोटा)	नालेर	मिरच
आम (केरी)	गुंदा (बडा)	नीम	मूला (भाजी)
आलडी	गूलर	नीम (मीठा)	मेथी(पचाग)
आवला	गोंयली	नींबू	मोगरी
इमली	घीग्वार	पणस	मोगरी (गु-
इख (शेलडी)	चकी	पपीता	जराती)
उर्मी	चणा(पचाग)	(पोपैया)	रजगा
ककडी	चमेली	परवल	रामफल
कणगरा	चीकू	पर्जण	रायडोडी

करेला	चीभडा	पान	रायण
करेला (बडा)	चीभडिया	पीलु	रताणा
करमदा	चील (भाजी)	पोंक	वरियाली
ककोडा	जमीगी	पोसडोडा	वालोल
कालिंगा	जामफल	फणस	सफरजन
कुमटिया	जामून	पुदीना	मरमत (भाजी)
कर	टमेटा	बथुआ	सतरा
केला	टींबरु	बदाम	मागरी
कैथ	तडबूज	वालल	सींघोडा
कोबी (पत्ता)	तदुलिया	बीजोरा	सोआभाजी
कोबी (फूल)	तींडसी	बेर (बडे)	
कोहला	तुरई	बेर (पेमजी)	

ऊपर की वनस्पतियो में से जिन जिन का त्याग करना हो उन के नामके पहले ० इस प्रकार शून्य लगा देना चाहिये।

अनर्थदण्डविरमण

स्वरूप—

बिना मतलब अपराध लेना उसका नाम 'अनर्थदंड' है, वह ४ प्रकारका है–१ अपध्यान, २ पापोपदेश, ३ हिंसप्रदान, और ४ प्रमादाचरित।

१ अपध्यान–अपने सुख में विघ्नडालने वाले सयोग प्राप्त न हो इसके लिये फिकर करना अथवा इष्टवस्तु–स्त्री

पुत्र धन विगैरह का वियोग न हो ऐसी चिंता करना इस को 'अपध्यान' अनर्थदंड कहते हैं।

२ पापोपदेश-पाप का उपदेश करे, जैसे खेती वाले को कहे ' तुम हल क्यों नहीं जोतते ? हलवाई की भठी ठंडी पडी देख कर कहे-' आज भठी क्यों नहीं जलाते ? इस प्रकार विना प्रयोजन पाप की राय देना इस को ' पापोपदेश ' अनर्थदंड कहते हैं।

३ हिंस्रप्रदान-कुदाला, हलवाणी, कुल्हाडी, बंदूक विगैरह हिंसा के उपकरण किसी को मागे वगैर मागे दे उसका नाम 'हिंस्रप्रदान' है।

४ प्रमादाचरित-विना मतलब कामशास्त्र सीखना, जुगार में पटना, दरखतों में हिंचोला बांधकर हींचना, कुत्ते बिल्ली घेटे भैंसे विगैरह को आपस में लडाना चार प्रकार की विकथा करना, मंदिर में हासी ठठे करना इत्यादि सब ' प्रमादाचरित ' अनर्थदंड कहा जाता है, इन चारोंका श्रावक त्याग करे।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक हिंस्रप्रदानादि चतुर्विध अनर्थदण्ड का जीवनपर्यन्त के लिये यथाशक्ति त्याग करता हूं।"

अतिचार—

(१) कंदर्पचेष्टा-हाथ पाव, आंख आदि की चेष्टा से

किसी को हसावे या किसी को क्रोध उत्पन्न करावे यह पहला अतिचार।

(२) असवद्ध वचन-वाहियात वचन निकाले, दूसरों के मर्म खोले, वैर बढ़ाने वाले चुगलीखोर वचन निकाल कर फिजूल बकवाद करे यह दूसरा अतिचार।

(३) भोगोपभोगातिरक-अपने शरीर के लिये जितने की जरूरत हो उससे अधिक पदार्थ उपयोग में ले यह तीसरा अतिचार।

(४) कौत्कुच्य या मर्म कथन-जिसके बोलने से दूसरा के दिल में काम या क्रोध का जोश उत्पन्न हो या वियोग की वार्तायुक्त कथा तथा शृंगार से भरी हुई कविता सुनाकर काम भाव जागृत करना यह चौथा अतिचार।

(५) सयुक्ताधिकरण—ऊखल के साथ मुसल रखना, धनुष के साथ तीर रखना इत्यादि हिंसा के उपकरणों को तय्यार कर रखना यह पाचवा अतिचार है, कारण कि शस्त्र हाजर रखने से हर कोई इसका गैर उपयोग कर सकता है उस आरंभ का भागी शस्त्र रखने वाला श्रावक बनता है, वास्ते पापोपकरणों को जोड कर न रखे।

सामायिकव्रत

स्वरूप—

रागद्वेषादि विषमताओं को दूर हटा कर दो घडी (४८ मिनट) तक समभाव में रहना इसको सामायिक कहते है।

सामायिक का अर्थ आवश्यक सूत्र में इस मुजब किया है—

"समाना–ज्ञानदर्शनचारित्राणां आय –समाय समाय एव सामायिकम् ।"

अर्थात्–सम याने ज्ञान दर्शन और चारित्र इनका जो 'आय' अर्थात् लाभ उसका नाम 'समाय' समाय ही सामायिक है।

अनुयोगद्वारटीका में भी कहा है—

"सामायिक गुणाना–माधार खमिव सर्व भावानाम्।
नहि सामायिकहीना–श्चरणादिगुणान्विता येन ॥१॥"

तात्पर्य–सामायिक तमाम गुणो का आधार है जैसा कि सर्व पदार्थो का आधार आकाश, सामायिक रहित मनुष्य चारित्रादि गुण युक्त नहीं होते।

यह सामायिक व्रत ३२ दोष रहित होना चाहिये। ३२ दोष नीचे लिखे मुजब है—

मन के १० दोष—१ अविवेक, २ यश की इच्छा, ३ लाभ की इच्छा, ४ अहंकार, ५, भय, ६ नियाणा बांधना, ७ फल में संशय लाना, ८ क्रोध करना, ९ अविनय, १० भक्तिशून्यता।

वचन के १० दोष–१ कुवचन बोले, २ अविचारा बोले, ३ प्रतिघातवचन (अगले के दिल में प्रहार करे ऐसा वचन), ४ बडबड बोलना, ५ मशमा वचन बोले, ६ कलह करे, ७

विकथा करे, ८ हांसी करे, ९ गरम वाक्य निकाले, १० कि सी को 'आओ' 'जाओ' कहे।

काया के १२ दोष–१ आलस (प्रमाद) रखना, २ नींद लेना, ३ घुटने ऊंचे करना, ४ अस्थिर आसन, ५ नजर फिराना, ६ अन्य कार्य में प्रवर्तन, ७ भीत का सहारा लेना, ८ शरीर के अवयव छिपाना, ९ मेल उतारना, १० खाज खनना, ११ कटके पाडना और १२ लंबे पांव करना।

ऊपर कहे ३२ दोषों से रहित कम से कम एक सामायिक श्रावक हमेशा करे। शुद्ध सामायिक से ही आत्मा में गुण प्रगट होता है, पूर्व काल में केशरीचोर ने मन वचन और काया की एकाग्रता से शुद्ध सामायिक करने से केवल ज्ञान प्राप्त किया था यह बात शास्त्र में प्रसिद्ध है।

शुद्ध सामायिक का फल उपदेशसप्तति ग्रंथ में यो बताया है—

"बाणवइ कोडीओ, लक्खा गुणसट्ठि सहस पणवीस।
नवसय पणवीसाए, सतिहा अडभाग पलियस्स॥१॥"

अर्थात्—९२ क्रोड ५९ लाख २५ हजार ९२५ नौ सौ पचीस पल्योपम के ऊपर १ पल्योपम के ८ भाग में से ३ भाग अधिक, इतने पल्योपम का स्वर्ग गति का आयु बांधता है।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक सामायिक व्रत स्वीकार करता हू। आजीवन धारणा मुजब यथाशक्ति सामायिक करूंगा।"

अतिचार—

(१) काय दुष्प्रणिधान-शरीर को या उसके किसी अंग को बिना पूंजे इधर उधर हिलाना।

(२) मनोदुष्प्रणिधान—दिल में खराब विचार करना।

(३) वचन दुष्प्रणिधान—आरंभ के वचन बोलना या सामायिक छूत्र ज्यादा कमती बोलना।

(४) अनवस्था—सामायिक का वक्त पर न करना, अथवा करके शांति न रखना।

(५) स्मृतिविहीन—सामायिक सूत्र पाठ बोला या नहीं अथवा सामायिक का काल पूरा हुआ या नहीं इस प्रकार स्मृति विहीन होकर शंकाशील बनना।

नियम—

प्रतिदिन——सामायिक करूंगा।

अथवा महीने में——और वर्ष में————सामायिक करूंगा।

देशावकाशिक व्रत—

स्वरूप—

पहले के व्रतों में जो नियम किया है उनमें संक्षेप करना अथवा छट्ठे व्रत में जाने आने का परिमाण किया है उसको उस दिन के लिये कम करके दो पांच कोश रखना, अथवा 'आज गांव के दरवाजे तक जाऊंगा, आगे नहीं' ऐसी धारणा करना उसको देशावकाशिक कहते हैं। यह देशावकाशिक १

दिन का १० सामायिक का और १ सामायिक का भी होता है, जैसा समय हो वैसा करे।

प्रतिज्ञा—

"मैं देवगुरु साक्षिक देशावकाशिक व्रत स्वीकार करता हूं। आजीवन धारणा मुजब यथाशक्ति देशावकाशिक व्रत करूंगा।

अतिचार—

(१) आनयन प्रयोग—अपनी धारी हुई भूमिका से बाहर की किसी चीज की जरूरत पड़ने पर मन में खयाल करे कि मेरे तो बाहर जाने का नियम है, चीज मंगवाऊं तो क्या हर्ज है ऐसी कल्पना से नियत भूमि से बाहर से कोई चीज मंगवाये तो पहला अतिचार।

(२) प्रेषण प्रयोग—अपनी नियमित (मुकरर की हुई) भूमि से कुछ चीज बाहर भेजे तो दूसरा अतिचार।

(३) शब्दानुपाती—अपनी नियमित भूमि से बाहर कोई जाता हो उसको शब्द द्वारा अथवा खुंखार कर बुलावे और अपने लिये कोई चीज मंगवाने का हुक्म करे तो तीसरा अतिचार।

(४) रूपानुपाती—नियम की भूमि से बाहर जाते किसी को देखकर हवेली विगैरह ऊंचे स्थान पर चढ़ कर अपना रूप बतावे, इस इरादे से कि वह मनुष्य अपने पास आ जाय,

३ वचन या दृष्टि का दोष जिसमें न टले उसको देशब्रह्मचर्य पौषध कहते हैं और सर्वथा ब्रह्मचर्य रखना उसको सर्व ब्रह्मचर्य पौषध कहते हैं।

४ सर्वथा व्यापार का त्याग करना यह सर्वअव्यापार पौषध और एकाद व्यापार खुला रहे वह देश अव्यापार पौषध है।

प्रतिज्ञा

"मैं देवगुरुसाक्षि पौषधोपवास व्रत स्वीकार करता हूं। धारणा मुजब यथाशक्ति पौषधोपवास करूंगा।"

अतिचार—

(१) अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहिय—सिज्जासंथारय—जिस पर शयन करे उस पथारी की पडिलेहणा न करे तो पहला अतिचार।

(२) अपमज्जियसंथारक—संथारा बराबर न पूजे जीवजयणा न रक्खे तो दूसरा अतिचार।

(३) अप्पडिलेहिय स्थंडिलभूमि—लघुनीति या बडी नीति की जगह बराबर दृष्टि से न देखे जीवरक्षा न करे तो तीसरा अतिचार।

(४) अपमज्जियपासवणपत्त—लघुनीति का कुंडा या पाला ठीक न पूजे तो चौथा अतिचार।

(५) पोसहनिहिनिरीय—पोषध में भूख लगने पर खाने की चिंता करे याने पोसह पारने के बाद अमुक चीज तयार

कर खाऊगा, स्नान करूगा, तैल लगाऊगा ऐसी कल्पना करे, तथा पौषध में विकथा करे और दोष न टाले तो पाचवा अतिचार लगता है।

नियम—

प्रतिवर्ष आठ पहर के——पोसह करूगा।
प्रति वर्ष चार पहर के——पोसह करूगा।

अतिथि सविभागव्रत—

स्वरूप—

पौषधोपवासव्रत के पारणे साधु मुनिराज को दान दकर पीछे खाना उसका नाम 'अतिथि सविभाग' व्रत है। पहले दिन जहा तक बन सके उपवास पूर्वक ८ पहर का पौषध करे, दूसरे दिन पारणा में एकासना कर मुनिराज को वहरावे और जितनी चीजें मुनि लेवे उतनी ही आप खावे यह अतिथिसविभाग का तात्पर्य हुआ।

दान देते वक्त दाता में ५ गुण होने चाहिये—१ हर्षाश्रु-इष्ट मनुष्य के मिलने पर जैसा हर्ष होता है वैसा हर्ष दान देते वक्त श्रावक को होवे, हर्ष के आसु आवें। २ रोमाच-दान देते वक्त शरीर के रोम खडे हो जावें। ३ बहुमान-मुनि को देख कर उनका बहुमान करे। (४) प्रियवचन-दान देता हुआ मधुर और विनय युक्त वचन बोले और ५ अनुमोदना-दान की बार बार प्रशसा करे। 'फिर कब ऐसा दान दूगा' ऐसी भावना

प्रतिमा—

"मैं इस गुरु साक्षिक अतिथि संविभाग व्रत स्वीकार करता हूं। यथाशक्ति मुनि को यथाशक्ति अतिथि संविभाग करूंगा।"

अतिचार—

(१) सचित्तनिक्षेप—आहार पर सचित्त वस्तु रख छोड़े, मन में सोचे 'यह आहार मुनि लेवेंगे नहीं लेकिन् निमंत्रण से मेरा व्रत पल जायगा, यह पहला अतिचार। (२) सचित्त पीहण—न देने की बुद्धि से आहार को सचित्त वस्तु से ढाक दे यह दूसरा अतिचार। (३) कालातिक्रम—गोचरी का समय टाल कर मुनि को आहार के लिये निमंत्रणा करे यह तीसरा अतिचार। (४) पर व्यपदेशमत्सर—दूसरा कोई निमित्त निकाल कर आहार जल्दी न देवे अथवा दूसरे की ईर्ष्या से दान देवे यह चोथा अतिचार (५) परवस्तुकथन—दान के वक्त अपनी वस्तु होने पर भी यह चीज दूसरे की है ऐसा कहकर न देवे यह पांचवा अतिचार है।

नियम—

प्रतिवर्ष——अतिथि संविभाग करूंगा।

इस तरह श्रावकों के सम्यक्त्वमूल बारह व्रतों का संक्षिप्त वर्णन ऊपर मुजब है। इसमें दिया हुआ व्रतों का स्वरूप समझ कर उस मुजब चलने की प्रतिज्ञा करनी चाहिये। प्रत्येक

व्रतके अतिचारों को समझ कर उनका त्याग करना चाहिये और धारण किये हुए नियमों को पालना चाहिये।

आशा है, इसे पढ़ कर श्रावकगण अपना कर्तव्य धर्म समझेंगे और उसे अंगीकार कर अपने मनुष्यजन्म की सफलता करेंगे।

४ तपस्या विधि—

वीशस्थानक तप विधि—

१ ॐ ह्रीँ नमो अरिहंताण। इस पद की नोकर वाली २०, खमासमण साथिया काउस्सग लोगस्स १२।

२ ॐ ह्रीँ नमो सिद्धाण। नो० २०, ख० सा० का० लो० ८।

३ ॐ ह्रीँ नमो पवयणस्स। नो० २०, ख० सा० का० लो० ४५।

४ ॐ ह्रीँ नमो आयरियाण। नो० २०, ख० सा० का० लो० ३६।

५ ॐ ह्रीँ नमो थेराण। नो० २०, ख० सा० का० का० लो० १०।

६ ॐ ह्रीँ नमो उवज्झायाण। नो० २०, ख० सा० का० लो० २५।

७ ॐ ह्रीँ [illegible] सव्वसाहूण। नो० २०, ख० सा० का० लो०

८ ॐ ह्रीँ नमो नाणस्स। नो० २०, ख० सा० लो० ५१।

९ ॐ ह्रीँ नमो दसणस्स। नो० २०, ख० सा० लो० ६७।

१० ॐ ह्रीँ नमो विनयसपन्नाण। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

११ ॐ ह्रीँ नमो चारित्तस्स। नो० २०, ख० सा० लो० ७०।

१२ ॐ ह्रीँ नमो बभवयधारीण। नो० २०, ख० सा० लो० ९।

१३ ॐ ह्रीँ नमो किरियाण। नो० २०, ख० सा० लो० २५।

१४ ॐ ह्रीँ नमो तवस्सीण। नो० २०, ख० सा० लो० ५०।

१५ ॐ ह्रीँ नमो गोयमस्स। नो० २०, ख० सा० लो० २८।

१६ ॐ ह्रीँ नमो जिणाण। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१७ ॐ ह्रीँ नमो चरणस्स। नो० २०, ख० सा० लो० १७।

१८ ॐ ह्रीँ नमो अपुव्वनाणस्स। नो २०, ख० सा० लो० ५।

१९ ॐ ह्रीँ नमो सुयनाणस्स। नो० २०, ख० सा० का० लो० ४५।

२० ॐ ह्रीँ नमो तित्थस्स । नो० २०, ख० सा० का० लो० ५।

यह तप वैशाख-आषाढ-मागसिर-फागुण इन चार महीनों में ग्रहण करना चाहिये, हर एक ओली दो महीने में और ज्यादा से ज्यादा ६ महीने में संपूर्ण करनी चाहिये, जिससे १० वर्ष में यह वीस थानक तप समाप्त हो जावे।

अष्टकर्म ओली विधि

(कर्म सूदन तप)

१ ज्ञानावरणीय-उपवास। खमासमण, काउस्सग्ग लोगस्स ५, 'ॐ ह्रीँ अनंतज्ञानगुणेभ्यो नमः' इसकी २० नोकरवाली गिने।

२ दर्शनावरणीय—एकासणा। खमासमण, काउस्सग्ग लोगस्स ९,'ॐ ह्रीँ अनंतदर्शनगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

३ वेदनीय—एकलसित्थु (एक दाणा खाना)। खमासमण, काउसग्ग लोगस्स २, 'ॐ ह्रीँ अव्याबाधगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

४ मोहनीय—एकलठाणु (एकही साथ आहार और जल लेना)। खमासमण, काउसग्ग लोगस्स २८, 'ॐ ह्रीँ यथाख्यातगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

५ आयु—एकदत्ति (एक बार दिया हुआ खाना)। खमासमण काउसग्ग लोगस्स ४, 'ॐ ह्रीँ अक्षयनिधिगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

६ नामकर्म—निवी। खमासमण काउसग्ग लोगस्स १०३, 'ॐ ह्रीँ अरूपिगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

७ गोत्रकर्म—आयंबिल। खमासमण काउसग्ग लोगस्स २, 'ॐ ह्रीँ अगुरुलघुगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

८ अंतराय—अष्ट कवल (सिर्फ आठ कवले खाने)। खमासमण, काउसग्ग लोगस्स ५, 'ॐ ह्रीँ अनंतवीर्यगुणेभ्यो नमः' नोकरवाली २०।

इसके उजमणे में चांदी का वृक्ष और सोने का कुठार (कुहाडा) भगवान् के आगे चढावे तथा पुस्तक पूजा कर मुनिराज को दान देवे।

रोहिणी तप विधि

सत्ताईस नक्षत्रों में चौथा नक्षत्र रोहिणी है। यह नक्षत्र जिस दिन हो उस दिन उपवास कर वासुपूज्य स्वामी की पूजा करे, तीनों वक्त प्रभात मध्यान्ह और संध्या समय देव वंदन करे, दोनों टंक प्रतिक्रमण करे, 'ॐ ह्रीँ श्रीवासुपूज्यजिनाय नमः' इस प्रकार वासुपूज्य स्वामी के नाम की २० नोकरवाली गिने। इस रीति से ७ वर्ष और ७ महीने तक

यह तप किया जाता है। अंत में उजमणे के समय अशोक वृक्ष युक्त श्रीवासुपूज्य स्वामी की प्रतिमा करा कर प्रतिष्ठापूर्वक मंदिर में स्थापन करावे, उसके आगे नैवेद्य १०८लड्डू चढ़ावे।

वर्धमान ओली की विधि

(वर्धमान आयंबिल तप)

प्रथम १ आयंबिल कर उपर १ उपवास, पीछे २ आयंबिल ऊपर १ उपवास, फिर त्रण आयंबिल ऊपर एक उपवास, इस क्रम से बढ़ते बढ़ते १०० आयंबिल उपर १ उपवास करने पर कुल तपस्या का हिसाब १०० उपवास और पांच हजार पचास आयंबिल होते हैं। पहली ५ ओलियाँ एक साथ की जाती हैं। इस तप की समाप्ति १४ वर्ष ३ महीने और २० दिनों में होती है। इस तप में 'ॐ ह्रीं नमो तिणाण।' इस पद की २० नोकरवाली गिने। साथिया, काउस्सग्ग लोगस्स १२ कर।

लघुपंचमी तप

पौष और चैत्रमास छोड़ कर अन्य किसी एक महीने में लघु पंचमी तप ग्रहण किया जाता है और शुदि तथा बदि पंचमी के दिन उपवास करते १ वर्ष में २४ पंचमियां होती हैं, इनके ऊपर १ पंचमी करने पर २५ पंचमियों का यह तप सम्पूर्ण होता है। अंत में उजमणा ज्ञानपंचमी के मुताबिक करें।

ज्ञानपचमी तप

कातिक शुदि पचमी से यह तप शुरू किया जाता है। हर एक महीने की शुदि पचमी को उपवास करते पाच वर्ष और पाच मास में ६५ उपवास होते हैं और इस तप की समाप्ति होती है।

इस तप में 'ॐ ह्रीं नमो नाणस्स' इस पद की २० माला गिने तथा साथिया काउसग्ग लोगस्स ५१ का करे। तप सपूर्ण होने पर इसके उजमणे में ज्ञान दर्शन और चारित्र के सर्व ५-५ उपकरण लावे और पैंतालीस आगमकी पूजा पढावे। साथ में यथा शक्ति साहमीवच्छल भी करे।

पैंतालीस आगम का तप

यह तप ४५ दिन का होता है। हमेशा एकासणा किया जाता है। तप सपूर्ण होने पर उजमणा वरघोडा तथा पूजाप्रभावनादिक करें और नदीसूत्र तथा भगवती सूत्र का रुपये और सोना महोर से पूजन करे। दूसरे सूत्रों का पूजन वासक्षेप तथा पैसे से करे। इसकी विधि नीचे मुजब है—

१ श्रीनदीसूत्रायनम । नोकरवाली २०, खमासमण साथिया काउसग्ग लोगस्स ५१।

२ श्रीअनुयोगद्वारसूत्राय नम । नोकरवाली २०, खमासमण, साथिया, काउसग्ग लोगस्स ६२।

३ श्रीदर्शवैकालिकसूत्राय नम । नोकरवाली २०, खमासमण, साथिया, काउसग्ग लोगस्स १४।

४ श्रीउत्तराध्ययनसूत्राय नमः। नोकरवाली २०, खमासमण, साथिया, काउसग्ग लोगस्स ३६।

५ श्रीओघनिर्युक्तिसूत्राय नम। नोकरवाली २०, खमासमण, साथिया, काउसग्ग लोगस्स १०।

६ श्रीआवश्यकसूत्राय नम। नो० २०, ख० सा० लो० ३२

७ श्रीनिशीथछेदसूत्राय नम.। नो० २०, ख० सा० लो० १६।

८ श्रीव्यवहारकल्पसूत्राय नम'। नो० २०, ख० सा० लो० २०।

९ श्रीदशाश्रुतस्कंधसूत्राय नम। नो० २०, ख० सा० लो० १९।

१० श्रीपंचकल्पछेदसूत्राय नम.। नो० २०, ख० सा० लो० १९।

११ श्रीजीतकल्पछेदसूत्राय नम। नो० २०, ख० सा० लो० ३५।

१२ श्रीमहानिशीथछेदसूत्राय नम। नो० २०, ख० सा० लो० ४२।

१३ श्रीचउसरणपइन्नयसूत्राय नम। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१४ श्रीआउरपच्चक्खाणसूत्राय नमः। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१५ श्रीभत्तपरिज्ञासूत्राय नम'। नो० २०, स्व० मा० लो० १०।

१६ श्रीसथारापइन्नयसूत्राय नम'। नो० २०, ख० मा० लो० १०।

१७ श्रीतदुलवेयालियसूत्राय नम'। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१८ श्रीचदाविजयपइन्नयसूत्राय नम'। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

१९ श्रीदेविन्दथुइपइन्नयसूत्राय नम। नो० २०, ख० मा० लो० १०।

२० श्रीमरणसमाधिसूत्राय नम'। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

२१ श्रीमहापचक्खाणसूत्राय नम। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

२२ श्रीगणिविज्जापइन्नयसूत्राय नम। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

२३ श्रीआचारागसूत्राय नम। नो० २०, ख० सा० लो० २५।

२४ श्रीसूयगडागसूत्राय नम। नो० २०, ख० सा० लो० २३।

२५ श्रीठाणागसूत्राय नम। नो० २०, ख० मा० लो० १०।

२६ श्रीसमवायागसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० १०४।

२७ श्रीभगवतीसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० ४२।

२८ श्रीज्ञाताधर्मकथागसूत्राय नम'। नो० २०, ख० सा० लो० १९।

२९ श्रीउपासकदशागसूत्रायनम'। नो० २०, ख० सा० लो० १०।

३० श्रीअंतगडदशागसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० १९।

३१ श्रीअणुत्तरोववाइयसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० ३२।

३२ श्रीप्रश्नव्याकरणसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० १०।

३३ श्रीविपाकागसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० २०।

३४ श्रीउववाइयसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० २३।

३५ श्रीरायपसेणीयसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० ४२।

३६ श्रीजीवाभिगमसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० १८

३७ श्रीपन्नवणाउपागसूत्राय नमः । नो० २०, ख० सा० लो० ३६ ।

३८ श्रीसूर्यपन्नत्तिसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० ५७ ।

३९ श्रीजम्बूद्वीपपन्नत्तिसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० ५० ।

४० श्रीचन्दपन्नत्तिसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० ५० ।

४१ श्रीकप्पवडंसियासूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० १० ।

४२ श्रीनिरयावलीसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० १० ।

४३ श्रीपुष्फचूलियासूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० १० ।

४४ श्रीवन्हिदशोपागसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० १० ।

४५ श्रीपुष्फियाउपागसूत्राय नम । नो० २०, ख० सा० लो० १० ।

पखवाडा तप विधि

सुदि एकम से पूनम तक एक ही साथ १५ उपवास करे, अगर ऐसा न बन सके तो प्रथम शुक्ल पक्ष की एकम का,

दूसरे शुक्ल पक्ष की दूज का तथा तीसरे शुक्ल पक्ष की तीज का एक एक उपवास कर अनुक्रम से पन्द्रह शुक्ल पक्ष मे तप सपूर्ण करे। त्रिकाल देववदन करे। मुनिसुव्रत भगवान् का स्तवन कहे। 'श्री मुनिसुव्रतसर्वज्ञाय नम' इस पद की २० नोकरवाली गिने। तप की समाप्ति के दिन चांदी का पालणा सुवर्ण पुतली तथा लड्डू का थाल जिन मदिर म चढावे स्नात्र पूजा भी पढ़ावे।

पौष दशमी तप की विधि

पौष दशमी के पहले दिन याने नवमी के दिन शक्कर के पानी का एकासणा करे, उस दिन सिर्फ गरम जल में शक्कर डाल कर पी लेवे, बाद दशमी को ठाण एकासणा याने भोजन और जल एक ही साथ लेवे, ऊपर चउविहार कर लेवे, तथा उस दिन जिनमदिर में पच कल्याणक की पूजा भणावे और 'पार्श्वनाथ अर्हते नम'' इस पद की बीस नवकरवाली गिने, फिर एकादशी को हमेशा के मुआफिक एकासणा करे। तीनों दिन सुबह शाम प्रतिक्रमण करे, तीनों टङ्क देव वदन करे, ब्रह्मचर्य पाले, जमीन पर सोवे।

इस रीति से यह तप दशवर्ष में पूर्ण होता है। तप की समाप्ति में ज्ञान दर्शन और चारित्र के दश दश उपकरण चढा कर उजमणा करे, अठाई महोच्छव कर साधर्मी वात्सल्य भी करें।

पञ्चमी तप विधि

इस तप में २० पुरुष अथवा २० स्त्रियाँ होती हैं।

पहले दिन—पाच जणा पांच उपवास करें, उस दिन 'मतिज्ञानाय नमः' इस पद की बीस नोकरवाली गिने और खमासमण साथिया काउस्सग्ग लोगस्स २८, तथा प्रदक्षिणा २८, और २८ श्रीफल चढ़ावे।

दूसरे दिन—दूसरे पाच जणा चार उपवास का पचक्खाण करे, उस दिन 'श्रुतज्ञानाय नमः' इस पद की २० माला गिने, खमासमण साथिया काउस्सग्ग लो० १४ का करे। तथा प्रदक्षिणा १४ देवे, १४ श्रीफल चढ़ावे।

तीसरे दिन—पाच जणा तीन उपवासका पचक्खाण करे, 'अवधिज्ञानाय नमः' इस पद की २० नोकरवाली गिने, ख मासमण साथिया काउसग्ग लोगस्स ६ करे तथा प्रदक्षिणा ६ देवे, श्रीफल ६ चढ़ावे।

चौथे दिन—पाच जणा दो उपवासका पचक्खाण करे, 'मन पर्यवज्ञानाय नमः' इस पद की २० माला गिने खमास मण साथिया काउसग्ग लोगस्स २ करे प्रदक्षिणा २ तथा श्रीफल २ चढ़ावे।

पांचवे दिन—पाच जणा एक उपवास करे, 'केवलज्ञानाय नमः' की २० माला गिने, खमासमण साथिया लोगस्स १ प्रदक्षिणा १ श्रीफल १ चढ़ावे। इन पांचों दिनों में ज्ञानपद

की पूजा पढ़ावे, रूपानाणे से पुस्तक की पूजा करे, पारणा के दिन ४५ आगम की पूजा भणावे ।

दशपच्चक्खाण विधि

१ उपवास—'श्रीअक्षयसम्यक्त्वाय नम ' नोकरवाली २०, साथिया लोगस्स खमासमण ६७ ।

२ एकासणा—'श्रीसम्यक्त्वाय नम ' नो० २०, ख० सा० लो० १७ ।

३ एकसिक्थ—(एक चावल खावे) 'श्रीकेवलनाणीनाथाय नम ' नो० २०, ख० सा० लो० ८ ।

४ नीवि—'श्री एकत्वगताय नम ' नो० २०, ख० सा० लो० २१ ।

५ एकदत्ती—(अनजान मनुष्य भोजन थाल मे पीरस कर कपडे से ढक कर रक्खे उतना ही खावे) 'श्रीमदंगताय नमः' नो० २०, ख० सा० लो० ३१ ।

६ परघरिया एकासणा । 'श्री गौतमस्वामिने नम ' नो० २०, ख० सा० लो० ४५ ।

७ एकलठाणा (हृदय पर्यंत थाली रखे सारा हाथ हिलाये विना भोजन करे) 'अक्षयस्थितये नम ' नो० २०, ख० सा० लो० २८ ।

८ एकासणा (एक कवल खावे) 'श्रीमनंताय नम ' नो० २०, ख० सा० लो० ९० ।

९ एक घीका दूसरा जलका दो बरतन कपडे से ढक कर बालक के पास कपडा दूर करावे, यानि दो बरतनो में से एक बरतन खुला करावे, घी आवे तो एकासणा और जल आवे तो आंबिल करे। 'श्रीमुनीश्वराय नमः' नो०, २०, ख० सा० लो० १३।

१० आंबिल[1] (सिर्फ खाखरे खाना) 'श्रीअक्षयनिधिनाथाय नमः' नो० २०, ख० सा० लो० १२।

चोईस तीर्थंकरो के कल्याणक देखने का कोष्ठक

कार्तिक वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरेण तिथि
३	वदि ५	केवलज्ञान	
२२	वदि १२	च्यवन	
६	,, १२	जन्म	
६	,, १३	दीक्षा	(१२)
२४	,, ३०	मोक्ष	
९	शुदि ३	केवल	(२)
१८	,, १२	केवल	

मगसिर वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
९	वदि ५	जन्म

१ दूसरी विधिमें ५वा पद कवल ६ठा पकलठाणा ७वा एकदत्ती, ८वा आयंबिल ९वा एकघरा और १०वा लूखीनिवी, इस प्रकारसे तप लिखे हैं।

९	वदि ६	दीक्षा
२४	,, १०	दीक्षा
६	,, ११	मोक्ष
१८	शुदि १०	जन्म
१८	शुदि १०	मोक्ष
१८	शुदि ११	दीक्षा
१९	,, ११	जन्म
१९	,, ११	दीक्षा
१९	,, ११	केवल
२१	,, ११	केवल
३	,, १४	जन्म
३	,, १५	दीक्षा

पौष वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
२३	वदि १०	जन्म
२३	वदि ११	दीक्षा
८	वदि १२	जन्म
८	वदि १३	दीक्षा
१०	वदि १४	केवल
१३	शुदि ६	केवल
१६	शुदि ९	केवल
२	शुदि ११	केवल

४	शुदि १४	केवल
१५	शुदि १५	केवल

माघ वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
६	वदि ६	च्यवन
१०	वदि १२	जन्म
१०	वदि १२	दीक्षा
१	वदि १३	मोक्ष
११	वदि ३०	केवल
४	शुदि २	जन्म
१२	शुदि २	केवल
१५	शुदि ३	जन्म
१३	शुदि ३	जन्म
१३	शुदि ४	दीक्षा
२	शुदि ८	जन्म
२	शुदि ९	दीक्षा
४	शुदि १२	दीक्षा
१५	शुदि १३	दीक्षा

फागुण वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक	मतान्तरण
७	वदि ६	केवल	
७	वदि ७	मोक्ष	

८	वदि ७	केवल	
९	वदि ९	च्यवन	
१	वदि ११	केवल	
२०	वदि १२	केवल	
११	वदि १२	जन्म	
११	वदि १३	दीक्षा	(३०)
१२	वदि १४	जन्म	
१२	वदि ३०	दीक्षा	
१८	शुदि २	च्यवन	(१)
१९	शुदि ४	च्यवन	
३	शुदि ८	च्यवन	
२०	शुदि १२	दीक्षा	
१९	शुदि १२	मोक्ष	

चैत्र वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
२३	वदि ४	च्यवन
२३	वदि ४	केवल
८	वदि ५	च्यवन
१	वदि ८	जन्म
१	वदि ८	दीक्षा
१७	शुदि ३	केवल
१४	शुदि ५	मोक्ष

२	शुदि ५	मोक्ष
३	शुदि ५	मोक्ष
५	शुदि ९	मोक्ष
५	शुदि ११	केवल
२४	शुदि १३	जन्म
६	शुदि १५	केवल

वैशाख वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
१७	वदि १	मोक्ष
१०	वदि २	मोक्ष
१७	वदि ५	दीक्षा
१०	वदि ६	च्यवन
२१	वदि १०	मोक्ष
१४	वदि १३	जन्म
१४	वदि १४	दीक्षा
१४	वदि १४	केवल
१७	वदि १४	जन्म
४	शुदि ४	च्यवन
१५	शुदि ७	च्यवन
४	शुदि ८	मोक्ष
५	शुदि ८	जन्म
५	शुदि ९	दीक्षा

२४	शुदि १०	केवल
१३	शुदि १२	च्यवन
२	शुदि १३	च्यवन

जेठ वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
११	वदि ६	च्यवन
२०	वदि ८	जन्म
२०	वदि ९	मोक्ष
१६	वदि १३	जन्म
१६	वदि १३	मोक्ष
१६	वदि १४	दीक्षा
१५	शुदि ५	मोक्ष
१२	शुदि ९	च्यवन
७	शुदि १२	जन्म
७	शुदि १३	दीक्षा

आषाढ वदि शुदि

तीर्थंकर	तिथि	कल्याणक
१	वदि ४	च्यवन
१३	वदि ७	मोक्ष
२१	वदि ९	दीक्षा
२४	शुदि ६	च्यवन
२२	शुदि ८	मोक्ष
	शुदि १४	मोक्ष

अध्ययन २३, मूलश्लोक २१००, शीलागाचार्यकृत टीका १२८५० तथा चूर्णि १०००० श्लोक है, भद्रबाहुकृत निर्युक्ति की गाथा २०८ श्लोक २५० । इस पर भाष्य नहीं है, सर्व श्लोक २५२०० है ।

३ ठाणागसूत्र-इस में अनेक तात्त्विक बातो की गिनती और उनकी व्याख्या दी है ।

इस के अध्ययन १० है, मूलश्लोक ३७७० है, स ११२० म अभयदेवसूरि की बनाई हुई टीका १५२५० श्लोक[1] प्रमाण है। सर्वश्लोक १९०२० है।

४ समवायागसूत्र-इस में भी ठाणाग का सा ही वर्णन है, परन्तु इसमें दश के उपरकी सख्यावाली बातोंका भी वर्णन है। इस के मूलश्लोक १६६७, टीका अभयदेवसूरि की श्लोक ३७७६ प्रमाण है । चूर्णि पूर्वाचार्य की ४०० श्लोक प्रमाण । सवश्लोक ५८४३ है ।

५ विवाहपन्नत्ति (भगवती)-इसम गौतमस्वामी के भिन्न २ विषयक ३६००० प्रश्न और महावीर के दिये हुए उत्तरो का वर्णन है। इसके ४१ शतक हैं। मूल श्लोक १५७५२, टीका स० ११२८ मे अभयदेवसूरि की की हुई द्रोणाचार्य सशोधित १८६१६ श्लोक की है। चूर्णि ४००० श्लोक की पूर्वाचार्यकृत है। कुल सख्या ३८३६८ है। तथा इसकी

---

१ ताडपत्रकी प्राचीन सूचीमें टीका का प्रमाण १०२४० और सर्वसख्या १९०१० श्लोक बतायी है ।

लघुवृत्ति सं० १५६८ में उपाध्याय ज्ञानशेखर की की हुई १२००० श्लोक प्रमाण है।

६ ज्ञाता धर्मकथांग—इसमें जुदे जुदे पुरुषों और स्त्रियों की कथायें हैं। इसके अध्ययन १९, श्लोक ५५००, टीका अभयदेवसूरि की श्लोक ४२५२ प्रमाण है। सर्व संख्या इस की ९७५२ श्लोक है।

७ उपासकदशांग—इसमें आनन्द कामदेव आदि १० श्रावकों के चरित्र हैं। अध्ययन १०, मूल श्लोक ८१२, टीका अभयदेवसूरि की ९०० श्लोक प्रमाण, और कुल संख्या १७१२ है।

८ अंतगडदशांग—इसमें महावीर भगवान् के जो खास खास मुनि मोक्ष गये हैं उनका वर्णन है। इसके अध्ययन ९०, मूल श्लोक[१] ९००, टीका अभयदेवसूरि की श्लोक ३०० की है। कुल श्लोक १२००।

९ अणुत्तरोववाइ-इसमें जो मुनि अनुत्तर विमान में गये हैं उनका वर्णन है। इसके अध्ययन ३३, श्लोक १९२, टीका अभयदेव सूरि की श्लोक १००। कुल श्लोक २९२।

१० प्रश्न व्याकरण-इसमें आश्रव और संवर का वर्णन है। अध्ययन १०, श्लोक ८२५०, टीका अभयदेवकी श्लोक ४६००। कुल संख्या ५८५०।

---

१ ताडपत्रीय सूची में मूल श्लोक ८९० बताये हैं।

११ विपाकसूत्र-इसमें सुख दु ख या कर्मफल भुगतने सबधी अधिकार है, इसके अध्ययन २०, श्लोक १२१६, अभयदेवसूरि टीका श्लोक ९००, सर्व श्लोक २११६, है।

कुल ग्यारह अग की मूल सख्या ३५६५९ तथा टीका ७३५४८, चूर्णि २२७००, निर्युक्ति ७००, मिल कर १३२६०३ श्लोक है[1], इसमें आचाराग और सुयगडाग की टीका शीलागाचार्य कृत है, बाकी नव अग की टीकायें अभयदेवसूरि कृत है। इसी लिये इनका नाम 'नवागवृत्तिकार अभयदेवसूरि' जैनसघ म मशहूर है।

१२ बारह उपाग सूत्र

१ उववाइ सूत्र-इसम कोणिक राजा महावीर स्वामी के दर्शनार्थ गया उसका वर्णन है, तथा स्वर्ग में कौन कहा उत्पन्न हो सकता है उसका निरूपण है। यह आचाराग प्रतिबद्ध उपाग है। मूल सख्या १२००, अभयदेव टीका श्लोक ३१२५, और कुल सख्या ४३२५ श्लोक है।[2]

२ रायप्पसेणीय-पार्श्वनाथ सतानीय केशीकुमार श्रमण ने प्रदेशी राजा को नास्तिक मत छुडाकर आस्तिक धर्म म लाया उसका तथा वही प्रदेशी गुजर कर सूर्याभ देव होकर वापस

१ ताडपत्रीय सूची में अगों की श्लोक सख्या १३२४८६ लिखी है।

२ ताडपत्रीय सूची में सूत्र श्लोक सख्या ११६७ और सर्व सख्या ४२९२ लिखी है।

महावीर प्रभु के पास वदन को आया उसका वर्णन है। यह सुयगडागप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक २०७८, मलयगिरि टीका श्लोक ३७०० कुल संख्या ५७७८ है।

३ जीवाभिगम—इसमें जीव अजीव सबधी वर्णन है। यह ठाणागप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक ४७००, मलयगिरि टीका १४०००, लघुवृत्ति ११०००, चूर्णि १५०० और सर्व संख्या ३१२०० है।

४ पन्नवणा—इसमें जैन मान्य अनेक विषयों का वर्णन है। यह समवायागप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक[1] ७७८७, मलयगिरि-टीका १६०००, हरिभद्रकृत लघुवृत्ति ३७२८ और सर्व संख्या २७५१५।

५ जम्बूद्वीप पन्नत्ति—इसमें जम्बूद्वीप का भूगोल वर्णन है। यह भगवतीप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक ४१४६, मलयगिरि-टीका १२०००, चूर्णि १८६०, कुल संख्या १८००६। ताडपत्रीय सूची में टीका का उल्लेख नहीं है।

६ चदपन्नत्ति—इसमें चद्र की गति तथा ग्रह नक्षत्रों का वर्णन है, यह ज्ञाताप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक २२००, मलयगिरि टीका ९४११, लघुवृत्ति १०००, कुल संख्या १२६११।

७ सूर्य पन्नत्ति[2]—इसमें सूर्य आदि ग्रहों का ही वर्णन है।

---

[1] ताडपत्रीय सूचीमें मूल ७००० और वृत्ति (टीका) २१००० श्लोकप्रमाण लिखी है। सर्व संख्या २१७२८ लिखी है।

[2] ताडपत्रीय सूची में चद्रप्रज्ञप्ति-सूर्यप्रज्ञप्ति का मूल ३५००, वृत्ति ९००० और सर्व संख्या १२५०० श्लोक बताया है।

यह भी ज्ञातप्रतिबद्ध है। मूल श्लोक २२००, मलयगिरि-टीका ९०००, चूर्णि १०००, कुल सख्या १२२००।

८ कप्पिया—इसमें १० राजकुमार अपने ओरमान भाई राजा कोणिक के साथ मिलकर अपने नाना वैशाली नगरी के राजा चेटक (चेडा) के सामने युद्ध में उतरे, वहा दशों मारे गये, मर कर नरक में गये इत्यादि वर्णन है। इसके अध्ययन १० हैं।

९ कप्पवडसिया—इसमें राजा श्रेणिक के पोते राजकुमारों ने दीक्षा ली और जुदे जुदे स्वर्गो में गये उसका वर्णन है। इसके अध्ययन १० हैं।

१० पुप्फिया—इसमें जिन देवताओं ने महावीर की पूजा की उनके पूर्व जन्म का वर्णन है। इसके अध्ययन १० हैं।

११ पुप्फचूलिया—इसमें भी ऊपर जैसी ही कथायें हैं। इसके अध्ययन १ हैं।

१२ वन्हिदसा—इसमें नेमिनाथ ने १० यदुवशी राजाओं को प्रतिबोध देकर जैन बनाया उसका वर्णन है। इसके अध्ययन १० हैं।

उपर्युक्त पाचो उपागों का समुच्चित नाम 'निरयावली' है। इनकी अध्ययन सख्या ५२ है। वे यथाक्रम उपासकदशा गादिक पाच अगप्रतिबद्ध हैं। इन पाचो की मिल कर श्लोक सख्या ११०९ है इन पाचों की वृत्ति चद्रसूरि कृत ७०० श्लोक कुल सख्या १८०९ है। इन १२ उपागो की मूल स-

ख्या २५८२०, टीका ६७९३६, लघुटीका ६८२८, चूर्णि ३३६० कुल संख्या १०३५४४ है[1]।

१० पयन्ना

१ चउमरण पयन्नो–अरिहंत, सिद्ध, साधु, केवली भाषित धर्म, इन चार शरणों का अधिकार है। गाथा ६३ है।

२ आउरपच्चक्खाण–अंत समय में अभिग्रह पचक्खाण आदि कराने का अधिकार है। गाथा ८४।

३ भक्तपरिज्ञा–इसमें आहार पानी त्याग करने संबंधी अभिग्रह की विधि है। गाथा १७२ है[2]।

४ संथारगपयन्नो–इसमें अंत समय संथारा लेने का अधिकार या जिन्होंने संथारा लिया है उनका वर्णन है। गाथा १२२ है[3]।

५ तंदुलवेयाली पयन्नो–गाथा ४००, इसमें गर्भ में जीवकी उत्पत्ति कैसे होती है इत्यादि वर्णन है।

६ चंदाविज्जगपइन्नो–गाथा ३१०, इसमें गुरुशिष्य के गुण प्रयत्न निग्रह का वर्णन है।

७ देविंदत्थओ पइन्नय—इस में स्वर्ग के इंद्रों की गिनती है। गाथा २०० है।

---

१ ताडपत्रीय सूची में बारह उपांगों की सर्व श्लोक संख्या केवल ९००१३ निनानवे हजार तेरह लिखी है।

२ ताडपत्रीय सूची में गाथा १७० बताई है।

३ ताडपत्रीय सूची में गाथा १२० बताई है।

८ गणिविज्जा पइन्नय—इस में ज्योतिष की चर्चा है। गाथा १०० हैं।

९ महापचक्खाण—इस में आराधना का अधिकार है। गाथा १३४।

१० मरणसमाधि—अंत समय में शांतिपूर्वक मरण होना चाहिये, उस का वर्णन है। गाथा ७२०।

इन १० पइन्नों की गाथायें २३०५ हुई हर एक को एक एक अध्ययन समझना चाहिये।

६ छेद सूत्र

'छेद सूत्रों' का मतलब है 'दंडनीति शास्त्र'। जैसे राज्य व्यवस्था के लिये कानून ग्रंथ होते हैं उसी तरह साधुओं को कोई दोष अपराध लगे उस का दंड प्रायश्चित्त विधान करने वाले 'छेदसूत्र' हैं। साधु समाज की व्यवस्था के लिये ये ही धर्मकानून ग्रंथ हैं। इन के मुताबिक चलने से साधुओं का संघ शासन व्यवस्थित रीति से चलता रहता है।

१ निशीथ—उद्देशक २०, मूल पुरानी सूची में ८१५ श्लोक हैं। इस का लघुभाष्य ७४०० श्लोक, चूर्णि २८००० श्लोक और बड़ा भाष्य १२००० श्लोक हैं[१]। कुल संख्या ४८२१५ है।

२ महानिशीथ—अध्ययन १३, मूल श्लोक ४५०० हैं मतांतरे इस की तीन वाचनायें हैं—१ लघुवाचना श्लोक

[१] ताडपत्रीय सूची में इस भाष्य का उल्लेख नहीं है।

४२००, २ मध्यम वाचना श्लोक ४५००, ३ बडी वाचना श्लोक ११८०० हैं[1]।

३ बृहत्कल्प—उद्देशक २४, मूल श्लोक ४७३, इस की वृत्ति सख्या १३३२ की साल में बृहच्छालीय श्रीक्षेमकीर्ति सूरिकृत ४२००० श्लोक है, भाष्य १२०००, लघुभाष्य ८०००, चूर्णि १४३२५, कुल सख्या ७६७९८ हैं[2]।

४ व्यवहार—उद्देशक १०, मूल श्लोक ६००, मलयगिरि टीका श्लोक ३३६२५, चूर्णि १०३६१, भाष्य ६०००, कुल सख्या ५०५८६ हैं[3]।

पचकल्प—अधिकार १६, मूल श्लोक ११३३, चूर्णि २१३०, भाष्य ३१२५, कुल ६३८८ और इस में गाथा सग्रह २०० हैं[4]।

---

१ ताडपत्रीय सूची में महानिशीथ की तीन वाचनाओं के श्लोक क्रमश ३८००, ४२०० और ८' ०० लिखे हैं।

२ ताडपत्रीय सूची में मूल ४७३, भाष्य ८०००, सामान्य चूर्णि १४०००, विशेष चूर्णि १००००, बृहद्भाष्य १३००० और सर्वसख्या ८' ४७३ श्लोक की लिखी है।

३ ताडपत्रीय सूची में सूत्र ३७३, भाष्य ६०००, चूर्णि १०३६१, वृत्ति ३३००० और सर्वसख्या ४९७३४ श्लोक लिखा है।

४ ताडपत्रीय सूची में मूल के स्थान निर्युक्ति शब्द है। चूर्णि की २१३१, भाष्यकी २१३० और सर्व सख्या ५३९४ श्लोक प्रमाण लिखी है।

५ दशाश्रुतस्कंध—जिस का ८ वां अध्ययन कल्पसूत्र है, मूल श्लोक १८३५, चूर्णि २२२५, निर्युक्ति १६८ श्लोक, कुल ४२४८।

६ जीतकल्प (१)—मूल १०८, टीका १२०००, तथा सेनकृत चूर्णि १००० श्लोक, भाष्य ३१२४, कुल १६२३२ श्लोक है। इस की चूर्णि का व्याख्यान ११२० है। लघु वृत्ति श्री साधुरत्नकृत श्लोक ५७००, तथा तिलकाचार्यकृत वृत्ति १५०० श्लोक है।

६ साधु जीतकल्प (२)—मूल श्लोक ३७५, वृत्ति धर्मघोषसूरि कृत २६५०।

४ मूल सूत्र

१ आवश्यक सूत्र (१)—मूल १२५ गाथाएँ, टीका हरिभद्रसूरि कृत २२०००, निर्युक्ति भद्रबाहुकृत ३१००, चूर्णि १८०००, तथा दूसरी आवश्यकवृत्ति(चतुर्विंशति स्तव) २२००० है, इस की लघुवृत्ति तिलकाचार्य कृत १२३२१ श्लोक, अञ्चलगच्छाचार्य कृत दीपिका १२०००, भाष्य ४०००, आवश्यक टिप्पण मलधारी हेमचन्द्रसूरि कृत ४६००, सब मिलाकर ९८१४६

२ ताडपत्रीय सूची में मूल १८३० चूर्णि २२५ और सवसंख्या ४२२३ श्लोक लिखी है।

२ ताडपत्रीय सूची में जीतकल्प मूल के १०८ श्लोकों का उल्लेख नहीं है। यहां सर्व संख्या १६१२४ है।

२ ताडपत्रीय सूची में मूल के १०० पर सौ श्लोक कहे हैं।

श्लोक, तथा निर्युक्ति की टीका २२५०० हरिभद्रकृत है। ताडपत्रीय सूची में विशेषावश्यकभाष्य पाक्षिक सूत्र और इन की टीका आदि मिला कर आवश्यकसूत्र का श्लोक प्रमाण १२८६५० लिखा है।

विशेषावश्यक भाष्य (२)—यह सूत्र आवश्यक का विशेष भाष्य है। मूल भाष्य ५००० जिनभद्रगणिक्षमाश्रमणकृत है। लघुवृत्ति १४००० श्लोक की ग्रथ के अंत में कोट्याचार्यकृत लिखी है और सूची में द्रोणाचार्य का नाम लिखा है। बडी वृत्ति मलधारी हेमचद्र कृत २८००० श्लोक प्रमाण है।

पक्खीसूत्र (३)—मूल श्लोक ३६०, टीका सख्या ११८० में यशोदेवसूरिने की है जिस के श्लोक २७०० हैं, चूर्णि ४०० श्लोक हैं।

यतिप्रतिक्रमणसूत्रवृत्ति (४)—श्लोक ६०० है।

२ दशवैकालिक–इस में साधु जीवन के नियम लिखे हैं। यह शय्यभवसूरिकृत है। मूल श्लोक ७०० (७५०)। अध्ययन १०। वृत्ति तिलकाचार्यकृत श्लोक ७०००। दूसरी वृत्ति हरिभद्रसूरिकृत श्लोक ६८१०, तथा मलयगिरिकृत वृत्ति श्लोक ७७००। चूर्णि ७५००। लघुवृत्ति ३७००। निर्युक्ति गाथा ४५०। लघुटीका सोमसुदरसूरि कृत ४२००। दूसरी टीका उपाध्याय

[१] ताडपत्रीय सूची में पाक्षिक सूत्र श्लोक ३०० और वृत्ति ३००० श्लोक की लिखी है।

इन म आवश्यक, आचाराग, सुयगडाग, दशवैकालिक उत्तराध्ययन तथा कल्पसूत्र इन छ की निर्युक्ति भद्रबाहु की बनाइ हुई मिलती है। निशीथभाष्य, बृहत्कल्पका लघुभाष्य तथा बडाभाष्य, व्यवहारभाष्य, जीतकल्पभाष्य, पचकल्पभाष्य और ओघनिर्युक्तिभाष्य ये ७ भाष्य पुराने आचार्यो के बनाये हुए ह।

आचाराग, सुयगडाग, भगवती, जबूद्वीपपन्नत्ति, आवश्यक, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, पन्नवीसूत्र, अनुयोगद्वार, नदी, निशीथ, बृहत्कल्प, व्यवहार, दशाश्रुतस्कन्ध, पचकल्प और जीतकल्प इन १३ सूत्रो की चूर्णिया प्राचीन आचार्योने बनाई है।

(७) ६३ शलाका पुरुष विचार

२४ तीर्थंकर

तीर्थंकरनाम	शरीरमान	आयुर्मान
१ ऋषभदेव	५०० धनुष	८४ लाख पूर्व
२ अजितनाथ	४५० धनुष	७२ लाख पूर्व
३ सभवनाथ	४०० धनुष	६० लाख पूर्व
४ अभिनदन	३५० धनुष	५० लाख पूर्व
५ सुमतिनाथ	३०० धनुष	४० लाख पूर्व
६ पद्मप्रभ	२५० धनुष	३० लाख पूर्व
७ सुपार्श्वनाथ	२०० धनुष	२० लाख पूर्व
८ चद्रप्रभ	१५० धनुष	१० लाख पूर्व

९ सुविधिनाथ	१०० धनुष	२ लाख पूर्व
१० शीतलनाथ	९० धनुष	१ लाख पूर्व
११ श्रेयांसनाथ	८० धनुष	८४ लाख वर्ष
१२ वासुपूज्य	७० धनुष	७२ लाख वर्ष
१३ विमलनाथ	६० धनुष	६० लाख वर्ष
१४ अनंतनाथ	५० धनुष	३० लाख वर्ष
१५ धर्मनाथ	४५ धनुष	१० लाख वर्ष
१६ शांतिनाथ	४० धनुष	१ लाख वर्ष
१७ कुंथुनाथ	३५ धनुष	९५ हजार वर्ष
१८ अरनाथ	३० धनुष	८४ हजार वर्ष
१९ मल्लिनाथ	२५ धनुष	५५ हजार वर्ष
२० मुनिसुव्रत	२० धनुष	३० हजार वर्ष
२१ नमिनाथ	१५ धनुष	१० हजार वर्ष
२२ नेमिनाथ	१० धनुष	१ हजार वर्ष
२३ पार्श्वनाथ	९ हाथ	१०० वर्ष
२४ महावीर	७ हाथ	७२ वर्ष

१२ चक्रवर्ती

नाम	गति	होने का समय।
१ भरतचक्रवर्ती	मोक्ष	ऋषभदेव के समय में।
२ सगर	मोक्ष	अजितनाथ के समय में।
३ मघवा	तीसरा स्वर्ग	१५ वा जिनके पीछे।
४ सनत्कुमार	,, स्वर्ग	१६ वा जिन के आगे।

५ शातिनाथ	मोक्ष	१६ वा खुद तीर्थंकर ही चक्री
६ कुथुनाथ	मोक्ष	१७ वा जिन खुद चक्री
७ अरनाथ	मोक्ष	१८ वा जिन खुद ,,
८ सुभूम	नरक	१८ वा जिन पीछे १९ के पहले
९ महापद्म	मोक्ष	२० वा जिन के समय में।
१० हरिषण	मोक्ष	नमिनाथ के समय म।
११ जयनामा	मोक्ष	२१ क और २२ के बीच म।
१२ ब्रह्मदत्त	नरक	२२ पीछे २३ के पहले।

९ वासुदेव

नाम	गति	होने का समय।
१ त्रिपृष्ठवासुदेव	नरक	११ वा जिन के समय म।
२ द्विपृष्ठवासुदेव	नरक	१२ वा जिनके समय में।
३ स्वयभू	नरक	१३ वा जिन के समय में।
४ पुरुषोत्तम	नरक	१४ वा जिन के ममय में।
५ पुरुषसिंह	नरक	१५ वा जिन के समय में।
६ पुरुषपुडरीक	नरक	१८ पीछे १९ के पहले।
७ दत्त	नरक	१८ पीछे १९ पहले।
८ लक्ष्मण	नरक	२० पीछे २१ के पहले।
९ कृष्ण	नरक	२२ वा के समय म।

९ प्रतिवासुदेव

१ अश्वग्रीव। २ तारक। ३ मोरक। ४ मधु। ५ निशुभ ६ बली। ७ प्रल्हाद। ८ रावण और ९ जरासध। क्रमश

ये नव प्रतिवासुदेव पूर्वोक्त नव वासुदेवों के समकालीन हैं। इन सभी की भी गति नरक है।

९ बलदेव

नाम	गति
१ अचल	मोक्ष
२ विजय	,,
३ भद्र	स्वर्ग
४ सुप्रभ	,,
५ सुदर्शन	मोक्ष
६ आनंद	मोक्ष
७ नंदन	,,
८ रामचंद्र	,,
९ बलराम	स्वर्ग

ये नव ही बलदेव नव वासुदेवों के भाई होने से वासुदेवों का समय ही इनका यथा क्रम समय है।

इन ६३ पुरुषों के पिता ५१ माता ६१ और जीव ५९ होते हैं इसका समन्वय यह है कि ९ वासुदेव और ९ बलदेव के पिता जुदे नहीं बल्के एक हैं जिस से ९ कम हुए, तथा शांतिनाथ कुंथुनाथ और अरनाथ ये तीनों तीर्थंकर हैं और चक्रवर्ती भी हैं इस से भी तीन कम हुए। पूर्वोक्त ९ और ३

मिलाने पर १२ हुए, ६३ म से १२ कम किये तो शेष ५१ पिता रहते हैं[1]।

माता के विषय में भी शाति कुंथु अर ये तीनों भगवान् हैं और चक्रवर्ती भी है जिससे इन की माता ३ हुई तथा महावीर स्वामी की माता देवानदा और त्रिशला दो हैं बाकी सब पुरुषों की मातायें भिन्न भिन्न हैं इस लिये सब को मिलाने पर मातायें ६१ होती हैं।

इसी तरह जीव के विषय में भी शाति कुंथु अर ये तीनों तीर्थंकर और चक्रवर्ती भी है इस लिये इन में से तीन जीव कम हुए, त्रिपृष्ट वासुदेव का और महावीर स्वामी का जीव एक है शेष सब पुरुषों के जीव भिन्न हैं उक्त ४ जीव ६३ में से कम करने पर जीव संख्या ५९ होती है।

१ यहा पर महावीर स्वामी के दो पिता (ऋषभदत्त और सिद्धार्थ) गिनने से पिताओं की संख्या ५२ भी होती है।



५२ बोल का नकशा

खुलासा

जो कि २४ तीर्थंकर विषयक ५२ बोल का नक्शा समझना कुछ भी मुश्किल नहीं है, तो भी बिलकुल अनजान मनुष्यों के लिये कुछ खुलासा लिख देना जरूरी है।

५२बोलका अर्थ है तीर्थंकरके साथ संबन्ध रखनेवाली५२बातें

कोई जानना चाहे कि कौन तीर्थंकर किस तिथि में किस स्वर्ग से च्युत हो कर माता की कुख में आये? किस नगरी में किस दिन उनका जन्म हुआ? उनके पिता और माता के नाम क्या थे? उनका जन्म नक्षत्र और जन्मराशि क्या है? उनकी जांघ में चिह्न क्या था? उनके शरीर की उंचाइ कितनी थी? आयुष्य कितना था? शरीर का वर्ण कैसा था? गृहस्थाश्रम में किस पद पर थे? विवाह किया था या नहीं? कितने पुरुषों के साथ गृहत्याग किया? किस नगरी में दीक्षा ली थी? इत्यादि कुल ५२ बातों का खुलासा उनके नामके आगे के ५२ कोठों में देखने से मिलेगा। जिस तीर्थंकर के विषय में उक्त बातों का खुलासा देखना हो उसके आगे के कोठे देखने चाहिये।

उदाहरण—कोई यह जानना चाहे कि भगवान ऋषभदेवके 'गणधर' कितने थे? तो उसे ऋषभदेव के नाम के आगे का २७वा कोठा देखना चाहिये, ता कि ज्ञात हो जायगा कि ऋषभ देव के 'गणधर' ८४ थे। इसी तरह सब बात देखनी चाहिये।

तीर्थंकर	१ च्यवनतिथि	२ विमान
१ ऋषभदेव	आषाढ वदि ४	सर्वार्थ सिद्ध
२ अजितनाथ	वैशाख सुदि १३	विजय विमान
३ संभवनाथ	फागुण सुदि ८	सातवा ग्रैवेयक
४ अभिनंदन	वैशाख शु ४	जयंत विमान
५ सुमतिनाथ	श्रावण शु २	" "
६ पद्मप्रभ	माघवदि ६	९ वा ग्रैवेयक
७ सुपार्श्वनाथ	भाद्रवा वदि ८	छट्ठा ग्रैवेयक
८ चंद्रप्रभ	चैत्र वदि ५	विजयंत
९ सुविधिनाथ	फागुण वदि ९	आनत देवलोक
१० शीतलनाथ	वैशाख व ६	प्राणत देवलोक
११ श्रेयांसनाथ	जेठ व ६	अच्युत
१२ वासुपूज्य	जेठ शु ९	प्राणत
१३ विमलनाथ	वैशाख शु १२	सहस्रार देवलोक
१४ अनंतनाथ	श्रावण व ७	प्राणत देवलोक
१५ धर्मनाथ	वैशाख शु ७	विजयविमान
१६ शांतिनाथ	भाद्रवा व ७	सर्वार्थसिद्ध
१७ कुंथुनाथ	श्रावण व ९	"
१८ अरनाथ	फागुण शु २	"
१९ मल्लिनाथ	फागुण शु ४	जयंत
२० मुनिसुव्रत	श्रावण शु १५	अपराजित
२१ नमिनाथ	आसोज शु १५	प्राणत स्वर्ग
२२ नेमिनाथ	कार्तिक व १२	अपराजित
२३ पार्श्वनाथ	चैत्र व ४	प्राणत स्वर्ग
२४ महावीर	आषाढ शु ६	प्राणत स्वर्ग

३ जन्मनगरी	४ जन्मतिथि	५ पिता
इक्ष्वाकुभूमि	चैत्र वदि ८	नाभिकुलकर
अयोध्या	माघ सुदि ८	जितशत्रु
सावत्थी	मृगसिर शु १४	जितारि
अयोध्या	माघ शु २	संवर राजा
"	वैशाख शु ८	मेघराजा
कौशाम्बी	कार्तिक वदि १२	धर राजा
बनारस	जेठ शु १२	प्रतिष्ठ राजा
चन्द्रपुरी	पोष वदि १२	महासेन
कान्दी	मृगशिर वदि ५	सुग्रीव
भद्दिलपुर	माघ व १२	दृढरथ
सिंहपुरी	फागुण व १२	विष्णु
चंपापुरी	फागुण व १४	वसुपूज्य
काम्पिल्यपुर	माघ शु ३	कृतवर्मा
अयोध्या	वैशाख व ३	सिंहसेन
रत्नपुरी	माघ शु ३	भानुराजा
गजपुर	जेठ व १३	विश्वसेन
"	वैशाख व १४	सूरराजा
"	मृगशिर शु० १०	सुदर्शन
मिथिला	मृगशिर शु ११	कुंभराजा
राजगृह	जेठ व ८	सुमित्र
मिथिला	श्रावण व ८	विजय राजा
सौरिपुर	श्रावण शु ५	समुद्रविजय
बनारस	पोष व १०	अश्वसेन
क्षत्रियकुंड	चैत्र शु १३	सिद्धार्थराजा

तीर्थंकर	६ माता	७ जन्मनक्षत्र
१ ऋषभदेव	मरुदेवी	उत्तराषाढा
२ अजितनाथ	विजया	रोहिणी
३ संभवनाथ	सेना	मृगशिर
४ अभिनंदन	सिद्धार्था	पुनर्वसु
५ सुमतिनाथ	मंगला	मघा
६ पद्मप्रभ	सुसीमा	चित्रा
७ सुपार्श्वनाथ	पृथिवी	विशाखा
८ चंद्रप्रभ	लक्ष्मणा	अनुराधा
९ सुविधिनाथ	रामाराणी	मूल
१० शीतलनाथ	नन्दा	पूर्वाषाढा
११ श्रेयांसनाथ	विष्णु	श्रवण
१२ वासुपूज्य	जया	शतभिषा
१३ विमलनाथ	श्यामा	उत्तराभाद्रपद
१४ अनंतनाथ	सुयशा	रेवती
१५ धर्मनाथ	सुव्रता	पुष्य
१६ शांतिनाथ	अचिरा	भरणी
१७ कुंथुनाथ	श्रीराणी	कृत्तिका
१८ अरनाथ	देवी	रेवती
१९ मल्लिनाथ	प्रभावती	अश्विनी
२० मुनिसुव्रत	पद्मावती	श्रवण
२१ नमिनाथ	विप्रा	अश्विनी
२२ नेमिनाथ	शिवादेवी	चित्रा
२३ पार्श्वनाथ	वामा	विशाखा
२४ महावीर	त्रिशला	उत्तराषाढा

८ जन्मराशि	९ लाछन	१० शरीरमान
धन	वृषभ (बैल)	५०० धनुष
वृष	हाथी	४५० ,,
मिथुन	घोडा	४०० ,,
मिथुन	मर्कट (वानर)	३५० ,,
सिंह	क्रौंच (कुञ्जा)	३०० ,
कन्या	कमल	२५० ,
तुला	स्वस्तिक	२०० ,,
वृश्चिक	चंद्रमा	१५० ,,
धन	मगरमच्छ	१०० ,,
धन	श्रीवत्स	९० ,,
मकर	गैंडा	८० ,,
कुंभ	भैंसा	७० ,,
मीन	वराह (सुअर)	६० ,,
मीन	सिंचाणा (बाज)	५० ,,
कर्क	वज्र	४५ ,
मेष	हिरण	४० ,,
वृष	बकरा	३५ ,
मीन	नंद्यावर्त	३० ,,
मेष	कलश	२५ ,,
मकर	काचबा (कच्छप)	२० ,,
मेष	नीलकमल	१५ ,,
कन्या	शंख	१० हाथ
तुला	सर्प	९ ,,
कन्या	सिंह	७ ,,

तीर्थंकर	११ आयुर्मान	१२ शरीरवर्ण
१ ऋषभदेव	८४ लाख पूर्व	पीलावर्ण
२ अजितनाथ	७२ ,,	पीला
३ संभवनाथ	६० ,,	,,
४ अभिनंदन	५० ,,	,,
५ सुमतिनाथ	४० ,,	,,
६ पद्मप्रभ	३० ,,	लाल
७ सुपार्श्वनाथ	२० ,,	पीला
८ चंद्रप्रभ	१० ,,	सफेद
९ सुविधिनाथ	२ ,,	,,
१० शीतलनाथ	१ ,,	पीला
११ श्रेयांसनाथ	८४ लाख वर्ष	,,
१२ वासुपूज्य	७२ ,,	,,
१३ विमलनाथ	६० ,,	,,
१४ अनंतनाथ	३० ,,	,,
१५ धर्मनाथ	१० ,,	,,
१६ शांतिनाथ	१ ,,	,,
१७ कुंथुनाथ	९५००० वर्ष	,,
१८ अरनाथ	८४००० वर्ष	
१९ मल्लिनाथ	५५००० वर्ष	नीला
२० मुनिसुव्रत	३०००० वर्ष	श्याम
२१ नमिनाथ	१०००० वर्ष	पीला
२२ नेमिनाथ	१००० वर्ष	श्याम
२३ पार्श्वनाथ	१०० वर्ष	नीला
२४ महावीर	७२ वर्ष	पीला

१३ पदवी	१४ विवाह	१५ साथ दीक्षा
राजपदवी	परणे	४००० साथ
,	परणे	१००० ,
,,	,	,,
राना		,, ,,
,,	,	,
,,	,	, ,
,,	,	,
,,		,
,,		,,
,,		, ,,
,		, ,
कुमार		६०० ,
राना		१००० ,,
,,		, ,,
,	,	, ,
चक्रवर्ती		
,,	,	,
,,		, ,,
कुमार	नहीं परणे	३०० ,
राना	परणे	१००० ,
,,		,, ,
कुमार पदवी	नहीं परणे	,, ,,
कुमार पदवी	,,	३०० ,,
,,	परणे	अकेला

तीर्थंकर	१८ दीक्षानगरी	१७ दीक्षातप
१ ऋषभदेव	अयोध्या	२ उपवास
२ अजितनाथ	,	,, ,,
३ सम्भवनाथ	सावत्थी	,, ,
४ अभिनंदन	अयोध्या	,, ,,
५ सुमतिनाथ		एकाशन
६ पद्मप्रभ	कौशाम्बी	२ उपवास
७ सुपार्श्वनाथ	बनारस	,, ,,
८ चंद्रप्रभ	चंद्रपुरी	,, ,,
९ सुविधिनाथ	काकंदी	,, ,,
१० शीतलनाथ	भद्दिलपुर	,, ,
११ श्रेयांसनाथ	सिंहपुरी	, ,
१२ वासुपूज्य	चंपापुरी	१ ,,
१३ विमलनाथ	कंपिलपुर	२ ,
१४ अनंतनाथ	अयोध्या	,, ,
१५ धर्मनाथ	रत्नपुरी	, ,,
१६ शांतिनाथ	गजपुर	, ,
१७ कुंथुनाथ	,	, ,,
१८ अरनाथ	,,	,,
१९ मल्लिनाथ	मिथिला	३ उपवास
२० मुनिसुव्रत	राजगृह	२ उपवास
२१ नमिनाथ	मिथिला	, ,
२२ नेमिनाथ	द्वारिका	,,
२३ पार्श्वनाथ	बनारस	३ उपवास
२४ महावीर	क्षत्रियकुंड	२ उपवास

१८ प्रथमआहार	१९ पारणा स्थान	२० कितने दिनसे पारणा
इक्षुरस	श्रेयांस के घर	१ वर्ष बाद
खीर	ब्रह्मदत्त के घर	२ दिन बाद
,,	सुरेन्द्रदत्त के घर	,,
,,	इन्द्रदत्त के घर	
,,	पद्म के घर	,, ,
,,	सोमदेव के घर	,
,,	माहेन्द्र के घर	,
,	सोमदत्त के घर	,
,	पुष्य के घर	,,
,	पुनर्वसु के घर	,
,,	नंद के घर	
,,	सुनंद के घर	,
,,	जय राजा के घर	, ,,
,	विजयराजा के घर	, ,
	धर्मसिंह के घर	,, ,,
,	सुमित्र के घर	, ,,
,,	व्याघ्रसिंह के घर	,, ,
,,	अपराजित के घर	,, ,,
,	विश्वसेन के घर	,, ,
,,	ब्रह्मदत्त के घर	, ,,
,	दिन्नकुमार के घर	,, ,,
	वरदिन्न के घर	,, ,,
,	धन्य के घर	,, ,,
,,	बहुल ब्राह्मण के घर	,, ,,

तीर्थंकर	२६ ज्ञानतिथि	२७ गणधर
१ ऋषभदेव	फागुण वदि ११	८४ गणधर
२ अजितनाथ	पौष शु ११	९५ ,,
३ संभवनाथ	कार्तिक वदि ५	१०२ ,,
४ अभिनन्दन	पौष शु १४	११६ ,,
५ सुमतिनाथ	चैत्र शु ११	१०० ,,
६ पद्मप्रभ	चैत्र शु १५	१०७ ,,
७ सुपार्श्वनाथ	फागुण वदि ६	९५ ,,
८ चन्द्रप्रभ	फागुण व ७	९३ ,,
९ सुविधिनाथ	कार्तिक शु ३	८८ ,,
१० शीतलनाथ	पौ व १४	८१ ,,
११ श्रेयांसनाथ	माघ व ३०	७६ ,,
१२ वासुपूज्य	माघ शु २	६६ ,,
१३ विमलनाथ	पौ० शु ६	५७ ,,
१४ अनन्तनाथ	वैशाख व १४	५० ,,
१५ धर्मनाथ	पौष शु १५	४३ ,,
१६ शान्तिनाथ	पौष शु १०	३६ ,,
१७ कुन्थुनाथ	चैत्र शु ३	३५ ,,
१८ अरनाथ	कार्तिक शु १२	३३ ,,
१९ मल्लिनाथ	मृगशिर शु ११	२८ ,,
२० मुनिसुव्रत	फागुण व १२	१८ ,,
२१ नमिनाथ	मृगशिर शु ११	१७ ,,
२२ नेमिनाथ	आसोज व ३०	११ ,,
२३ पार्श्वनाथ	चैत्र व ४	१० ,,
२४ महावीर	वैशाख शु १०	११ ,,

ग्रन्थ में जो २४ तीर्थंकरों का ही शिलावृक्ष संयोग लिखा है

३३ केवली	३४ मन पर्यवज्ञानी	३८ चौदहपूर्वी
२००००	१२७५० म० १२६५०	[illegible]
२२००० (१)	१२२५० (२)	३७२०
१ ०००	१२१५०	२१५०
१४०००	११६ ०	[illegible]
१३०००	१०४' ०	२४००
१२०००	१०३००	२३००
११०००	९१५०	२०३०
१००००	८०००	२०००
७१००	७५००	११ ००
७०००	७-००	१४००
६' ००	६०००	१३००
६०००	६५०० म० शा०(३) ‘०००	१२००
५५००	५५००	११००
५०००	५०००	१०००
४१००	४५००	९००
४३००	४०००	८००
३२०० म० २२००	३३४०	६७०
२८००	२५५१	६१०
२२००	१७ ०	६६८
१८००	१' ००	५००
१६००	१२५० म० १२६०	४५०
१५००	१०००	४००
१०००	७' ०	३' ०
७००	५००	३००

(१) 'सप्ततिशतस्थानक' ग्रंथ में मूलसंख्या २०००० मतांतरे २२०००। (२) 'सप्ततिशत में मूल संख्या १२५०० मतांतरे १२५५०।

३३ केवली	३४ मन.पर्यवज्ञानी	३५ चौदहपूर्वी
२००००	१२८'० म० १२६५०	८४'०
२२००० (१)	१२५५० (२)	३७२०
१५०००	१२१५०	२१५०
१४०००	११६'०	१५००
१३०००	१०४'०	२४००
१२०००	१०३००	२३००
११०००	९१'०	२०३०
१००००	८०००	२०००
७ ००	७५००	१'००
७०००	७४००	१४००
६'००	६०००	१३००
६०००	६५०० स० श० (३) ६०००	१२००
'५००	५५००	११००
'०००	५०००	१०००
४५००	४'००	९००
४३००	४०००	८००
३२०० म० २२००	३३४०	६७०
२८००	२५'११	६१०
२२००	१७ ०	५६८
१८००	१५००	५००
१६००	१२५० म० १२६०	४१०
१५००	१०००	४००
१०००	७ ०	३'०
७००	५००	३००

(१) ... ज्ञानर' ग्रंथ में मूलसंख्या २०००० ...
२२००० ... 'में मूल संख्या १२५०० मतांतरे १...

तीर्थंकर	३६ श्रावक	३७ श्राविका
१ ऋषभदेव	३०५०००	५५४०००
२ अजितनाथ	२९८०००	५४५०००
३ सभवनाथ	२९३०००	६३६०००
४ अभिनदन	२८८०००	५२७०००
५ सुमतिनाथ	२८१०००	५१६०००
६ पद्मप्रभ	२७६०००	५०५०००
७ सुपार्श्वनाथ	२५७०००	४९३०००
८ चद्रप्रभ	२५००००	४९१०००
९ सुविधिनाथ	२२९०००	४७१०००
१० शीतलनाथ	२८९०००	४५८०००
११ श्रेयासनाथ	२७९०००	४४८०००
१२ वासुपूज्य	२१५०००	४३६०००
१३ विमलनाथ	२०८०००	४२४०००
१४ अनतनाथ	२०६०००	४१४०००
१५ धर्मनाथ	४१३००० म० २४००००	४१३०००
१६ शातिनाथ	२९००००	३९३०००
१७ कुथुनाथ	१७९०००	३८१०००
१८ अरनाथ	१८४०००	३७२०००
१९ मल्लिनाथ	१८३०००	३७००००
२० मुनिसुव्रत	१७२०००	३५००००
२१ नमिनाथ	१७००००	३४८०००
२२ नेमिनाथ	१६९०००	३३६०००
२३ पार्श्वनाथ	१६४०००	३३९०००
२४ महावीर	१५९०००	३१८०००

(३) स० शा० का अर्थ सप्ततिशतस्थानप्रकरण है

३८ यक्ष	३९ यक्षिणी	४० प्रथमगणधर
गोमुख	चक्रेसरी	पुडरीक
महायक्ष	अजिता	सिंहसेन
त्रिमुख	दुरितारि	चारु
यक्षश	कालिका	वज्रनाभ
तुंबुरु	महाकाली	चरम
कुसुमयक्ष	अच्युता	सुद्योत
मातंग	शांता	विदर्भ
विजय	ज्वाला	दिन्न
अजित	सुतारका	वराहक
महायक्ष	अशोका	नंद
मनुजेश्वर	श्रीवत्सा	कौस्तुभ
कुमारयक्ष	चंडा[१]	सुभूम
षण्मुखयक्ष	विजया	मंदर
पातालयक्ष	अंकुशा	यश
किन्नरयक्ष	प्रज्ञप्ति	अरिष्ट
गरुड	निर्वाणा	चक्रायुध
गंधर्व	अच्युता	शांब
यक्षेंद्र	धरणा	कुंभ
कुबेर	वैरुट्या	भिषज
वरुण	दत्ता	मल्ली
भृकुटी	गांधारी	शुभ
गोमेध	अंबिका	वरदत्त
पार्श्वयक्ष	पद्मावती	आर्यदिन्न
मातंगयक्ष	सिध्धायिका	इंद्रभूति

[१] शतति शतस्थानकमें 'प्रवरा' नाम है

तीर्थंकर	८६ अंतरमान	८७ गण
१ ऋषभदेव	५० लाखक्रोड सागर	मानव
२ अजितनाथ	३० " "	"
३ संभवनाथ	१० " "	देव
४ अभिनंदन	९ " "	"
५ सुमतिनाथ	९० हजार " "	राक्षस
६ पद्मप्रभ	९,००० " "	"
७ सुपार्श्वनाथ	९०० " "	"
८ चंद्रप्रभ	९० " "	देव
९ सुविधिनाथ	९ " "	राक्षस
१० शीतलनाथ	७३७३९०० सागर	मानव
११ श्रेयांसनाथ	५४ सागर	देव
१२ वासुपूज्य	३०	राक्षस
१३ विमलनाथ	९	मानव
१४ अनंतनाथ	४	देव
१५ धर्मनाथ	पौनपल्यापमन्यून ३ सागर	
१६ शांतिनाथ	अर्धं "	मानव
१७ कुंथुनाथ	क्रोडसहस्रवर्षन्यून पाव पल्यो	राक्षस
१८ अरनाथ	१००० क्रोड वर्ष	देव
१९ मल्लिनाथ	५४००००० वर्ष	"
२० मुनिसुव्रत	६००००० वर्ष	"
२१ नमिनाथ	५००००० वर्ष	"
२२ नेमिनाथ	८३७५०	राक्षस
२३ पार्श्वनाथ	२५०	"
२४ महावीर		मानव

४८ योनि	४९ मोक्षपरिवार	
नकुल	१००००	साथ
सप	१०००	"
सर्प	,	"
बिल्ली	,	,
उंदर		,
व्याघ्र	३०८	,
"	१००	,
हिरण	१०००	,
वान	"	,
वानर	"	,
नकुल	"	"
घोडा	५००	साथ
बकरा	६००	,
हाथी	७००	,
बकरा	१०८	"
हाथी	१००	"
बकरा	१०००	"
हाथी	,	"
अश्व	१००	साथ
वानर	१०००	"
अश्व	,	"
हिरण	५३६	"
हिरण	३२	"
वृषभ	एकाकी	

(४) धारणागति अथवा नामा जोडा

ज्योतिष शास्त्र के नियमानुसार हर एक नामधारी पदार्थ का हर एक के साथ एक प्रकार का आभिधानिक सबध रहता है। वह सबन्ध अनुकूल और प्रतिकूल दो प्रकार का होता है। यह अनुकूलता और प्रतिकूलता दोनों चीजों के नाम, नक्षत्र की योनि, गण, राशि और नाडीवेध तथा नामाक्षर से जानने योग्य वर्ग और लभ्य-देय (लेना देनी) इन छ बातों को देख कर निश्चित की जाती है।

१ योनि—

भिन्न भिन्न नक्षत्रों की भिन्न भिन्न योनिया होती हैं, जैसे अश्विनी की 'घोडा' भरणी की 'हाथी' इत्यादि, इन में जिन दो व्यक्तियों के नक्षत्र विरुद्धयोनि वाले होते हैं वहा 'योनिवैर' कहलाता है, जैसे किसी एक का जन्म नक्षत्र 'अश्विनी' है जिस की योनि 'घोडा' है और दूसरे का जन्म नक्षत्र 'हस्त' है जिस की योनि 'भसा' है तो इन दो नक्षत्र-वाली व्यक्तियों में योनिवैर होने की वजह से योनि की अपेक्षा से सबन्ध अनुकूल नहीं कहलायेगा।

२ गण—

नक्षत्रों के गण अर्थात् विभाग ३ हैं-देवगण, मानवगण और राक्षसगण।

अश्विनी, मृगसिर, पुनर्वसु आदि ९ नक्षत्रों का समुदाय, देवगण, भरणी आदि ९ नव का मानवगण और कृत्तिका आदि नव का राक्षसगण ।

दोनों व्यक्तियों के नक्षत्रों का एक गण होना अच्छा है, एक का देव दूसरे का मानवगण हो वहा तक भी साधारणतया ठीक है, परन्तु एक का देव दूसरे का राक्षस होना कलहकारी है और एक का मानव दूसरे का राक्षस गण मृत्युकारी होता है। जैसे अश्विनी नक्षत्र वाले का देवगण है और कृत्तिका नक्षत्रवाले का राक्षस जो कलहकारी है। इस लिये इन में गण-मेल नहीं कहा जायगा। इस कारण अश्विनी और कृत्तिका नक्षत्रवालों का सबन्ध गण की अपेक्षा से अच्छा नहीं है।

३ राशि

राशि का तात्पर्य नक्षत्रों के समुदाय से है। कुल २७ नक्षत्र हैं और १२ राशि, अत एव २। सवा दो नक्षत्रों का १ एक राशि होगा। जैसे १ अश्विनी २ भरणी और कृत्तिका का प्रथम एक चरण मिलकर पहला मेष राशि होता है, इसी प्रकार सवा दो दो नक्षत्रों का एक एक राशि गिनने से २७ नक्षत्रों के १२ राशि होते हैं।

इन राशियों म से एक व्यक्ति के राशि से दूसरे व्यक्ति का राशि दूसरा या बारहवाँ नौवा या पाचवाँ छट्ठा या आठवाँ हो तो वह शुभ नहीं गिना जाता, इन को क्रमश दूआ बारह

नव पंचम और षटष्टक राशि कूट कहते हैं। जैसे एक व्यक्ति का राशि मेष है और दूसरे का वृष तो यह 'दूआ बारह' हुआ, क्योंकि मेष से वृष दूसरा है और वृष से मेष बारहवा। इसी प्रकार नव पंचम और षडष्टक के उदाहरण स्वयं समझ लेना चाहिये।

४ नाडीवेध—

सर्पाकार चक्र बना कर ऊपर बीच में नीचे, नीचे बीच में ऊपर, ऊपर बीच में नीचे इस क्रम से अश्विनी आदि सत्ताईस नक्षत्र लिखे जाते हैं जिन में से ९ ऊपर ९ बीच में और ९ ही नीचे आते हैं इन्हीं उपरली बिचली और निचली लाइनों का नाम क्रमशः आद्य मध्य और अन्त्यनाडी है।

इन में ऊपर बीचे या नीचे की एक ही लाइन में दोनों नक्षत्रों का आना नाडीवेध कहलाता है। वधू और वर जिनबिम्ब और बिम्बकारक आदि का नाडीवेध वर्जित किया है, तब कहीं कहीं नाडीवेध को उत्तम भी माना है।

५ वर्ग—

वर्ग का तात्पर्य वर्णमाला के वर्णवर्गों से है, अर्थात् १ अवर्ग २ कवर्ग ३ चवर्ग ४ टवर्ग ५ तवर्ग ६ पवर्ग ७ यवर्ग और ८ शवर्ग ये आठ वर्ग हैं। इन में से किसी भी वर्ग से पाचवा वर्ग शत्रु कहलाता है। जैसे एक व्यक्ति का वर्ग

है और दूसरे का 'स' तो इन दोनो में वर्गसम्बन्धी वैर रहेगा जो वर्जना चाहिये।

६ लभ्य-दय—

लभ्य-दय को लोक प्रसिद्धि में लेना देनी भी कहते हैं।

दो व्यक्तियों में से कौन किस का लेनदार है और कौन देनदार यह देखने की प्राचीन रीति यह है—दोनों व्यक्तियों के नाम के पहले अक्षरों के वर्ग के अंक निश्चित कर दोनों अंक आगे पीछे लिखना और जो संख्या बने उस को ८ का भाग देना, शेष बचे उसका आधा करना, जो संख्या आवे उतने विश्वा आगे के वर्गवाला पिछले वर्गवाले का देनदार है।

उन्हीं दो वर्गांकों को दूसरी बार पहले से विपरीत लिखना और उसी तरह भाग दे कर शेष का आधा कर देखना दोनों में से एक दूसरे का एक दूसरे में क्या लेना है और क्या देना सो मालूम हो जायगा। दोनो का लेन देन चुकने के बाद जिस का विश्वा बधेगा वह दूसरे से उतने का लेन दार है।

अगर दोनो व्यक्तियों का वर्गांक एक हो तो उस वर्ग के वर्णों का अंक ले कर उपर मुजब लेन देन देखना चाहिये।

उदाहरण के तौर पर ईश्वरलाल और चपालाल के आपस में लेन देन क्या है? यह प्रश्न है। उत्तर-ईश्वरलाल का वर्गांक १ है, क्योंकि 'इ' अवर्ग का अक्षर है और चम्पालाल का वर्गांक २ है। इन दोनों अंकों को आगे पीछे लिखने से क्रमश

१३ और ३१ की संख्या होगी। १३ को ८ का भाग देने पर शेष ५ बचे, इन का आधा २॥ हुए। इस से ज्ञात हुआ कि चम्पालाल ईश्वरलाल से २॥ विश्वा मांगता है। विपरीत अंक जोड़ने पर ३१ की संख्या हुई इसको ८ का भाग देने शेष ७ बचे इनका आधा ३॥ साढे तीन हुए इन में से २॥ विश्वा चम्पालाल के लेने में गये शेष १ विश्वा ईश्वरलाल का चम्पालाल में लेना रहा, इसलिये चम्पालाल ईश्वरलाल का ऋणी कहा जायगा और ईश्वरलाल चम्पालाल का धनी। दूसरा उदाहरण—राम और लक्ष्मण में कौन ऋणी धनी है? उत्तर— राम लक्ष्मण का वर्ग एक ही है इस वास्ते इन के वर्णो का अंक लिया जायगा 'राम' का नामाक्षर 'यवर्ग' का द्वितीय वर्ण है इसलिये अंक २ आया और लक्ष्मण का 'ल' उसी वर्ग का तृतीय वर्ण होने से ३ अंक लिया। साथ लिखने पर २३ की संख्या हुई इस को ८ का भाग देने पर शेष ७ बचे इस का आधा ३॥ साढे तीन विश्वा राम में लक्ष्मण के लेने हैं। अब वही अंक विपरीत क्रमसे लिखा तो ३२ हुए, इस संख्याको ८ का भाग देने पर शेष कुछ नहीं बचा। इस से सिद्ध हुआ कि लक्ष्मण के पास राम कुछ भी नहीं मांगते पर लक्ष्मण राम से साढे तीन विश्वा मांगते हैं।

उपर्युक्त योनि, गण, राशि और नाडीवेध ये चार बातें तो जन्म के ऊपर से देखी जाती हैं परन्तु लेन प्रथम अक्षर के ऊपर से

है। यदि किसी का जन्म नक्षत्र मालूम न हो तो सभी बातें उस के प्रसिद्ध नाम से देखी जाती हैं।

तीर्थङ्कर भगवान् की नवीन मूर्ति बनवा कर अञ्जनशलाका प्रतिष्ठा करने में भी उपर्युक्त छः ही बातों का विचार किया जाता है[2]।

यदि कोई व्यक्ति अपनी तरफ से मूर्ति बनवा कर प्रतिष्ठित कराता है तो उस के नाम और तीर्थङ्कर भगवान के नाम से उक्त छः बातें देखी जाती हैं और संघ की तरफ से मूर्ति की प्रतिष्ठा होती है तो उस गांव के नाम से उक्त बातों का मेल जोल देखा जाता है।

ऊपर हमने जिन छः बातों की शुद्धि होने की बात कही है उन में से योनि, गण, राशि और वर्ग इन चार बातों में कुछ अपवाद भी कहे हुए हैं, जो अवश्य जानने और ध्यान में

---

१ तत्र यस्य धनिकस्य जिनस्येव जन्मनक्षत्रं ज्ञायते तस्य जन्मनक्षत्रेण योनिगणराशय एव नाडिवेधश्च विलोक्यो न तु वर्गलभ्ये। वर्गयोरितरेतरपञ्चमत्व मिथो लभ्य देयं च जिनस्येव तस्यापि प्रसिद्धेनैव नाम्ना विलोक्यम्। जन्मनक्षत्राऽपरिज्ञाने तु तस्य योन्याद्यपि सर्वं प्रसिद्धेनैव नाम्ना विलोक्यम्।"
(धारणागतियन्त्राम्नाये)

२ योनिगण-राशिभेदा लभ्यं वर्गश्च नाडिवेधश्च।
नूतनबिम्बविधाने, षड्विधमेतद्विलोक्य इह ॥ १ ॥"
(धारणागतियन्त्राम्नाये)

रखने योग्य है। वे अपवाद नीचे मुजब है जिन से योनि वैरादि होते हुए भी नामाजोडा निर्दोष माना जाता है।

योनिवैर मे अपवाद

धनिक (मूर्ति कराने वाला) और देव (जिस तीर्थंकर की मूर्ति है) के नक्षत्रो की योनि म परस्पर वैरभाव होने पर भी अगर धनिक नक्षत्र की योनि से जिन नक्षत्र की योनि कमजोर हो तो वहा नामाजोडा शुद्ध माना जाता है। जैसे केवलचंद के जन्म नक्षत्र 'पुनर्वसु' की योनि बिल्ली (मार्जार) है और सुमतिनाथ के जन्म नक्षत्र 'मघा' की योनि मूषक (उंदर), यहा यद्यपि बिल्ली और उंदर के आपस म वैर होने से केवलचंद और सुमतिनाथ क नामाजोडा म योनिवैर है, परंतु यह योनिवैर दोषरूप नही। क्योंकि धनिक केवलचंद जो सुमतिनाथ से कमजोर है उसकी योनि बलवान है और देव सुमतिनाथ जो बलवान् है उन की योनि केवलचंद की योनि से निर्बल है, इस कारण यहा योनिवैर का कुछ असर नहीं होता।

इसी प्रकार सर्वत्र धनिक की योनि देव की योनिसे बलवान् होने पर योनिवैर का दोष नहीं माना जाता[१]।

---

१ 'प्रयो-धग-प्रचा -धनिकस्य योनिगणवर्गा बलिष्ठा सन्तीति, अयं भाव —अल्पबलेन बलिष्ठो न पराभूयते इत्य भिप्रायेण धनिकस्य माजारादिर्बलिष्ठो देवस्य चो दुरादि-रय[illegible] दूषणाताऽस्तीति'।

(?

यदि देव और धनिक में योनिवैर हो और देव की योनि भी बलवान् हो तथापि वहां जातिवैर न हो तो यह वैर भी अवश्य वर्जनीय नहीं है, क्योंकि योनिवैर जातिवैर रूप होने पर ही अवश्य वर्जनीय है[1]।

गणवैर में अपवाद

इसी प्रकार धनिक और देव के नक्षत्रों में गणवैर होने पर भी धनिक का गण बलवान् और 'देव' का गण निर्बल होने पर गणवैर का असर नहीं रहता[2]। उदाहरण-सुरत का गण 'राक्षस' है और आदिनाथ तथा अजितनाथ का गण 'मानव'। यद्यपि मानव राक्षस का भक्ष्य है तथापि मानवगण वाले राक्षसगण वाले से बलवान है इस कारण यहां गणविरोध हानिकारक नहीं हो सकता।

राशिवैर में अपवाद

राशिकूट में हम लिख आये हैं कि देव धनिक के अन्योन्य नव पंचम, षडष्टक और दूसरा बारहवां राशि हो तो वर्जनीय है, परन्तु इन दोनों राशियों के स्वामियों में परस्पर मित्रभाव हो तो ये राशिकूट दूषित नहीं हैं[3]।

---

१ 'धनिकस्य योनिवर्गी अबलो परं नाय विनिश्चय दोषः, जातिवैराभावात्। शास्त्रेषु च योनिसंवरस्य जातिवैरस्यैव ×××वर्जनात्'। (धारणागतियन्त्र आम्नाये)

२ देखो पूर्वक पृष्ठमें टिप्पण नम्बर १।

३ 'यत्र तु षडष्टक-द्विर्द्वादश-नवपञ्चमेषु न राशिमैत्री तानि स्वामिमैत्र्या ग्राह्याणीति।" (धारणा ग य आम्नाये)

उदाहरण—सुरत क साथ सुपार्श्वनाथ का नामाजोडा मिलता है या नही इस की जाच करने पर मालूम हुआ कि सुरत का राशि कुभ है और सुपार्श्वनाथ का तुला। कुभराशि स तुलाराशि नौवा है और तुला मे कुभ पाचवा इस लिए सुरत और सुपार्श्वनाथ के परस्पर नवपचम राशिकूट है, परन्तु यह नवपचम दूषित नहीं है, क्योकि कुभराशि-स्वामी शनि और तुलाराशि-पति शुक्र क आपस में मैत्री है। इस राशि-स्वामि-मैत्री से राशिकूट नव पचम का कुछ दोप नहीं। सुरत सुराणा या अन्य किसी भी ऐसे गाम या व्यक्ति के साथ जिसके नाम का प्रथम अक्षर 'स, सि, सु' इनमें से कोइ भी अक्षर हो सुपार्श्वनाथ का नामाजोडा शुद्ध मिलता है यही कहना चाहिये।

वर्गवैर मे अपवाद

ऊपर कहा गया है कि वर्गवैर तजना चाहिय परन्तु वैर अन्योन्य पचमवर्ग सम्बन्धी हो तभी वर्जित है[1] सामान्य नहीं। अन्योन्य पचमवर्ग विषयक वैर होने पर भी यदि धनिक का वर्ग बलवान् हो और देवका निर्बल तो वहा वर्गवैर आपत्ति जनक नहीं है[2]। उदाहरण-गोल का वर्ग बिल्ली है और पार्श्व-

१ 'वर्गवैरस्येतरेतरपञ्चमत्वरूपस्यैव वर्जनात्"।

(धारणागतियन्त्राम्नाये)

२ 'धनिकजिननामवर्गयोरितरेतरपञ्चमत्व त्याज्य, पर

नाथ का वर्ग उदर। बिल्ली उदर मे यद्यपि वैर है परन्तु यहा निर्बल का वर्ग सबल और सबल का वर्ग निर्बल होने से वर्ग वैर सबन्धी कुछ भी दोषापत्ति नहीं है।

ऊपर लिखे मुजब योनि, गण, राशि और वर्ग विषयक दोषों का तो परिहार है परतु नाडीवेध और लेनादेनी के विषय में कुछ भी अपवाद नहीं है इसलिये नाडीवेध अवश्य वर्जना चाहिये और लेना देनी के विचार में थोडा बहुत भी देव का धनिक लेनदार होना चाहिये न कि देनदार।

ऊपर नामा जोडा देखने सबन्धी छ बातों और उन के अपवादो का जो दिग्दर्शन कराया है उसको समझ कर ध्यान मे रखना चाहिये। और इन सभी बातो को दृष्टि में रख कर किसी भी गाम नगर या व्यक्ति के साथ जिन बिंब का नामा जोडा देखना चाहिये। ऐसा करने वाले कभी धोखा नहीं खायेंगे।

आज कल श्रावक लोगो में ज्ञान अनजान की परीक्षा न होने से अथवा दृष्टिराग के कारण व हर किसी को ये बातें पूछ बैठते हैं और अर्धदग्ध मिथ्याभिमानी साधु और यति

यदि धनिको मार्जार स्याज्जिनस्त्वौन्दुर स्यात्तदा न दोषो विपर्यये तु दोष । एवमन्यत्रापि भाव्यम्।'

(धारणागतिय त्रआम्नाये)

१ नाडिवेधश्चात्र सर्वथ टालित एव।"

(धारणा ग य आम्नाये)

लोग विषय के जानकार न होते हुए भी अभिमान के वश अज्ञता छिपाने के लिये कुछ न कुछ अडबड उत्तर दे ही देते है, वे यह तो जानते ही नहीं कि इस विषय में कई अपवाद और परिहार भी होते है, सिर्फ राशि या वर्ग आदि गिन कर कह देते हैं कि तुम्हारे लिये अमुक अमुक भगवान की मूर्ति अनुकूल है और वे पूछने वाले दृष्टि राग से या तो खोटी प्रसिद्धि के वश अंधे हो कर उस असत्य बात को भी सत्य मान लेते हैं। यदि पूछने वाले किसी धारणागतियंत्र-वेत्ता विद्वान् के पास पूछ कर आये हैं और कहते हैं कि अमुक महा राज ने तो ये ये नाम अनुकूल बताये हैं तो वे अर्धदग्ध तुरत पंचाग टटोलने लगते है और बताये हुए नामों के साथ कहीं प्रीतिनवपंचम, प्रीतिषडष्टक या प्रीति द्विद्वादश जैसा होता है तो कह बैठते हैं-देखो इस में फला फला दोष है। बस उस अर्धदग्ध की बात से लोगों के दिल में शंका उत्पन्न हो जाती है और यदि मूर्ति ले आए है तब तो वे निरर्थक पश्चात्ताप करते है और मूर्ति लानी होती है तो वे अनेकों के पास खाक छानते फिरते हैं और तरह तरह की बातें सुन कर संशयाकुल होते हैं। बस इन खराबियों को दूर करने और अर्धदग्धों को समझाने के लिये ही यह लेख लिखना पडा है।

मु० लेटा, (मारवाड) ता० १८-१०-३४ } मुनि कल्याणविजय

(५) घर कहा और कैसा बनाना चाहिये ?

जैन श्रावक को किस जगह कैसी जमीन में और कैसा घर बनाना चाहिए इसका कुछ विवरण नीचे दिया जाता है।

गृहस्थ को चाहिये कि अपने रहने का घर ऐसी जगह बनाये जहा धर्म अर्थ और काम इन तीनों की साधना होती रहे, जहा जैनमंदिर का योग हो, जहा मुनि महाराजा के दर्शन का और व्याख्यान सुनने का लाभ प्राप्त होता हो, जहा धर्मचुस्त श्रावकों की बसती भरपूर हो, आसपास के पडौसी लोग सदाचारी हो और जहा की आबहवा अच्छी हो।

अच्छे गाव में रहने से दिन बदिन घर की और कुटुंब की आबादी और उन्नति बढती रहती है। कुग्राम में निवास करने से धर्मी मनुष्य की जींदगी खराब हालत को पहुच जाती है, बुद्धि और विचार भी मलिन बन जाते हैं, इस दशा में न इस लोक का साधन होता है न परलोक का। व्यर्थ गृहस्थ जीवन नष्ट हो जाता है। एक नीतिकारने कहा है कि–

" यदि वाछसि मूर्खत्व, ग्रामे वस दिनत्रयम् ।
अपूर्वस्यागमो नास्ति, पूर्वाधीत च नश्यति ॥ १ ॥"

हे विचारशील सज्जन ! अगर तू मूर्ख होना चाहता है तो अविवेकी गाव में तीन दिन निवास कर, कारण के उस गाव में नवीन ज्ञान की प्राप्ति नहीं है और पहले का पढा हुआ नष्ट हो जाता है।

इस लिये अच्छे गाव में धर्मप्रेमी श्रावकों के नजदीक में घर बनाना श्रावक के लिये लाभकारी है।

योग्य जमीन की परीक्षा

जिस जमीन पर इमारत खडी करनी हो वहा पहले खुदवाना चाहिये, ऐसा करने से वहा से खराब अपमागलिक चीजें निकल जाती है।

जिस जमीन में हड्डी न हो, राख न हो, जहा डाभ उगता हो, वर्ण और गध मिट्टी का अच्छा हो, जहा से मीठा जल निकलता हो वह जमीन अच्छी है।

जो भूमि शीतकाल (सीआला) म उष्णस्पर्श वाली हो याने छूने से गरमी मालूम दती हो और ग्रीष्म ऋतु (उन्हाला) में शीतस्पर्श वाली याने छूने से ठडक मालूम दती हो वह बहुत ही उत्तम जमीन है। तथा एक हाथ प्रमाण जमीन खोद कर फिर उसी मिट्टी से खड्डा भर दवे, भरने पर अगर मिट्टी अधिक रह तो वह जमीन श्रेष्ठ है, अगर मिट्टी बराबर रह तो मध्यम भूमि समझना और मिट्टी कम मालूम दवे याने उस से गड्ढा न भरे तो वह जमीन अशुभ है। अथवा हाथ प्रमाण समचोरस और गहरा गड्ढा खोद कर जल स भर दे अगर सौ कदम तक चले उतने समय म एक अगुल जल सूखे तो वह जमीन शुभ जानना, दो अगुल जितना जल सूख जाय तो मध्यम और तीन अगुल जल सूख जाय तो वह भूमि अधम अर्थात् अशुभ है ऐसा समझना चाहिये।

जिस भूमि में व्रीहि (चावल) बोया गया तीन दिन के बाद उग उसको उत्तम, पाच दिन के बाद उगे उसको मध्यम और सात दिन पीछे उगे उसको हीन याने बिलकुल खराब समझा।

पोली जमीन पर घर बनावे तो निर्धन (कंगाल) बन जाता है और मनुष्य की हड्डी या कंकराली जमीन पर घर बनावे तो वहा मनुष्य की आबादी घटती जाती है।

जमीन में गधे की हड्डी या और कोई अवयव हो तो राजा की तर्फ से भय होता है, कुत्ते की हड्डी हो तो बालक मर जाता है, बालक की हड्डी हो तो घर का मालिक विदेश में ही गुजर जाता है, गाय की हड्डी हो तो उस घर में गाय का विनाश हो मनुष्य की खोपरी केश या भस्म हो तो मरण होता है।

ऐसे दोष रहित जमीन देख कर घर मकान बनावे।

घर ऐसे स्थान में बनाना चाहिये कि जहा दिन के दूसरे और तीसरे पहर में किसी वृक्ष की या मंदिर के ध्वज (धजा) की छाया न पडती हो। दूसरे तीसरे पहर में मंदिर की धजा की छाया का घर पर पडना अच्छा नहीं, वैसे मंदिरके शिखर की छाया भी घर पर न पडनी चाहिये।

जैन मंदिर के पीछे, सूर्य तथा शिवमंदिर के सामने और विष्णुमंदिर के बाये भाग में (डाबे भाग में) घर बनाना अच्छा नहीं।

ब्रह्मा का मंदिर चारों दिशा में और चंडिका का मंदिर सर्व दिशाओं में छोडना चाहिये ।

जिन मंदिर के सामने और दाहिनी (जीमणी) तर्फ और शिवमन्दिर के पीछे या बाये भाग में रहना कल्याणकारी है ।

गांव के ईशान कोने में घर बनाना अच्छा नहीं, बनावे तो गृहस्थ को बडी मुसीबतें उठानी पडती है ।

घर बनाते या लेते वक्त वहा के पडौसी से किसी तरह का टंटा या तकरार करना न चाहिये ।

जिनमंदिर की ईंट पत्थर विगैरह कुछ भी चीज घर में न डालनी चाहिये, तथा दूसरे भी किसी देवस्थान की, कूए की, वाव की, मठ की, स्मशान की और राजमंदिर की ईंट पत्थर या लकडी कोई भी चीज घर में न डाले, कारण वे चीजें घर में विरोध उत्पन्न करती है ।

पत्थर के घर में लकडे का थंभा और लकड के घर में पत्थर का थंभा लगाना अच्छा नहीं ।

बिलकुल हलका लकडा, कोल्हु का (घाणीका) लकडा, गाडीका, अरहटका, चरखे का, कांटेवाले वृक्ष का, पांच उदुंबर (उमरा) का और थोहर का लकडा घर में न लगावे।

घर में बीजोरा, केला, दाडिम, बोरडी, जंबीरी, हलद, इमली और धत्तूरा न होना चाहिये, ये ही वृक्ष पडोस में लगेहों और उन की जड अपने घर नीचे आवे तो भी अशुभ समझनी चाहिये । तथा .... छाया भी पडे तो कुल का नाश करे।

पूर्व दिशा म घर ऊचा हो तो धनका नाश करता है, दक्षिण म या पश्चिम म घर ऊचा हो तो धन की वृद्धि करता है और उत्तर में ऊचा हो तो घर उजाड हो जाता है।

घर की शक्ल गोल हो, वह एक कोने वाला, दो कोने वाला, तीन कोने वाला अथवा अनेक कोने वाला हो और दक्षिण म या बायीं तर्फ लबा हो ऐसा घर अशुभ है। उस में रहना ठीक नहीं। जिस घर के किवाड अपने आप खुल या बद हो जाव वह घर भी अशुभ है।

घर के द्वार पर कलस स्वस्तिक आदि चित्र हों तो शुभ है, परतु घर के भीतर या बाहर नाच, खेल, महाभारत और रामायण के युद्ध के, राजाओं के युद्ध के, साधु सन्यासी के या दवता के चित्र हो तो अशुभ है।

फलता हुआ वृक्ष (दरखत), फुली हुई वल, सरस्वती देवी, लक्ष्मी दवी, नवनिधान, यज्ञ का थभ, वर्धमान, १४ स्वप्न ये चित्र कराना शुभ है।

घर में खजूर, दाडिम, कला, कोहला, बीजोरा ये वृक्ष नहीं लगाना, कारण उन स घर का विनाश होता है, मनुष्य का घाटा आ जाता है।

वड वृक्ष घर म उगे तो लक्ष्मी का नाश करता है, कांटों वाला वृक्ष हो तो दुश्मन का भय रहता है, वड फल वाला वृक्ष उगे तो सतान का नाश करता है, ऐसे वृक्ष का काष्ट भी छोड देना चाहिये। कितनेक कहते हैं कि घर के पूर्व दिशाभाग

में वडवृक्ष हो तो अच्छा है, दक्षिण तर्फ उदुम्बर (उवरा) वृक्ष शुभ है, पश्चिम भाग में पीपला और उत्तर में प्लक्ष (पारस पीपला) वृक्ष अच्छा है।

घर में पूर्व दिशा में लक्ष्मी का स्थान, पश्चिम में भोजन का स्थान, उत्तर में जल रखने का पनिहारा, दक्षिण में सोने की जगह, अग्नि कोन मे रसोडा, नैर्ऋत में शस्त्रशाला (शस्त्र रखने का स्थान), वायु कोन में अनाज की कोठार और ईशान कोण में देवमंदिर बनवावे।

यहा पर पूर्वादि दिशाओ का हिसाब घरके दरवज्जे की अपेक्षासे समझना चाहिये सूर्य की अपेक्षासे नहीं।

घर के अनेक खिडकिया नहीं होनी चाहियें, खिडकी के किवाड मजबूत और आसानी से खोले जावे वैसे बनवाने चाहियें।

इस के सिवाय और भी अच्छे अच्छे लक्षण हो वे शिल्प शास्त्र के जानने वाले से पूछ कर कराने चाहिये, जिस से भविष्य में हर तरह से वह घर हरा भरा रहे और दिन दिन उस की तरक्की होती रहे।

(६) सूतक विचार

जन्म सबन्धी सूतक

पुत्र का जन्म हो तो दश दिन का और पुत्री का जन्म हो तो ग्यारह दिन का सूतक लगता है। बारहवें दिन न्हाने धोने के बाद वह शुद्ध हो जाता है।

शास्त्रानुसार बारहवें दिन घर के अन्य मनुष्य भगवान् की पूजा कर सकते है।

सूतक काल घर से अलग रह कर भोजन करते हो तो दूसरे के घर से जल लाकर उस से स्नान कर सदा पूजा हो सकती है, कारण कि सूतक जहा जन्म हुआ है वहा गिना जाता है अन्यत्र नहीं। हा इस में इतना जरूर है कि जन्म हुए बालक का पिता अगर अलग रसोई जीमता हो तो भी उस को पाच दिन का सूतक अवश्य पालना पडता है और शामिल रहे तो ग्यारह दिन का सूतक है ही।

जन्म देने वाली स्त्री १ महीना तक जिनमंदिरका दर्शन नहीं कर सकती, तथा ४० दिन तक भगवान् की पूजा नहीं करती। तथा ४० दिन तक उस के हाथ का बना हुआ भोजन मुनि को लेना न कल्पे

गोत्री के लिये जो पाच दिन का सूतक कहा जाता है उस का मतलब यह है कि पुराने जमाने में एक कपाउंड वाले घर में एक पछीत वाले भिन्न भिन्न कमरो में सारा कुटुंब रहता था, निकलने का दरवाजा एक ही होता था जिस से वहा गोत्री-जनों को पाच दिन का सूतक पालना पडता था। आज कल सब कुटुंबी लोग अलग घरों में रहते हैं, एक कंपाउंड वाला घर नजर नहीं आता इस लिये गोत्री के वास्ते पाच दिन का हिसाब नहीं गिना जाता। अगर कहीं पर आज भी वैसे घर

हों तो वहा रहने वालों को पाच दिन का सूतक पालना चाहिये।

सूतक वाले घर से मिला हुआ आस पास किसी का घर हो, सिर्फ नीच में आडी दिवार (भींत) हो परतु सूतक वाले घर में जाना आना न होता हो तो उस पडोसी को सूतक नहीं लगता। वह दर्शन पूजा विगेरह कर सकता है। उस के घर का आहार मुनिराज ले सकते हैं।

प्रसूति वाली के खान पान रसोई आदि की सरभरा करने वाली स्त्री के सिर्फ ग्यारह दिन का ही सूतक है, इतने दिन तक सामायिक प्रतिक्रमण देवदर्शन आदि नहीं कर सकती। कितनेक लोग उस के लिये सत्ताइस दिन का परहेज करना कहते हैं सो व्यावहारिक रुढि है, इस रुढि को मान कर ही कितनीक जगह मुनिराज सूतक वाले के घर से सत्ताइस दिन तक आहार पानी नहीं लेते हैं, इस का भी कारण देखा जाय तो यही है कि विशेष सफाई नहीं रहती इस लिये २७ दिन की रुढि चलाते हैं, जहा स्त्रिया सफाई अच्छी रखती हों वहा १२ दिन के बाद आहार पानी लेने में कुछ दोष नहीं है। गुजरात में कहीं कहीं ऐसा रिवाज भी है। मगर उस में देखना यह चाहिये कि बारह दिन के बाद भी जन्म देने वाली स्त्री पनेहरे को छूती न हो अथवा रसोई बनाती न हो। तात्पर्य यह है कि रसोई दूसरी स्त्री करती हो और प्रसूती वाली स्त्री जल तथा रसोई घर में न जाती हो तो बारहदिन के बाद आहार लेना कल्पे, अन्यथा २७ दिन के बाद।

यहा पर कितनेक लोगो का खयाल है कि सुआवड वाली स्त्री को रसोइ घर दिलाने वाली पर तेले (अट्ठम) का दड आता है यह ठीक नहा है, यह जो तेले का दड शास्त्र में लिखा है यह नाल छेदना स्नान कराना आदि दाई का काम करने वाली क लिये है।

कितनेक यह भी कहते हैं कि जिस घर म जन्म हुआ हो उस के आस पास के तीन तीन घर छोड कर साधु को आहार पानी लेना चाहिये, मगर यह भी गलत है। तीन तीन घर छोडने का मूल तात्पर्य यह है कि किसी घर में कोइ मर गया हो और जब तक मुरदा वहा पडा हो तब तक दोनों तर्फ के तीन तीन घरो में पठन पाठन नहीं हो सक्ता।

व्यवहार नामक छेद सूत्र की टीका में दश दिन के सिवाय अधिक सूतक नहीं बतलाया, लेकिन लोगो में बराबर आचार विचार शुद्ध न रहने लगा तब पिछले पुरुषो ने समय देख कर सूतक मे कमी वेशी की है, उस मुताबिक विवेकी पुरुष पालन करते रह।

अपने घर में दास दासी जो अपने आधार पर रहे हुए हों तो उन का सूतक सिर्फ चोदस पहर का है। चोदस पहर के बाद देव दर्शन पूजा सामायिक आदि हो सक्ता है।

गाय, भैंस, ऊटनी, घोडी घर में प्रसवे तो दो दिन का सूतक और बाहर प्रसवे तो दिन १ का सूतक होता है।

भैंस का दूध दही घी १५ दिन के बाद, गाय का दूध दही घी विगैरह तथा ऊटणी का दूध प्रसव से दश दिन के बाद काम आता है और बकरी घेटी का ८ दिन के बाद। अर्थात् प्रसव से इतने दिनों के बाद दूध घी विगेरह खाने लायक होते हैं, पहले नहीं। पहले खाय तो पूजा प्रतिक्रमणादि नहीं कर सकते, सिर्फ बाहर से दर्शन में विशेष प्रतिबन्ध (हर्ज) नहीं है।

रजस्वला (कारणवाली) स्त्री का सूतक

कारण वाली स्त्री तीन दिन तक घर में बरतन आदि को नहीं छू सकती, दर्शन सामायिक, प्रतिक्रमण नहीं कर सकती, लेकिन् तपस्या करे वह गिनती में आ सकती है। दिन ४ के बाद जिन पूजा कर सकती है, रोग के कारण कपडे धोने के बाद अशुद्धि नजर आवे उस का हर्ज नहीं, शुद्धि पूर्वक दर्शन हो सकता है। मुनिराज को दान दे सकती है, मगर भगवान् की अंगपूजा न कर सके।

कारण वाली स्त्री को चाहिये कि तीन दिन तक अलाहिद कमरे में बैठे, घर में पनेहरा रसोडा या जहा घर के दूसरे मनुष्यों के सोने बैठने की जगह हो वहासे दूर रहे।

कई जगह देखा जाता है कि ऋतुवती स्त्रियां पूरा खयाल नहीं रखतीं, सारे घर में इधर उधर फिरने लग जाती हैं, यहा तक कि रसोड का भी पूरा परहज नहीं रखतीं, यह कितनी

अज्ञानता है ? । कई जगह ऐसा भी अक्सर देखा गया है कि कारण वाली स्त्री गोबर ला कर घर में लीपणे का काम करती है अगर बुद्धि से विचार किया जाय तो घर में लीपना शुद्धि के वास्ते है और जब वह स्त्री तो खुद अशुद्ध हालत में है तो फिर उसके हाथ का लीपना किस काम का ?, यह तो उल्टा ज्यादा अशुद्ध हुआ । इस लिये इस विषय में कारणवाली स्त्रियों को बहुत सोच विचार कर चलना चाहिये ।

मरण सम्बंधी सूतक

घर का कोई मनुष्य गुजर जाय तो १२ दिन का सूतक होता है, १२ दिन तक उस के घर से मुनिराज आहार पानी नहीं ले सकते, उसके घर के जल से जिनपूजा नहीं हो सकती ऐसा निशीथचूर्णि में कहा है । तथा १२ दिन तक उस घर वाला पूजा सामायिक प्रतिक्रमण नहीं कर सकता, पुस्तक और माला के हाथ नहीं लगा सकता, माला गिनने का नियम हो तो होठ हिलाये बिना मन में नवकार मंत्र गिने और मंदिर दर्शन भी बाहर से ही करे ।

निशीथ सूत्र के सोलहवें उद्देशे में जन्म और मरण का घर दुगछनिक (अशुद्ध) कहा है ।

मृत्यु वाले के पास सुवे तो दिन ३ पूजा नहीं हो सकती।

खांधिया या मुडदे को छूने वाला दिन ३ पूजा पडिकमणादि नहीं कर सकता मगर मन में नवकार गिने तो कोई हर्ज नहीं ।

मुडद को स्पर्श न किया हो और बिलकुल निराला रहा हो यहा तक कि श्मशान का धूआ तक न लगा हो तो स्नान करने पर शुद्ध है।

खाधिये के सिवा दूसरा कोइ मुद का स्पर्श कर तो सोलह पहर पूजा पडिकमणादि नहीं कर सक्ता।

जिस के घर जन्म या मरण हुआ हो वहा भोजन करने वाले दिन १२ तक पूजा नहीं कर सक्ते।

वेप बदलने वाले याने मरने की खबर सुन स्नान कर क कपडे बदलने वालो को ८ पहर का सूतक लगता है।

बच्चा जन्मे उसी दिन मर जाय अथवा विदेश में मरण हो तो दिन १ का सूतक, तथा साधु यति मरे तो भी दिन १ का सूतक है।

८ वर्ष तक की उमर का बालक मरे तो दिन ८ का सूतक है, परतु जो बच्चा दूधमुहा हो अनाज न खाता हो तो सिर्फ ३ दिन का सूतक है। ८ वर्ष के ऊपर हो तो दिन १२ गिने जाते हैं।

गाय भेंस आदि मर जाय तो उनका कलेवर घर से बाहर ले जाने के बाद १ दिन का सूतक और किसी दूसरे पशु पखी का कलेवर पडा हो तो वह जब तक न हटाया जाय तब तक सूतक लगता है वहा से बाहर ले जाने क बाद नहीं।

कोई दास दासी अपने घर में गुजर जाय तो सिर्फ तीन दिन का सूतक माना गया है।

जितने महीने का गर्भ गिरे उतने दिन का सूतक समझना, परदेश में गये हुए का मरण समाचार सुने तो १ अथवा २ दिनका सूतक लगे ऐसा कल्पभाष्य का लेख है।

गोमूत्र म २८ पहर के बाद समूर्च्छिम जीव उत्पन्न होते हैं। भैस के मूत्र में १६ पहर बाद जीव उत्पत्ति, गाडर गधी तथा घोडी क मूत्र में ८ पहर बाद जीव उत्पत्ति और मनुष्य के मूत्र म ४ पहर बाद समूर्च्छिम जीव उत्पन्न होते हैं।

(७) रोगी-मृत्युज्ञान।

रोगीमृत्युज्ञायक त्रिनाडीचक्र पहला।

इस चक्रका नाम 'त्रिनाडीचक्र' है। इसका दूसरा नाम 'भुजग चक्र' भी है। इसके बनाने का विधान नीचे के प्राचीन पद्य में दिया है—

'आइच्चाइ धरेवि भुअगह पनरस माहि ठवेविणु अगह।
जारम याहिरि तस्स य दिज्जइ जीविय-मरण फुड जाणिज्जइ॥"

अर्थात् प्रथम आदिनाडी में रवि नक्षत्र लिखना फिर मध्य और अत्य नाडी में अनुक्रम से उसके बाद का एक एक नक्षत्र लिखना उसक बाद तीन नक्षत्र अत्यनाडी क ऊपर बाहर लिख कर फिर अत्यनाडी से शुरू करके आदिनाडी तक तीन नक्षत्र लिखे, बादमें आगे तीन नक्षत्र आदि नाडी के नीचे बाहर लिखे और फिर आदि मध्य अत्य नाडियो में क्रमश तान नक्षत्र लिख कर अत्यनाडी के ऊपर तीन नक्षत्र लि

खे, बाद म अत्य मध्य आदि नाडियों में तीन नक्षत्र लिखकर आदि नाडी के नीचे बाहर तीन नक्षत्र लिखे और फिर आदि नाडी से लेकर अत्यनाडी तक में तीन नक्षत्र लिख दे। इस प्रकार एक एक नाडी के ५–५–नक्षत्र मिलकर कुल १५ नक्षत्र तीन नाडियों म आवेंगे, अत्य नाडी के उपर दो जगह लिखे हुए ३–३–नक्षत्र और आदिनाडी क नीचे बाहर दो जगह लिखे हुए ३–३–नक्षत्र मिलकर कुल १२ नक्षत्र नाडियो के बाहर आवेंगे।

चक्र की स्थापना—

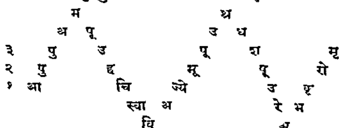
		मृ				अ				
	रो		आ		चि		ज्ये			
३	कृ		पु		स्वा		मू			रे
२	भ		पु		चि		पू			उ
१	अ			अ	ह			उ	पू	
			म	उ				अ	श	
			पू					ध		

इस चक्र में रवि नक्षत्र से लिखने का प्रारभ करना चाहिये। यहा पर अश्विनी से प्रारभ करक कुल नक्षत्र लिखे हैं, क्योंकि अश्विनी को ही यहा कल्पना से रवि नक्षत्र मान लिया है। दखने के समय रोगी जिम समय बीमार पडा उम समय सूर्य किस नक्षत्र पर था इस बात का निश्चय पचाग में देखकर कर लेना चाहिये और फिर उस नक्षत्र को आदि ना-

डी में प्रथम लिख कर फिर ऊपर लिखे क्रम से बाकी के तमाम नक्षत्र लिख लेना चाहिये।

इस प्रकार तत्कालीन चक्र तैयार होजाने के बाद उसमें रोगी के जन्म नक्षत्र को देखे कि वह किस नाडी में पडा है, अगर आदि नाडी में रोगी का जन्मनक्षत्र पडा हो तो रोगी की मृत्यु होने का संभव जानना चाहिये। रोगी का जन्म नक्षत्र मध्य नाडी में पडा हो तो दीर्घपीडा कहना और रोगी का नक्षत्र अन्त्यनाडी में आया हो तो अल्प कष्ट कहना। रोगी का जन्म नक्षत्र जो नाडी चक्र के बाहर के नक्षत्रों में पडा हो तो समझना चाहिये कि नाम मात्र का कष्ट देखकर रोगी अच्छा हो जायगा।

रोगि मृत्युज्ञानार्थ त्रिनाडी चक्र दूसरा—



इस चक्र के लिखने की रीति भी पूर्वोक्त पहले चक्र के जैसी ही है, फरक मात्र इतनाही है कि पहले चक्रमें रवि नक्षत्र से नक्षत्र लिखने की शुरुआत होती है और इसमें आर्द्रा नक्षत्र से।

"आर्द्रादि पञ्चदशभिस्त्रीणि त्रीण्यन्तरा त्यजन् ।
त्रिनाडीचक्र चन्द्राक-जन्मरोधे न जीवति ॥"

अर्थात् नीच म तीन तीन नक्षत्रों को छोडते हुए आर्द्रादि पद्रह नक्षत्रों से त्रिनाडीचक्र बनाना। इसमें चन्द्रनक्षत्र सूर्यनक्षत्र और रोगीका जन्म नक्षत्र ये तीनो नक्षत्र एक नाडी म हों उम समय बीमार पडने वाला रोगी मर जाता है।

सूर्य नक्षत्र और रोगिनक्षत्र एक नाडी में हों तो अधिक कष्ट और सूर्य नक्षत्र रोगीनक्षत्र चद्र नक्षत्र य तीनों भिन्न भिन्न नाडियों में हों तो स्वल्प कष्ट भोग कर अच्छा हो जाता है।

रोगिमृत्युज्ञानार्थ त्रिनाडी चक्र तीसरा—

३	पु	अ	चि	स्वा	पू	उ	उ	रे	मृ
२	पु	म	ह	चि	मू	श्र	पू	अ	रो
१	आ	पू	उ	अ	ज्ये	ध	श	भ	कृ

इस तीसरे नाडीचक्र में भी आर्द्रा से ही नक्षत्र लिखे जाते हैं, परतु ऊपर के दो चक्रों में तीन तीन के बाद तीन तीन नक्षत्र ऊपर नीचे बाहर लिखे जाते हैं वैसे इसमें नहीं लिखे जाते, इसमें तो आर्द्रा पुनर्वसु और पुष्य आदि मध्य और अत्यनाडी में लिखकर फिर आश्लेषा मघा और पूर्वाफाल्गुनी अत्य मध्य आदि नाडी में लिखना, इसी प्रकार नीचे से ऊपर नीचे लिखत हुए २७ नक्षत्र तीन

नाडियो में लिख दिये जाते हैं। इस चक्र की विधान गाथा नीचे मुजब है—

'गाई अद्दा मिग अंते मज्झे मूलं पइट्ठिअं।
रवींदुजम्मनक्खत्त तिविद्धो न हु जीवति॥'

अर्थात् आदि में आर्द्रा अंत में मृगशिरा और मध्य में मूलको रखना इनके अगले पिछले नक्षत्र आगे पीछे तीनों नाडियों में लिखना, फिर रोगोत्पत्ति समय के सूर्य नक्षत्र की चंद्र नक्षत्र की और रोगी के जन्म नक्षत्र की तलाश करना, अगर तीनों नक्षत्र एक ही नाडी में पड़ें हों तो रोगी का जीना कठिन है। सूर्य नक्षत्र और रोगी नक्षत्र एक नाडी में हों तो अधिक कष्ट भोग कर रोगी अच्छा होगा, रोगी नक्षत्र और चंद्रनक्षत्र एक नाडी में हो अथवा तीनों नक्षत्र भिन्न भिन्न नाडियों में हों तो अल्प कष्ट भोगने के बाद रोगी अच्छा होगा।

नाडी चक्रों के विषय में विशेष विधान—

ग्रंथान्तर में इन नाडीचक्रों में विशेष विधान भी है जो नीचे के श्लोकों से व्यक्त होगा—

'रोगिणो जन्मनक्षत्रस्य, एकनाड्यां यदा रविः।
यावदस्थ रवेर्भोग्यं, तावत्कष्टपरम्परा॥
रोगिणो जन्मनक्षत्रस्य एकनाड्यां यदा शशी।
तदा पीडा विजानीयात्-दृष्टग्राहरिर्क्षं ध्रुवम्॥
क्रूरग्रहास्तद्द्वये तु, यदि तत्रैव संस्थिताः।
तदा काले भवेन्मृत्युः सत्यमीशानभाषितम्॥'

अर्थात् रोगी का जन्म नक्षत्र और सूर्य नक्षत्र एक नाडी में हो तो जब तक सूर्य उस नक्षत्र पर रहेगा तब तक रोगी को कष्ट भोगना पडेगा।

रोगी का जन्म नक्षत्र और चंद्र नक्षत्र एक नाडी में हो तो रोगी को आठ पहर याने एक दिन-रात्रि का कष्ट कहना चाहिये।

अगर सूर्य अथवा चंद्र के अतिरिक्त दूसरे भी क्रूर ग्रह उस वक्त उस नाडी पर बैठे हों तो रोगी का मरण हो।

तात्पर्य यह है कि रोगी नक्षत्र और सूर्य नक्षत्र दोनों एक नाडी में हो और दूसरे भी क्रूरग्रह उस नाडी में हो तो रोगी का बचना कठिन है।

ऊपर का विशेष विधान तीनों नाडी चक्रों के लिये समान है।

खुलासा—

त्रिनाडी चक्र देखना कुछ भी मुश्किल नहीं है, इसके लिये २७ नक्षत्रों के नाम जान लेना जरूरी है।

सूर्य जिस नक्षत्र पर होता है वह रवि नक्षत्र अथवा 'रवियो नक्षत्र' कहलाता है। सूर्य प्राय १३-१४-दिन एक नक्षत्र पर रहता है। जिस समय सूर्य किस नक्षत्र पर है यह ५ में लिखा रहता है।

चंद्रमा जिस नक्षत्र नक्षत्र है इसी

नक्षत्र भी कहते हैं, से इस

काल ६० घटी का होता है। पञ्चांग में वार के बाद जो नक्षत्र लिखा रहता है वही चन्द्रनक्षत्र है।

रोगी मनुष्य का जिस चन्द्रनक्षत्र में जन्म हुआ हो वह उस का जन्म नक्षत्र है। अगर रोगी का जन्म नक्षत्र न मालूम हो तो उस के प्रसिद्ध नाम से जो नक्षत्र बनता हो वही उस का जन्मनक्षत्र मान लेना चाहिये।

ऊपर जो तीन त्रिनाडी चक्र लिखे है उन में जो कि अधिक जगह विरोध नहीं आता, तथापि कहीं कहीं ऐसा भी प्रसंग आ जाता है कि एक चक्र के अनुसार मृत्युयोग मालूम होता है तब दूसरे के विधानानुसार दीर्घपीडा और तीसरे के विधान से स्वल्पकष्ट। ऐसे स्थानों में परीक्षकों को बहुत सोच विचारकर भविष्य कहना चाहिये, अन्यथा वे झूठे पडेंगे, सिर्फ एक ही चक्र के अनुसार मृत्युयोग बनता हो लेकिन् रोगोत्पत्ति यदि शुक्ल पक्ष में हुई हो और उस समय रोगी का जन्म चन्द्र हो अथवा आठमा चन्द्र हो और अन्य भी एक दो क्रूर ग्रह उस नाडी में पड हों तो रोगी का बचना कठिन ही समझना चाहिये। इसी प्रकार रोगोत्पत्ति कृष्ण पक्ष में हुई हो और उस समय-३-५ ७-वा तारा में से कोई एक तारा हो और सूर्य और रोगि के नक्षत्र वाली नाडी में अन्य भी क्रूरग्रह वर्तमान हों तो भी रोगी का बचना कठिन है, इस के विपरीत त्रिवेध होने पर भी रोगोत्पत्ति के समय तारा अनुकूल होगी और अन्य

ऱूरग्रह उम नाडी पर नहीं होगा तो रोगी के जीने की कुछ आशा की जा सकती है।

इन नाडीचक्रा के अवलोकन के माथ ही रोगी को किस नक्षत्र तिथि और वार में रोग उत्पन्न हुआ है यह भी दखना जरूरी है। नाडीचक्र और नक्षत्र-तिथि-वार योग इन दोना के क्रम से यदि रोगी का मृत्युयोग बनता हो तो वह रोगी कभी नहीं बचेगा यह निश्चय कर लेना।

जैसे नाडीचक्रों से मृत्युज्ञान का विधान ज्योतिष ग्रन्थकारों ने किया है वैसे नक्षत्र-तिथि-वार सम्बन्धी योग से भी रोगी के मरण-जीवन का ज्ञान उन्होंने बताया है, और यह विधान उक्त नाडाचक्रो से भी बहुत सुगम है। जिज्ञासुओ के अवलोकनार्थ हम वह योग नीचे दते हैं—

नक्षत्र-तिथि-वार का मृत्युकारी योग—

भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, अश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, विशाखा, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढा, धनिष्ठा, शतभिषक् और पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रों में से कोई भी एक नक्षत्र हो, चतुर्थी षष्ठी नवमी द्वादशी और चतुर्दशी इन तिथियों में से कोई भी एक तिथि हो और रवि मगल और शनि इन वारों में से कोई भी एक वार हो तो रोगिमृत्युयोग बनता है। उस समय में जिस को रोगोत्पत्ति हुई हो वह प्राय करके मृत्यु पाता है। इस योग में भी चन्द्र या तारा की ... हो तो कुछ बचने की आशा की जा

सकता है, इस के विपरीत जो चंद्र और तारा प्रतिकूल हो तो रोगी के बचने की आशा छोड देनी चाहिये ।

उपर के मृत्युयोग के समय यदि चंद्र रोगी की जन्म राशिका या जन्मराशि से आठवी राशि का हो, अथवा जन्म लग्न की राशिका हो, अथवा किसी भी राशिका होते हुए भी रोगोत्पत्ति की लग्नकुंडली में वह-२-८-१२ वें भुवन में पडा हो तो रोगी की अवश्य मृत्यु कहनी चाहिये ।

उपर जिस योग दिया है उस में नक्षत्र ११ लिये गये है, परंतु नीचे लिखे ७ नक्षत्र अकेले ही मृत्युदायक कहे गये है । यदि इन नक्षत्रो में से किसी एक नक्षत्र में मनुष्य बीमार पडा हो और उस समय चंद्र अथवा तारा प्रतिकूल हो तो रोगी का बचना कठिन हो जाता है । वे सात मृत्युकारक नक्षत्र नीचे मुजब है-

आर्द्रा, अश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, स्वाति, ज्येष्ठा, पूर्वाषाढा और पूर्वाभाद्रपद ये सात नक्षत्र रोगी के प्राणघातक है । इन में जिस को रोग उत्पन्न होता है वह बडा कष्ट पाता है और चंद्रादि की प्रतिकूलता में प्राणमुक्त ही हो जाता है ।

नक्षत्रो से रोगी का कष्टकाल प्रमाण—

कष्ट से रोगनिवृत्ति—

अनुराधा और रेवती इन नक्षत्रो में रोगोत्पत्ति हुई हो

ो बहुत समय तक रोग बना रहता है और बडे कष्ट से रोग ी निवृत्ति होती है।

१ मास पीछे रोग निवृत्ति—

मृगशिरा और उत्तराषाढा म रोग उत्पन्न हुआ हो तो १ मास में रोगी नीरोग हो।

२० दिन के बाद रोग निवृत्ति—

यदि रोग मघा नक्षत्र मे उत्पन्न हुआ हो तो बीस दिन के बाद मिटे।

१५ दिन के बाद रोग निवृत्ति—

हस्त, विशाखा, धनिष्ठा इन नक्षत्रा में उत्पन्न हुआ रोग १५ दिने क बाद मिटता है।

११ दिन पीछे रोग निवृत्ति—

भरणी, चित्रा, श्रवण और शततारका इन नक्षत्रा म उत्पन्न हुआ रोग ११ दिन क बाद मिटता है।

९ दिन के बाद रोगनिवृत्ति—

अश्विनी, कृत्तिका और मूल में रोग उत्पन्न हुआ हो तो ९ दिन पीछे मिटे।

७ दिन म रोग निवृत्ति—

रोहिणी, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रा में होने वाला रोग ७ दिन में अच्छा होता है।

विशेष खुलासा

ऊपर जो नक्षत्रों के आधार से कष्ट का कालमान बतलाया है वह चंद्र और तारा अनुकूल प्रतिकूल न होने की दशा में समझना चाहिये।

यदि चंद्र अथवा तारा अनुकूल हो तो इस काल से कुछ पहले भी रोगनिवृत्ति हो सकती है, इसी तरह चंद्र तारा के प्रतिकूल होने पर लिखे हुए मान से कुछ अधिक दिन तक भी कष्ट भोगना पडता है।

मुनि कल्याणविजय

इति श्रीजैनज्ञान-गुणसंग्रह प्रथम खण्ड समाप्त।



श्रीजैनज्ञान-गुणसंग्रह

द्वितीय खण्ड

चैत्यवंदन १ स्तुति संग्रह २, स्तवन ३ और स्वाध्याय ४।
पद ५ य द्वितीयखण्डम्, रह पच अध्याय ॥१॥

१ चैत्यवंदनसंग्रह

मुनि श्रीकल्याणविजयविरचिता
चैत्यवन्दनचतुर्विंशतिका

श्री ऋषभदेवजिनचैत्यवन्दनम् ।

(वसन्ततिलकाऽपरनामक उद्धर्षिणी वृत्तम्)

श्रीनाभिराजकुलनन्दनकल्पवृक्ष ,
संप्राप्तसर्वसुरपूज्यतमत्वपक्ष ।
उल्लासयन् रविरिवाङ्घ्रिसरोजखण्ड,
दिश्यात्स शर्म वृषभो भवतामखण्डम् ॥१॥

त्रैलोक्यलोकचलनेत्रचकोरचन्द्र,
वैराग्यरङ्गरमभङ्गमयास्ततन्द्रम् ।
संसारसिंधुतरणाय सुयानपात्र,
देवं नमामि ऋषभ प्रथितिप्रगात्रम् ॥२॥
येन प्रदर्शितमशेषकलाकलाप,
दुर्बोधजातदुरितौघकृतापलापम् ।
स्मृत्वाऽधुनापि जनता निजकार्यजन्मा-
दुर्द्धर्षिणीतिहरणोऽस्तु स नाभिजन्मा ॥३॥

श्रीअजितनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(तोटक वृत्तम्)

अजित विदिताखिलवस्तुगण, सगुण वरमुक्तिवधूरमणम् ।
रमणीरजनीचरिकाविधुत, प्रणुत प्रणताखिलसिद्धिकृतम् ॥१॥
मपतन्तमवित्तिभर मनुज,-मनुजन्म कुरन्तमदष्टरुजम् ।
जनमानममानसहससम, समदर्शितम प्रणमाम्यसमम् ॥२॥
विहितामरदानरसरनक, कनकोज्ज्वलनिर्मलविग्रहकम् ।
भवतोटक ! तोटय मे दुरित, समयोदितकर्मरजोमिलितम् ॥३॥

श्रीसंभवजिनचैत्यवन्दनम् ।

(उपजातिवृत्तम्)

श्रीसंभवो निर्दलितारिसंभवो, विसंभव प्रास्तविकारसंभव ।
सशंभवश्रीद्धजितारिसंभव , क्षिणोतु त योऽस्ति गतोरिसंभव ।१।
धृष्टत्व मन्ये विदुषा नु भारती, यया न त सक्रियते बुध स्तुति ।
कि कल्पवृक्षोऽपि फलान्निर्जित ,फलैर्विभिन्नो निगृहैर्विवर्जित ।२।

न स्रग्धरावृत्तसुरैरपि स्तय, सदैव साद्यविवर्णनं ऋते ।
लभेत सत्कीर्तिभर यथा स्तुवन्, भव तमन्यैरपनातिवृत्तकं ॥३॥

श्रीअभिनन्दनजिनचैत्यवन्दनम् ।

(रथोद्धता वृत्तम्)

मवरात्यनरराजनन्दन, दवराजविहिताभिनन्दनम् ।
शर्मदानजनताभिनन्दन, भक्तितोऽस्मि विनतोऽभिनन्दनम् ॥१॥
भो जना ! विषयलुप्तचेतनं,-र्भोजनादिसुखमिप्यत जनं ।
तद्वद्त्र भवतापपीडितै,-ज्ञानमात्मनमसौ निषव्यते ॥२॥
सत्तनेन सतत जिनशितु,-र्माहरा नमदनौ प्रणेशतु ।
सन्नृणा भवतु योऽपि तद्गता, तद्भटालिरसुरैरथोद्धता ॥३॥

श्रीसुमतिनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(द्रुतविलम्बितवृत्तम्)

सुकृतसद्धरिविर्धनवारिद,-प्रशमनल्पगुणस्य नतारिद ! ।
वचनमर्तिहर भवितारक, भवतु मेऽघहर विगताग्रकम् ॥१॥
सुमतिमेघनरन्द्रमसुद्भव !, विहितमर्त्यसुरासुरसुद्भव ! ।
अथ भवेद्धि भवान्मम तारण , मजति चेद्भगवन्न् ! ममतारण ।२।
द्रुतविलम्बितसमरणक्रम,-मविरत विदधे सगुणक्रम ! ।
यदि गतिर्हि भवेद्भवदाश्रये, उत्पगति भगवन् ! नु तदाश्रय ।३।

श्रीपद्मप्रभजिनचैत्यवन्दनम् ।

(इन्द्रवज्रावृत्तम्)

पद्मप्रभेऽम्भोनिशाल्नेत्रे, पद्मप्रभे भो दधता सुभक्तिम् ।
ये न [illegible] ।पि, यन प्रनष्टा ननु तेऽपि दोषा ॥१॥

नाथ ! त्वया चेत् क्रियते जनोऽन्यो, धर्मोपदर्शनेन्नु मुक्तराग ।
त्वं रागयुक्तोऽसि कथं नु यद्वा, माहात्म्यमेतत्खलु सत्वविच्च ।२।
एकाकिनापि प्रहतास्त्वयेद्धा, मोहादय कर्मबलिष्ठयोधा ।
स्यादिन्द्रवज्राहतिरक्रियापि, नाशाय मौले कुलपर्वताद्रे ॥३॥

श्रीसुपार्श्वजिनचैत्यवन्दनम् ।

(महर्षिणीवृत्तम्)

प्रव्रीज शिवपुरसार्थवाहनाथ, चक्राण प्रबलमनोभवप्रमाथम् ।
कुर्वाण स्तुतिलवगोचरं सुनाथ,
कुरु स्व निजगुणलालसामनाथम् ।
देवेन्द्रैः प्रकटितभक्तिरागमारे समारं पुरपवरं हि मन्यमानैः ।
यो नेमे निरदगणैश्च बद्धरागैः,-र्यानिमऽनिरतगत स सरुणध्धु ।२।
सम्प्राप्ते पुरमपुनर्भवाख्यमीश, निनाथा विरहविपार्मिता प्रकामम् ।
नो चेत्स्मृतसमदर्शनं प्रविम्व, नो नूनं क्षुवि जनता प्रहर्षि
णीयम् ॥३॥

श्रीचन्द्रप्रभजिनचैत्यवन्दनम् ।

(ललितावृत्तम्)

चन्द्रप्रभ जनिविपूतसज्जन, चन्द्रप्रभ जनितहृष्टिमञ्जनम् ।
दम्भाधिदवविनतस्वशक्तितो, दम्भाधिदवमभिनौमि भक्तितः ।१।
सज प्रपनरविरूपरोचन, श्वेत सरोजदलनं गिरोचन ।
दया मति जिनपति स तामरं, यस्या जनुविभवनिर्जितामरम् ।२।
लोके जहर्ष तव दर्शनागमाद्,-ज्ञानमकर्षललिताज्जिनागमात् ।
क्विा शुजातमहसे न नन्दन,-मीश ! धमेशमहसेननन्दन ! ।३।

श्रीसुविधिनाथचैत्यवन्दनम् ।

(सुमुखी वृत्तम्)

कुतुकमिदं ननु पश्यत भो, भुवि जनचित्तसरोजमिदम् ।
सुविधिजिनस्य मुखेन्दुरयं, कुवलयवद् विशदीकुरुते ॥१॥
भवति न यस्य मनो रमते, भवति नरस्य न तस्य रतिः ।
किमु सुरपादपपादभिदि, शमुदयमेति करोप्यविदि ॥२॥
तव चरणाम्बुजवद्धरति,-र्गणधरवन्मनुजः सुमतिः ।
भुवि जनतासु-सुखी भवति, भवभयतश्च जनानवति ॥३॥

श्रीशीतलजिनचैत्यवन्दनम् ।

(चन्द्रवर्त्मवृत्तम्)

शीतल जिनपतिं नम जनते !, सगृहाण वरपुण्यमनन्तं ।
एतदथममरा अपि सततं, पूजनं विदधते दिवि मनतम् ॥१॥
पूजयन्ति जिनदेवचरणा,-नायलोकपथनिर्मितचरणाः ।
प्राणिनो विधिवदादरसहितं, मन्वते च भुवि तत्खलु महितम् ॥२॥
चन्द्रकान्तसमशीततनुजिन,—चन्द्र ! वर्त्म सुगतेर्देदमलम् ।
मामनल्पमतिरहितमशरणं, नाथ ! रक्ष दुरितादनिशरणम् ॥३॥

श्रीश्रेयांसजिनचैत्यवन्दनम् ।

(शालिनीवृत्तम्)

स्फूर्जत्कान्तिध्वस्तसंसारतान्ति,-
श्चञ्चच्छील प्रोज्झिताऽगुप्तलील ।
श्रीश्रेयांस सचितान्तश्शमाय,
कुर्यात्सौख्यं देवमन्योऽसमाय ॥१॥

विद्याबल्लीवर्धने वारिवाह,
र्ल्याध्वप्रापणे शक्तवाह ।
स श्रेयांसः श्रेयसा य सुखानि,
स श्रेयान् य सविधत्ता सुखानि ॥२॥
प्रत्यादर्शः श्रेयसो दर्शनस्य,
ध्यायन् चित्तं येन पापं न तस्य ।
स प्रासादात् सविधत्ते नरस्य,
यस्मात् श्रेयःशालिनी भक्तिरस्य ॥३॥

श्रीवासुपूज्यजिनचैत्यवन्दनम् ।

(स्वागतावृत्तम्)

वासुपूज्य ! कृतपुण्यकृतान्त, हेलया विजितरागकृतान्त ! ।
योगिनोऽपि विनमन्ति भवन्तं, रूत्यजेयुरथवा शुभवन्तम् ॥१॥
या चचाल निजनिश्चलभावात्, योगिनाथततिरप्यविभावात् ।
यदृशा विजयिनं हरिसूनु, तं जघान वसुपूज्यसुसूनु ॥२॥
स्वागताप्रभृतिवद्धनिबन्धैः, स्तवैः स्तुवन्ति कवयः शुचिबन्धैः ।
नो तथापि गुणवर्णनकृत्यं, पारयन्ति तव वर्णनहृत्ये ॥३॥

श्रीविमलजिनचैत्यवन्दनम् ।

(मन्दाक्रान्तावृत्तम्)

श्यामासूनो ! तव वरवचःश्रेणिपीयूषधारा,-
तृप्तात्मानः प्रकृतिसुभगा मानवा मानधाराः ।
उत्पद्यन्ते विबुधभुवनेपूत्तमेषूत्तमास्ते,
यत्रानन्दप्रबललहरीप्रोल्लसत्सौख्यमास्ते ॥१॥

हृयाहयप्रकटनविधौ यद्बलस्यो नितान्त,
ज्ञानोद्द्योत श्रुवि भविजन बोधयन् योनितान्तम्।
निर्मुक्तात्मा शिवसुखरति कर्मरोगैरपीडय ,
सर्वज्ञोऽसौ जयतु विमल सवदैरपीडय ॥२॥
मसागम्भोनिधिनतरी दुष्टभीनैरभस्याऽ,—
मन्दाक्रान्ता श्रमरमभरैर्दुर्मतागैरलभ्या ।
दत्तानन्दा भुवि जययशोविस्फुरद्वैजयन्ती,
सौख्य मूर्ति सुभग! भवती यन्ज्ञताद्वै जयन्ती ॥३॥

श्रीअनन्तजिनचैत्यवन्दनम् ।

(भुजगप्रयातवृत्तम्)

अनन्त जिन पुण्यवन्त ससन्त, क्षिपन्त कुकर्माघमर्तिं हरन्तम्।
जनान् रञ्जयन्त रिपून् सञ्जयन्त,नमामीश्वर त नर मुक्तिकान्तम् १
सदा सिद्धिसौख्यप्रियध्येयरूप, जितानङ्गरूप श्रिया जातरूपम्।
मुनिव्रातभूप शमापाररूप, नमस्याम्यनन्त जिन योगिरूपम् ।२।
भुजगप्रयाताऽध्वमुक्त सुभक्त, जराजन्महीन महानन्दलीनम्।
हतप्रीतिनाथ कृताऽघप्रमाथ, श्रयेऽनन्तदत्र सुपुण्याप्यसेव्रम् ।३।

श्रीधर्मनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(स्रग्विणीवृत्तम्)

धर्मनाथ स्तुत प्रौढबुध्यन्वित,—दवराजार्चित यस्य पादद्वयम्।
भव्यहंस श्रित पुण्यगन्धाश्रित, राजते पद्मशोभा परिह्रासयत् ।१।
धर्मनाथ 'त्वयोद्दिष्टम कृत,—वर्तना स्र्तनायोत्कटद्वेषिणाम्।
स्युर्जना सव्यसे त्व तत स्वाथिभि,र्दवरानासुरै केवलस्वार्थिभि

मंगिणी भक्तचेतस्तम-पूरिका, पूरिका स्वर्गाति श्रेयसां सम्पदाम्
मूतमवनिधा त यत्र माधिका, दीयता भद्रमानन्दमागाधिका ३

श्रीशान्तिनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(मालिनीवृत्तम्)

शिवपदसुखकारी कर्मविद्वेषिवारी,
मदनमदविभेदी विश्ववस्तुप्रवेदी ।
भवजलधिविशोषी पापवारप्रमोषी,
दिशतु कुशलमीश शान्तिनाथो मुनीश ॥१॥
स्वहृदि धृतभवन्त प्राप्तरागा भवन्त.,
तव नतिमुभवन्तस्ते नरा पुण्यवन्त ।
अतिशयमुखसार केवलालोकसार,
परमपदमुदार यान्ति भव्या मुदाऽरम् ॥२॥
प्रशमरसनिमुद्रा नाशिताशेषदुष्टा,
जगति जनितचित्रा पुण्यपोषै पवित्रा ।
महिमजितसमुद्रा मालिनी यस्य मुद्रा,
स जयति जिनशान्तिर्निर्जितस्वर्णकान्ति ॥३॥

श्रीकुन्थुनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(कामक्रीडावृत्तम्)

सम्यक्सार विघ्नस्तार श्रीदातार धातार,
चञ्चल्लोमारम्य गम्य योगीशानामीशानाम् ।
संसाराम्भोराशि तीर्ण सौजन्याकीर्णं विस्तीर्णं,
वन्दे देव कृत्वासेव कुन्थु भावं सर्वज्ञम् ॥१॥

त्यक्तासार ज्ञानोदार विश्वोद्धार विचार,
स्फूर्जद्योग मुक्तोद्योग भामा चन्द्र निस्तन्द्रम्।
सत्यानन्त पुण्योदन्त कीत्या कान्त सशान्त,
नन्द दत्त दत्तासेन सौरमशे रमेशे ॥२॥
आयुर्विद्युद्द्योताभ स्वलीला कीलाभामन्त,
विज्ञा विज्ञायाशु नीडा वामक्रीडा मनोज्ञन।
दु खोद्रेकच्छेदच्छक भव युद्रक विभ्राणा,
देवा सेवा यस्याऽतुनन् कुन्थु कुर्यात्कल्याणम् ॥२॥

श्रीअरनाथजिनचैत्यवन्दनम्।

(हरिणीवृत्तम्)

जनितजनतानन्द नन्द महोदयनीरधा,-
मनिरतिरतिप्रीतिप्रौढिप्रमुक्तमगुप्तगा ।
यत्मशरणा लब्धोत्वणा शरण्यमनिन्दित,
स दिशतु शिव दवीयस्तुर्भवान्तमनिन्दितम् ॥१॥
अतुलजवना यद्धत्पद्वा सुरासुरनायका,
यदभिगमने लब्धोत्कण्ठा भवन्त्यनिनायका ।
अराजिनपत पादद्वन्द्व सरोजविकस्वर,
दलयतुतरा पापद्वन्द्व प्रभाजितभास्वरम् ॥२॥
शुभमतिजनस्वान्तध्वान्तप्रणाशनभास्वर,
विदलितदरद्वेपाऽज्ञान निरागसमादरम्
हृदयहरणैर्हारि॰ क्षुब्धेतर हरिणीदृशा,
हृदयममल दवीयस्तोस्तनोतु सुख विशाम् ॥३॥

नयानयादिराजिता, ऽगमैर्गमैर्गरीयसी ।
प्रमाप्रमाणपूरिता, महर्षिहर्षिणी सदा ॥ २ ॥
दयोदयोज्ज्वला सदा,–ऽक्षयाऽ श्यामिनी निशाम् ।
धियोऽधियोगकारिणी, भियोऽभियोगनाशिनी ॥ ३
यदीदृशी सरस्वती, न रोचते सरस्वती ।
जनाय न सुवर्णिका, जगद्दशासुवर्णिका ॥ ४ ॥
नम ! नमे प्रमाणिका, नरस्य धीस्तदीदृश ।
मत मत विपर्यय–प्रसाधन नु धीदृश ॥ ५ ॥

श्रीनेमिनाथजिनचैत्यवन्दनम् ।

(पञ्चचामरवृत्तम्)

क्षण निरीक्ष्य वीक्षणे प्रतिक्षण नयान्वित,
क्षण यदप्रतीक्षित क्षमेशमण्डले स्थितौ ।
असारसंसृदुद्भवातिभीतिभाग्जनो यमा,–
श्रयेद्धिताय भक्तितस्तमाननोऽस्मि नमिनम् ॥ १ ॥
कुरङ्गरङ्गभङ्गभीरुताभरावभारित !,
निदर्शनीभवन् दयालुताजुषा दिशा धुरि ।
विवाहवाहनाहनानरुद्धराज्यहायक !,
भवन्तमीदृश दयालुमाश्रितोऽस्मि रक्ष माम् ॥ २ ॥
जयाभिलापिनाजिराजिराजिराजराजिताऽ-
प्रपञ्च ! चामरालिशोभिपार्श्व ! पार्श्वगावन ! ।
यदूज्ज्वलान्वयाम्बुराशिभासनाऽऽनभासुर !,
विधेहि मा भवाम्बुधेस्तटानुयायिन विभो ! ॥ ३ ॥

यस्माद्दुर्गुणसततिर्गतवती यस्य प्रपूत वचो,
यस्मिन् पङ्कजकामले जनमनो भृङ्गोपम लीयते ॥ २ ॥
स श्रीवीरविभुर्महत्त्वसुखकृत् दैवत सश्रये,
तेनास्मि प्रभुणा सनाथगणनस्तस्मै नति सदधे ।
तस्मान्नास्ति पर प्रभादिनकरस्तस्याङ्घ्रियुग्म स्तुवे,
तस्मिन्नेव च कर्मदन्तिदलने शार्दूलविक्रीडितम् ॥ ३ ॥
अङ्गर्षिनवभूवर्षे, पादलिप्तपुरे वरे ।
कल्याणविजयेनेय, चतुर्विंशतिका कृता ॥ १ ॥
इति मुनिवर्यश्रीकल्याणविजयविरचिता चैत्यवन्दनचतुर्विंशतिका समाप्ता ॥

---

२ स्तुति-सग्रह

मुनिराजश्रीकल्याणविजयादिविरचित. ।

श्रीआदिजिनस्तुति

(शौरसेन्याम्)

द्रुतविलम्बितवृत्तम्

पुरवपुण्णभराद् समज्जिय, नरभव विभवचिदमदिर ।
निजहिद जदि इच्छध माणसा, नमध नाभिसुद जिणनायग ॥१॥

[१] छाया—पूर्वपुण्यभरात् समर्च्य, नरभव विभवाञ्चितमन्दिरम् ।
निजहित यदि इच्छथ मानवा [१], नमत नाभिसुत जिननायकम् ॥

दलिददुक्खभग समदादरा, निरदिधम्मपसाहणतप्परा।
जिणवरा जणपऊमभक्खरा, सुमदिदा मम होन्तु सदक्खरा।१।
गमगहीरतलो नयसोहिदो, विविहभंगवियारविराइदो।
चदुरबुद्धिविगाहिदमज्झगो, सुमदिदो मम भोदु जिणागमो।२।
कटुय घोरउवद्दवणासण, जणमण करिदूण विकस्सर।
कुणदि जो जिणणाधमदुन्नदि, हरदु सो दुरिद मम गोमुहो ॥४॥

श्री शान्तिनाथजिनस्तुति

(मागध्याम्)

मालिनीवृत्तम्

दुल्दियणिदकस्ट दुस्तिदि दुक्खवेग्य,
कुणदि गलिदसत्त ये नलाण वलाण।
यणिदभुवणशती कुस्टिदाशेशभती,
दिशदु यणहिद शे शतिनाधे अणाधे ॥१॥

दलितदुःखभरा समतादरा, विरतिधर्मप्रसाधनतत्परा ॥
जिनवरा जनपद्मभास्करा, सुमतिदा मम भवतु सदक्षरा ॥
गमगभीरतलो नयशोभितो, विविधभङ्गविचारविराजित।
चतुरबुद्धिविगाहितमध्यक सुमतिदो मम भवतु जिनागम ॥
कृत्वा घोरोपद्रवनाशन जनमन कृत्वा विकस्वरम्।
करोति या जिननाथमतोन्नति, हरतु स दुरित मम गोमुख ॥
१ छाया—दुरितजनितकष्ट दुःस्थिति दुःखवेग्या,
करोति गलितसत्त्वा यो नराणा वराणाम्।
जनितभुवनशान्ति कुट्टिताशेषभ्रान्ति
दिशतु जनहित स ॥

शेदद्रमलगाशुच्चिग्गचेदा लमा शा,
अवरविमलगाशाभावमाबोहमाणी ।
चलणरमलमाल येमिमाणन्दशाल,
शलणमधिगदा ते दिन्तु मुक्ख यिणिदा ॥२॥
पलिमिदनियतेया जाइणत पयाश,
पलिरलिय तदस्त पत्तिदा शोमशूले ।
अणहिगदतदस्वा अन्तलिक्खे भमति,
दिशदु विमलविय आगमो शे यिणाण ॥३॥
रयिणमदशाले शतिभत्तेगपाले,
गयवलगदिशाले घत्तनिग्घप्पयाल ।
यिणचलणशलोव भिगभाव भयते,
हलदु विमलस्ती पावग वभसती ॥४॥

छाया—नवतरूमस्रासोद्विग्नचेता रमा सा,
अपरविमलवासाभावमारोधमाना ।
चरणकमलमाला येगामानन्दशाला,
शरणमधिगता ते ददता मोक्ष जिनेन्द्रा ॥
परिमितनिजतेजसो यस्याऽनन्त प्रकाश,
परिरक्ष्य तदर्थं प्रन्थितो सोमसूर्ये ।
अनधिगततदर्थो अन्तरिक्ष भ्रमत
दिशतु विमलविद्यामागम स जिनानाम् ॥
इतजिनमतसार शान्तिभक्तैकपाल ,

श्री नेमिनाथजिनस्तुति

(पैशाच्याम्)

उपजातिवृत्तम्

तूरातु तत्थून पसुप्पकार, तयालतापोसनबद्धचित्तो ।
गेन्हीअ यो तिक्खमभग्गशीलो, सुखाय सो नेमिजिनो जनान,

अञ्ञानअधीकतलोचनान, विवेकहीनान सता जनान ।
भवन्नवे ये वरयानतुल्ला, छिन्दतु ते दुक्खभर जिनिन्दा ॥२॥

ससारगेहे वरदीपकाभो महेसिन झत्ति गितिण्णलाभो ।
अपुव्वतत्तोघविसालदेहो, जिनागमो सव्वहितो जयेज्जा ॥३॥

नेमीसज्झानातु सुपत्तदेव-भवा भवारञ्ञविलघनत्थ ।
जिनिन्ददेव परिसेवमानी, विवकिन होतु सुखाय अवा ॥४॥

गजवरगतिसारो ध्वस्तविघ्नप्रचार ।
जिनचरणसरोजे भृगभाव भजन्,
हरतु विमलकाति पापक ब्रह्मशाति ॥

१ छाया-दूरात् दृष्ट्वा पशुप्रकार, दयालताशोषणबद्धचित्त ।
अग्रहीत् यो दीक्षामभग्नशील, सुखाय स नेमिजिनो जनानाम् ॥
अज्ञानाधीकृतलोचनाना विवेकहीनाना सदा जनानाम् ।
भवार्णवे ये वरयानतुल्या, छिन्दन्तु ते दुःखभर जिनेन्द्रा ॥
ससारगेहे वरदीपकाभो महर्षीणा झगिति गतीर्णलाभ ।
अपूर्वतत्त्वौघविशालदेहो जिनागम सर्वहिता जयतात् ॥
नेमीशध्यानात् सुप्राप्तदेवभवा, भवारण्यविलघनार्थम् ।
जिनेन्द्रदेव परिसेवमाना, विवेकिना भवतु सुखाय अवा ॥

श्री पार्श्वनाथजिनस्तुति.

(चूलिकापैशाच्याम्)

वसन्ततिलकावृत्तम्

नागाधिराजधरनितविसालचित्त-
फूमिप्परूठवरफत्तिलतानिकुंचे ।
राहीअ नो चलनपत्थमनोमरालो,
यस्माफिलाममपि सो विचयाय पासो ॥१॥
तारित्तताथपरितद्दसरीरलोक,
सपूरितासखनथुट्ठिविफिन्नताप ।
सपावितून समधम्मसमातरा ये,
तिक्खं फचन्ति सितता मम ते चिनिंदा ॥२॥
सुत्थोतनस्स तनयस्स मत न रम्म,
एक्कतनाससिसयो न हु वत्थु लोके ।

---

[1] छाया—नागाधिराजधरणेन्द्रविशालचित्त
भूमिप्ररूढवरभक्तिलतानिकुञ्जे ।
अकार्षीत् नो चरणपद्ममनोमरालो,
यस्याभिलापमपि स विजयाय पार्श्व ॥
दारिद्र्यदावपरिदग्धशरीरलोक,
सपूरिताशघनवृष्टिविभिन्नताप, ।
सपाद्य शमधर्मसमादरा ये,
दीक्षां भजन्ति शिवदा मम ते जिनेन्द्राः ॥
शुद्धोदनस्य तनयस्य मत न रम्य,
एकान्तनाशविषयो न खलु वस्तु लोके।

एकतयुच्चविसयोपि न साधुवातो,
तम्हा नमामि सियवातमतं चिनान ॥३॥
दुक्खरनातपरिफापितदुट्ठदेवो,
हत्थत्थमप्पपरितासितविक्खमूसो।
पासप्पसाततरूलत्थसतानिवासो,
सुक्खाय भोतु सततं मम पासयक्खो ॥४॥

श्रीवर्धमानजिनस्तुति
(अपभ्रंशभाषायाम्)
पञ्चचामरवृत्तम्

कमोवले गभव्वसगमस्सु भाविसामले,
सुपत्तु जस्सु धीरदासुवण्णु जाउ उज्जलु।
सुरिंदचक्कवागवासराहिणाधु सो जिणु,
सभत्तिह मणुस्सह सुहाय णादनंदणु ॥१॥

एकान्तभीर्यविषयोऽपि न साधुवाद,
तस्मान्नमामि स्याद्वादमतं जिनानाम् ॥
दुष्कारनादपरिभापितदुष्टदेवो,
हस्तस्थसर्पपरित्रासितविघ्नमूषक ।
पार्श्वप्रसादतरुतलस्थसन्निवास
सौख्याय भवतु सततं मम पार्श्वयक्ष ॥

१ छाया— कपोपले अभव्यसगमकस्य भाविदयामले,
सुप्राप्त यस्य धीरता सुवर्ण जातमुज्ज्वलम्।
सुरेन्द्रचक्रवाकवासराधिनाथ स जिन,
सभक्तिकाना मनुष्याणा सुखाय ज्ञातनन्दन ॥

सकम्मरोगहि पपीलिया पनट्ठचेयणा,
मलीणवासणाउला अपत्थसेवणापरा ।
कह नु हुंत माणवा न हुंत भूतले जइ,
परोवयारलद्धजम्मधम्मविज्जगा जिणा ॥२॥
विमुत्तिमग्गदंसणग्गधारु विग्घवज्जिउ,
दुरन्तदुग्गदिप्पवेसरोहलोहअग्गलु ।
जयप्पयासु सामि जोगखेमकारगुत्तमु,
करउ नट्ठदुक्खजालु सो मइ जिणागमु ॥३॥
सुवण्णवण्णदहकतिभारभासिअंबरा,
पकामकामियत्थसत्थदाणि अप्पतारणी ।
जिणस्सु वीरहो सुभत्तिसत्तितत्तिवज्जिआ,
सिरिद्ध सिद्धएवि दउ भव्वह सुमंगलु ॥४॥

स्वकर्मरोगपीडिता प्रनष्टचेतना
मलिनवासनाकुला अपथ्यसेवनादरा ।
कथं न्वभविष्यन् मानवा नाऽभविष्यन् भूतले यदि,
परोपकारलब्धजन्मधर्मवैद्यका जिना ॥
विमुक्तिमार्गदर्शनाग्रद्वार विघ्नवर्जित,
दुरन्तदुर्गतिप्रवेशरोधलोहार्गला ।
जगत्प्रकाश स्वामी योगक्षेमकारकोत्तम,
करोतु नष्टदुःखजालं स मां जिनागम ॥
सुवर्णवर्णदेहकान्तिभारभासिताम्बरा
प्रकामकामितार्थसार्थदाने अप्रतारणी ।
जिनस्य वीरस्य सुभक्तिसक्तितृप्तिवर्जिता
श्रीदा सिद्धादेवी ददातु भव्यानां सुमंगलम् ॥

श्रीदीपमालास्तुति
(शिखरिणीवृत्तम्)

गतो भावोद्योत परमनिमलज्योतिरधुना,
ततो द्रव्योद्योत भुवि वितनुमस्तस्य विरह ।
इति प्राज्ञैरष्टादशभिरजनीज्ञानिभिरहो,
कृता दीपालीयं जयति जयदा वीरजपत. ॥१॥
न मे कामैरर्थं परमसुखभैरर्थनिकरै,
कृत राज्येनाऽल सुतममरलोकर्धिविभवै ।
जनाना ससारभ्रमणमतिभिर्मानिनगणै,-
र्लभेय दुष्पापा जिनपपदपद्मेषु वसतिम् ॥२॥
श्रुते श्रोत्रानन्द परममनुभूतेऽघार्नेलयो,
मन शुद्धिर्ध्याते विमलवचनो यत्र पठिते ।
भवेत्सेवायोग्यो विहितवरसेवे च मनुज,-
स्तमानन्दोद्बोध जिनपतिकृतान्त प्रणमत ॥३॥
धृतश्रद्धा सघे विहितविनया वीरविभवे,
भव सौख्य दात्री जिनवरवचोबद्धमनसाम् ।
परा सम्यग्दृष्टि सुमतिजनसतापशमनी,
सदा सिद्धादेवी भवतु भविनां दु खदमनी ॥४॥

श्री वीरजिनस्तुति
(आर्या छद)

सो जयउ जणाणदो, वीरजिणो सयलगुणगणालीढो ।

जस्स विलीणा सव्वे, रागद्दोसादओ दोसा ॥ १ ॥
अन्नाणतमविणासण,–रविरूप्पे कप्परुक्खतुल्लयरे।
अज्झप्पधम्मकुसले, जिणचन्दे वंदिमो सिरसा ॥ २ ॥
तिहुअणगिहगयवर गु,–प्पयासपवणो कुमारुआगम्मो।
एगंतसलहदाहो, जिणागमो दीवओ जयउ ॥ ३ ॥
सिरिवीरभत्तिभावा, गयपावा दलियविग्घसब्भावा।
कल्लाणमग्गलाभ, जणस्स सिद्धाइआ कुणउ ॥ ४ ॥
इति मुनिवर्य श्रीकल्याणविजयविरचित स्तुतिसंग्रह समाप्त।

विविधस्तुतियाँ

श्री ऋषभदेव जिन स्तुति

प्रह उठी वंदु ऋषभदेव गुणवंत,
प्रभु बेठा सोहे समवसरण भगवंत।
त्रण छत्र बिराजे चामर ढाले इंद,
जिनना गुण गावे सुरनरनारीना वृंद ॥ १ ॥
बार परखदा बेसे इंद्र इंद्राणी राय,
नव कमल रचे सुर तिहां ठविया प्रभु पाय।
देव दुंदुभि वाजे कुसुम वृष्टि बहु हुंत,
एम जिन चोवीसे पूजो भवि एक चित्त ॥ २ ॥
जिण जोजन भूमि वाणीनो विस्तार,

प्रभु अरथ प्रकाशे रचना गणधर सार ।
सो आगम सुणता छेदीजे गति चार,
जिन वचन वखाणी लहिये भवनो पार ॥ ३ ॥
यक्ष गोमुख गिरुओ जिननी भक्ति करेव,
तिहा देवी चक्केसरी विघन कोड हरव ।
श्री तपगच्छ नायक विजयसेनसूरिराय,
तस केरो श्रावक ऋषभदास गुण गाय ॥ ४ ॥

श्री शान्तिनाथ जिन स्तुति

शाति जिनेसर समरिये जेनी अचिरा माय,
विश्वसेन कुल उपन्या मृगलछन पाय ।
गजपुर नयरीना धणी कचन वरणी छे काय,
धनुष चालीसनी देहडी लाख वरसनु आय ॥ १ ॥
शाति जिनेसर सोलमा चक्री पचम जाणु,
कुथुनाथ चक्री छट्ठा अरनाथ वखाणु ।
ए त्रणे चक्री [illegible] देखी आणदु,
सजम लइ मुक[illegible]या नित्य उठीने वदु ॥ २ ॥
शाति जिनेसर केवली वेसी धर्म प्रकाशे,
दान शीयल तप भावना नर सोय अभ्यासे ।
एह वचन जिनजी तणा जेणे हियडे धरिया,
सुणता समकित निर्मला निश्चय केवल वरिया ॥ ३ ॥
समेत शिखर गिरि उपरे जेणे अणसण कीधा,

काउस्सग्ग ध्यानमुद्रा रही जेणे मोक्ष ज सीध्या ।
जक्ष गरुड समरु मदा देवी निर्वाणी,
भविक जीव तमे साभलो ऋषभदासनी वाणी ॥ ४ ॥

गिरनार नेमिजिनस्तुति

सुर असुर वदित पायपङ्कज मयणमल्ल अक्षोभित,
घन मघन श्यामशरीरसुदर शख लछन शोभितम् ।
शिवादेवि नदन त्रिजगवदन भविक कमल दिनेश्वर,
गिरनार गिरिवर शिखर वदू नेमिनाथ जिनेश्वरम् ॥ १ ॥

अष्टापदे श्री आदिजिनवर वीर पावा पुरिवर,
चपापुरी श्रीवासुपूज्यजी नेमि रैवयगिरिवरम् ।
सम्मेत शिखरे वीस जिनवर मुक्ति पहोता मुनिवर,
चोवीस जिनवर तेह वदू सयल सघ सुहकरम् ॥ २ ॥

अग्यार अग उपाग बारे दश पयन्ना जाणिये,
छ छेद ग्रथ पसत्थअत्था चार मूल वखाणिये ।
अनुयोगद्वार उदार नदीसूत्र जिनमत गाइये,
वृत्ति चूरणि सूत्र आगम पच चालीश ध्याइये ॥ ३ ॥

विहु दिशि बालक दोय जेहने सदा भवियण सुखकर,
दुख हरे अबालुवि सुदर दुरिय दोहग अपहर ।
गिरनारमडण नेमिजिनवर चरणपकज भयहर,
श्रीसघ मगल करे अबादेवी दवे शुभ वरम् ॥ ४ ॥

श्रीपार्श्वनाथजिनस्तुति

पास जिणदा वामानदा जब गरभे फली,
सुपना दखे अर्थ विशेषे कह मघवा मली ।
जिनवर जाया सुर हुलराया हुआ रमणीप्रिये,
नेमिराजी चित्त विराजी विलोकित व्रत लिये ॥ १ ॥
वीर एकाकी चार हजारे दीक्षा धुर जिनपति,
पास ने मल्लि त्रयमत साथे बीजा सहसे व्रती ।
षट्शत साथे सजम धरता वासुपूज्य जगधणी,
अनुपम लीला ज्ञानरसीला दजो मुजने घणी ॥ २ ॥
जिनमुख दीठी वाणी मीठी सुरतरु वेलडी,
द्राख विहासे गइ वनवासे पीले रस सेलडी ।
साकर सेती तरणा लेती मुखे पशु चावती,
अमृत मीठु स्वर्गे दीठु सुरवधू गावती ॥ ३ ॥
गजमुखदक्षो वामन जक्षो मस्तके फणावली,
चार त वाही कच्छपवाही काया जस शामली ।
चउकर प्रौढा नागारूढा देवी पदमावती,
सोवन काति प्रभुगुण गाती वीर घरे आवती ॥ ४ ॥

श्रीपार्श्वनाथजिनस्तुति

द्रें द्रें कि धप मप धु धु मि धों धों ध्रसकि धर धप धोरव,
दों दों कि दो दो द्रागड्दि द्रागड्दिकि द्रमकि द्रण रण द्रेणवम् ।
झझि झेंकि झें झें झणण रण रण निजकि निज जनरजन,

सुरशैलशिखरे भवतु सुखं पार्श्वजिनपतिमज्जनम् ॥१॥

कट रेंगिनि धागिनि रूटिति गिगट्टा धुधु कि धुट नट पाटव,
गुण गुणण गुण गण रणकि णं णे गुणण गुण गण गौरवम्।
झझि झें कि झें झें झणण रण रण निजकि निज जन सज्जना,
कलयति कमला कलित कलिमलमकलमीशमह जना ॥२॥

ठूकि ठेंकि ठूं ठूं ठहिं ठहिति ठहिं पट्टा ताडयते,
तल लांकि लों लो त्रेंखि त्रेंखिनि डेंखि टेंसिनि वाद्यते।
ॐ ॐ कि ॐॐ कथुगि कथुगिनि धोगि धोंगिनि कलरवे,
जिनमतमनत महिमतनुता नमत सुरनरमुत्सव ॥३॥

सु दाखि सुदा सुसुहदि सुदा सुसुहदि दो तों अवरे,
चाचपट चच पट रणकि णों णं डणण डें डें डवर।
तिहा सरगमपधुनि–निधपमगरम ममममम सुर सेवता,
जिननाटयरंगे कुशलमनिश दिशतु शासन देवता ॥४॥

अध्यात्मगर्भित महावीरजिनस्तुति

उठि सवेरे सामायिक लीधु पिण बारणु नवि दीधुजी,
काले कूतरो घरमाहे पठो घी सघलु तेणे पीधुजी।
उठो ने वहूअर आलस मूकी ए घर आप सभालोजी,
निजपति ने कहो वीरजिन पूजी समकित ने अजुआलोजी
चले निलाडे झडप झपावी उन्दरडे सवि फोडीजी,
चचल छैया रापा न रहे राग भागी माल त्रोडीजी।
तेह विणा रेंटियो नवि चाले मौनभलु कोने कहियेजी

ऋषभादिक चउवीस तीर्थंकर जपिय तो सुख लहियजी ॥२॥
घर गामीद् करोने नहुअर टालो ओजीमालुजी,
चोरटो एक कर छे हरो ओरड द्योने तालुजी ।
लखवया प्राहुणा चार आव छे ते ऊभा नवि राखोजी,
शिवपद सुख अनतु लहिय जो जिन वाणी चाखोजी ॥३॥
घरनो ग्रूणो फोल खणे छे बहु तुम मनमा लावोजी,
पोढे पलगे प्रीतम पोढयो प्रेम धरीने जगावोजी ।
भाग्यप्रभ सूरि कह नहीं ए कथलो अध्यातम उपयोगीजी,
सिद्धायिका दवी सानिध्य थइये ते शिवपद भोगीजी ॥४॥

सीमधरजिनस्तुति

सीमधर जिन वर आतमना आधार,
प्रभु त्रिगड वेठा भाखे अर्थ विचार ।
वइ भव्यजनोने तार्या दीन दयाल,
सौभाग्यविजयनी दूर करो जजाल ॥१॥

श्रीसिद्धाचलस्तुति

शत्रुजय गिरि तीरथ मोटु आदीश्वर जिहा सोहजी,
दहरा उचा गगने अडिया योगीश्वर मन मोहजी ।
भव जल तरवा मानु प्रवहण भाख्यु ग्रन्थ मझाराजी,
प्रात उठीने वदन करीये सौभाग्यविजय सुख सारजी ॥१॥

सीमधरजिन स्तुति

श्रीसीमधर मुजने वाला आज भलु सुविहाणुजी,

त्रिगडे तेने तपता जिनवर मुज सूख्या हु जाणुंजी ।
केवल कमला केलि करता कुलमडण कुलदीवोजी,
लाख चोराशी पूरव आयु रुकमिणी वर घणु जीवोजी ॥१॥
सप्रति काले वीश तीर्थंकर उदया अभिनव चदाजी,
केइ कुवली केइ वालक परण्या केइ महीपति सुखकन्दाजी ।
श्रीसीमधर आदि अनोपम महाविदेह जिणदाजी,
सुर नर कोडाकोडी मिली तिहां जोव मुख अरविंदाजी ॥२॥
श्रीसीमधर त्रिगडो जोवा हु अलजायो प्राणी जी,
आडा डुगर आवी न शकु वाट विषम अरु पाणी जी ।
इण क्षेत्रे रही पाय हु लागु सुर अर्थे मन आणीजी,
अमृत रसथी अधिक वखाणी जीवदया पटराणीजी ॥३॥
पचागुली में प्रत्यक्ष दीठी जाणु हु जगमाताजी,
पहरण चरणा चोली पटोली अधर अनोपम राताजी ।
स्वर्णभुवन सिंहासण बैठी तूहीज देवी विख्याताजी,
सीमधरशासनरखवाली शाविद्गुलसुखदाताजी ॥४॥

बीज की स्तुति

महीमडण पुण्णसोवण्णदेह,
जणाणदण केवलनाणगेह ।
महानदलच्छी-बहुबुद्धिराय,
सुसेवामि सीमधर तित्थराय ॥१॥
पुरा वारगा ने य जीवाण जाया,

भविस्संति जे भव्वभव्वाण ताया ।
तहा सपय जे जिणा वट्टमाणा,
सुह दितु म न तिलोयप्पहाणा ॥२॥
दुरुत्तारसंसारकुव्वारपोय,
कलंकावलीपंकपक्खालतोय ।
मणो वछियत्थेसु मदारकप्प,
जिणिदागम वदिमो सुमहप्प ॥३॥
विकोसे जिणिदाणणंभोजलीणा,
कलारूव-लावण्ण-सोहग्गपीणा ।
वहतस्स चित्तमि निच्चपि झाण,
सिरी भारई दहि मे सुद्धनाण ॥४॥

बीज की स्तुति

जम्बूद्वीपे अहोनिश दीप दोय सूर्य दोय चदा जी,
ताम विमाने श्रीऋषभादिक शाश्वत नाम जिणदा जी ।
तेह भणी उगते शशी निरखी प्रणमे भविजनवृदा जी,
बीज आरोपे धर्मनु बीजे पूजी शाति जिणदा जी ॥१॥
द्रव्य भाव दोय भेद पूजो चोवीसे जिनचदा जी,
बधन दोय दूर करीने पाम्या परमाणदा जी ।
दुष्ट ध्यान दोय मत्त मतगज भेदन मत्तमयदा जी,
बीजतणे दिन जे आराधे ते जगमा चिरनदा जी ॥२॥
द्विविध धर्म जिनराज प्रकाशे समवसरण मडाणे जी,

निश्चय ने व्यवहार बेहुसु आगम मधुरी वाणे जी ।
नरक तिर्यंच गति दोय न होवे बीजने जे आराधे जी,
द्विविध दया त्रस थावर केरी करता शिवसुख साधे जी ॥३॥
बीज चद परे भूपण भूपित दीप निलवट चदा जी,
गरुड यक्ष नारी सुखकारी निरवाणी सुखकदा जी ।
बीज तणो तप करता भविने समकित सानिध्यकारी जी,
धीरविमल शिष्य कहे नय सघना विघ्न निवारी जी ॥४॥

पचमी की स्तुति

पाचमने दिन चोसठ इद्र नेमिजिन महोत्सव कीधो जी,
रूपे रभा राजीमतीने छडी चारित्र लीधो जी ।
अजनरत्नसम काया दीपे शख लछन सुप्रसिद्ध जी,
केवल पामी मुक्ति पहोता सघला कारज सिद्ध जी ॥१॥
आबु अष्टाद ने तारगा शत्रुजय गिरि सोहे जी,
राणकपुरले पार्श्व शखेश्वर गिरनार मन मोहे जी ।
सम्मेतशिखर ने वली वैभारगिरि गोडी थंभण वदो जी,
पचमीने दिन पूजा करता अशुभ कर्म निकदो जी ॥२॥
नेमि जिनेश्वर त्रिगडे बेठा पचमी महिमा बोले जी,
बीजा तप जप छे अति वहोला नही कोइ पचमी तोले जी ।
पाटी पोथी ठवणी कवली नोकरवाली सारी जी,
पचमीनु उजमणु करता लहिये शिववधू प्यारी जी ॥३॥

शासनदवी सानिध्यकारी आराधे अति दीपे जी,
काने कुडल सुवर्ण चूडी रूप रमझम दीपे जी ।
अंबिका दवी विघ्न हरेवी शासन सानिध्यकारी जी,
पडित हतविजय जयकारी जिन जप जयकारी जी ॥४॥

मौन एकादशी की स्तुति

मृगशिर सुद एकादशी ए भाखी नेमिजिणद तो,
मुक्ति वधूनो माडवो ए आदरे कृष्ण नरिंद तो ।
वर्ष अग्यार आराधिय ए एकादश वली मास तो,
आवजीव लगि जे कर ए पामे शिवपुर वास तो ॥ १ ॥
कल्याणक कह्या एह तिथि ए नेउजिनना जाण तो,
त्रीश चोविसी तिहा थकीए पच पच गिणती आण तो ।
भरतादिक दश क्षेत्रना ए जिनवर सघला जाण तो,
त्रणे काल मिली ध्यावता ए पामे पद कल्याण तो ॥ २॥
अग अग्यार जे भणे ए पडिमा तप अग्यार तो,
सुव्रत शेठ तणी परए सुर पदवी लहे सार तो।
अग्यार अग्यार प्रकारनी ए पामे परिगल ऋद्ध तो,
आगमने आराधता ए भवियण पामे सिद्ध तो ॥ ३ ॥
नेमिनाथ जिनवर कहे ए एकादशी अधिकार तो,
पूछे कृष्ण नरेशरु ए निशुणे परषदा बार तो ।
शुणी अनुमोदे आदरे ए मानव परे जग सार तो,
शासन दवी सुरकरु ए कीर्तिचद्र हितकार तो ॥ ४ ॥

रोहिणी तप की स्तुति

रोहिणी तप रंगे करो प्राणी, सकल सुमग-
ल कारण जाणी, लाभ लहो गुणखाणी ।
अजित जिणंद नो जन्म ते जाणी, आवे
इंद्र अने इंद्राणी, भाव अधिक मन आणी ॥ १ ॥
अतीत अनागत ने वर्तमान, च्यवन जन्म
दीक्षा गुणखाण, केवल मुक्ति कल्याण ।
दश क्षेत्रे दाख्या जिन भाण, नक्षत्र रोहि-
णी छे गुणखाण, आदरो भवि शुभजाण ॥ २ ॥
पद्मप्रभुनी एहज वाणी, सुगंधकुमारे
साची जाणी, पर्षदा हर्ष भराणी ।
तप करी काया निर्मल कीधी, अजरामर
पदवी जेणे लीधी, शिवरमणी वश कीधी ॥ ३ ॥
शासन देवी मोले वखाण, जग उद्योत कर
जिण भाण, आप बुद्धि विन्नाण ।
रोहिणी राणी ए तप कीधो, भव त्रीजे सवि
कारज सीधो, कीर्तिचन्द्र जस लीधो ॥ ४ ॥

श्री पर्युषणापर्व की स्तुति

सत्तर ... जिन पूजा रचीने स्नात्र महोत्सव कीजे
ढोल ... नफेरी झल्लरी नाद सुणीने जी

वीरजिन आगइ आलो भावा भावना करीइं जी,
पापपङ्कगला दूर कुमत अम्भा रूप आर्पीयजा ॥ १ ॥
मास पास दश दशम दुवालश चत्तारि अट्ठ कीजे जी,
उपर वली दश दोय करीने जिन चउवीस पूजीजे जी।
वडा कल्पनो छठ करीने वीर चरित्र सुणीजे जी,
पडवे दिन जन्म महोच्छव धवल मंगल वरताये जी ॥२॥
आठ दिवस लग अमर पळाळि अट्ठमनो तप कीजे जी,
नागकेतुनी परे केवल लहिये जी शुभ भाव धरीजे जी।
तेलाधर दिन त्रण कल्याणक गणधर वाद वदीजे जी,
पास नमीसर अन्तर वीर साम चरित्र सुणीजे जी ॥३॥
बारसें सूत्र ने सामाचारी संवच्छरी पडिकमिये जी,
चैत्य प्रवाडी विधिशुं कीजे सकल जन्तुने खमीये जी।
पारणाने दिन साहमीवच्छल कीजे अधिक वडाइ जी,
मानविजय कहे सकल मनोरथ पूरे देवी सिद्धाइ जी ॥४॥

इति स्तुतिसंग्रह ।



३ अथ स्तवनसंग्रह

श्री ऋषभदेवजिनस्तवन

बालपणे आपण ससनेही, रमता नव नव वेशे। आज तमे पाम्या प्रभुताई, अमे तो संसारनिवेशे हो प्रभुजी ओलभडे मत खीजो ॥१॥

जो तुम ध्याता शिवसुख लहीये, तो तुमने केइ ध्यावे। पण भवस्थिति परिपाक थया विण, कोइ न मुक्ति जावे हो प्रभुजी ओलभडे० ॥२॥

सिद्ध निवास लहे भवसिद्धि, तेमा शो पाड तुमारो। तो उपगार तुमारो वहिये, अभवसिद्धिने तारो हो प्रभुजी ओलभडे० ॥३॥

ज्ञानरतन पामी एकाते, थइ बेठा मेवासी। ते माहेलो एक अंश जो आपो, तो वाते शाबासी हो प्रभुजी ओलभडे० ॥४॥

अक्षय पद देता भविजनने, संकीर्णता नवि थाय। शिवपद देवा जो समरथ छो, तो जश लेता शु जाय हो प्रभुजी ओलभडे० ॥५॥

सेवागुण रज्या भविजनने, जो तुमे करो वडभागी। तो तुमे स्वामी केम कहेवाओ, निर्मम ने नीरागी

नाभिनदन जगनदन प्यारो, जगगुरु जग जयकारी ।
रूपविजुधनो मोहन पभणे वृषभलछन बलिहारी हो प्रभुजी
सोलभदे० ॥ ७ ॥

श्रीआदिजिनस्तवन

आदि जिणद प्रभु अरजी लीजे, शिवरमणी सुख दीजे रे ।
शुभ नजर करी साहिब मुजने, दरिसन वेल्हा दीजे र ॥
साहिब प्यारो रे, साहिब प्यारो मुजने तारो, भवोदधिपार
उतारो र । साहिब प्यारो रे ॥ आकणी ॥१॥

पाचे आठे मुजने पीडऱ्यो, नर्क निगोद नचायो रे । काल
अनादि कुमति सगे, जन्म मरण दुख पायो रे । साहिब० ॥२॥

मोहराजानो मत्री मलियो सोल सगाते भलीयो रे ।
तृष्णा तरुणी आणी मेली, काम कीचडम कलीयोरे॥साहिब॥३॥

तेरे बावीस तेतीस टाली, सत्तावन छटकायारे । दश
चोरासी दूर करीने, नाभिनदन ध्यायारे ॥ साहिब० ॥४॥

पाटणपुरम ऋषभ जिनेश्वर, भेव्या मन शुद्ध भावे रे ।
आदिजिननु समरण करता, कीर्तिचद्र सुख पावे रे ॥
साहिब० ॥५॥

श्री आदिजिनस्तवन

प्रथम जिनेश्वर प्रणमिये, जास सुगधी रे काय ।
कल्पवृक्ष परे तास इद्राणी नयन जे, भृग परे लपटाय ॥१॥

रोग उरग तुज नवि नडे, अमृत जे आस्वाद ।
तेहथी प्रतिहत तह मानु कोइ नवि करे, जगमा तुमशु रे वाद ।२।
वगर धोइ तुज निर्मली काया कचनवान ।
नही प्रस्वेद लगार तार तु तेहने, जे धर ताहरु ध्यान ॥३॥
राग गयो तुज मन थकी, तहमा चित्र न कोय ।
रुधिर आमिषथी राग गयो तुज जन्म थी, दूध सहोदर होय॥४॥
श्वासोश्वास कमल समो, तुज लोकोत्तर वात ।
देखे न आहार नीहार चमचक्षु धणी, एहवा तुज अवदात ॥५॥
चार अतिशय मूलथी, ओगणीस देवना कीध ।
कर्म खप्याथी अग्यार चोत्रीस इम अतिशया, समवायागे प्रसिद्ध ॥६॥
जिन उत्तम गुण गावता, गुण आवे निज अग ।
पद्मविजय कहे एह समय प्रभु पालजो, जिम थाउ अखय अभग ॥७॥

श्री आदिजिनस्तवन

आज आनद अपार, हमारे आज आनद अपार ।
मरुदेवीनदन कर्म निकदन, निरख्या नाभिकुमार, हमारे॥१॥

अजर अमर अकलक जिनेश्वर,
रूपस्वरूप मदार हमारे० ॥२॥
अशरण शरण करुण जगनायक,

केशरीयाजी का स्तवन

(केशरीया थाशु प्रीत यह राग)

केशरिया प्यारा मनड़ मोह्यु रे तारा रूप मे,
सावरीया मारा दिल लोभाणु रे तारा रूपमे ।
नगर धुलेवा शोभतो रे, मंदिर है गुलजार
बावन जिनालय माह विराजे, केशरिया सरकार रे
केशरीया प्यारा ॥१॥

श्याम वरण तू मोहनगारो, करुणा रस भंडार,
संघ सकल दर्शन कु आवे, कर पूजन सुखकार रे केश ॥२॥
परिकर सारो है रुपरी, अंगीया झाकझमाल ।
काने कुंडल शिर पर सोहे, मुगट ने फूलमाल रे केश ॥३॥
रंग रूपालो है लटकालो, मुख सुंदर है भारी ।
नरनारी सब मोहि रह्या रे, जाउ तुज बलिहारी रे केश ॥४॥
उगणीसे चीआसी वर्षे, वदि चौदस पोष मास ।
खरतगछ के संघ साथ, यात्रा करी तुम खास रे केश. ॥५॥
कल्पवृक्ष चिंतामणि प्यारो, केशरीया महाराज ।
सौभाग्यविजय स नेण मिलाजो, करो सफल मुज काज रे
केशरीया० ॥६॥

श्रीऋषभदेव जिन स्तवन

(राग माढ)

प्रभु छो अविकारा, भुवन आधारा, ऋषभ प्रभु भगवान ।
दिल हरनारा, मोहनगारा, लागो छो प्यारा ऋषभ प्रभु भगवान ॥आं॥
अति उपगारी नाथ हमारा, भव भय भंजनहार ।
हाथ जोडी तुम पायमा रे, पडीयें स्वामी निहार रे, प्रभु
दिल हरनारा ॥१॥

आदि पिता नृप आदि छो रे, आदि गुरु आदिदेव ।
सकल कला तुमने दर्शाइ, नमिये देवाधिदेव रे, प्रभु० ॥२॥
केवल ज्ञान जे ताहरु रे, चमके तेज अनंत ।
विश्व माहि ते सघळे छवायु, नाथ नमो गुणवंत रे, प्रभु० ।३।
देव देवी मली अप्सरा रे, ठम ठम ठमके पाय ।
आनंद रस भर नाच करती, तुम गुण रंगे गाय रे, प्रभु० ।४।
स्मरण मधुरु आपनु रे, कष्ट सहु हरनार ।
एम जाणी तुम पाय पडे छे, हरखे सकल संसार रे, प्रभु० ॥५॥
सव गुणी अरिहंत छो रे, वांछित फल दातार ।
विजयसौभाग्यना कष्ट निवारी, आपो शांति अपार रे ।
प्रभु दिल हरनारा० ॥६॥

ऋषभदेव स्तवन

(दाम परे दया लावो रे यह राग)

आदि प्रभु मने तारो रे, दयाल स्वामी आदि प्रभु मने तारो आ० ।
इन्द्रादि पूजत पाया, इन्द्रनार मन म ध्याया ।
आशा प्रभु मारी पूरो पूरो रे, दयाल स्वामी० ॥१॥
मिथ्यात्व अधारु मारु, आज भाग्यु मननु सारु ।
देखी छबी तारी रूडी रूडी र, दयाल० ॥२॥
ससारजाल भारी, नाथ वार पल में मारी ।
जाव भव भव ना फरा फेरा रे, दयाल० ॥३॥
सभाल ले नाथ मारी, स्नेह शुद्ध दिल म धारी ।
वीनति करु शिर नामी र, दयाल० ॥४॥
सौभाग्य वाछित पूरो, कर्म फद सघला चूरो ।
आपो शिवरमणी प्यारी प्यारी रे, दयाल० ॥५॥

आहोर ऋषभदेव स्तवन

(जै जै सुख कर दु ख हर० यह चाल)

ॐॐ जगपति अशरण शरण नाथ प्रभु जाउ वलिहारी ॐ।
मूरति कैसी मोहनगारी, नाथ तुमारी अति सुखकारी ।
देखत हम मन लग रही प्यारी, ॐॐ ॥१॥
काने कुडल शिर पर सोहे, ताज सोनेरी अति मन मोहे ।

रुठ नरसर हार ही सोह, ॐॐ ० ॥२॥
सुदर तेरा अचरिज कारी, रूप दिखाता है अनिकारी ।
मैं नहीं समजत ना मति मेरी, ॐॐ ० ॥३॥
हे जगनायक दीन दयालो, भव्य जना के दुख सब टालो ।
अतर हम कर दो उजियालो, ॐॐ ० ॥४॥
आहोर नगर आदि जिनदा, भेट लिया है परमानदा ।
विजय सौभाग्य क मिट गया फदा ॐॐ ० ॥५॥

आदि प्रभु गायन

भर लावो र चगेरी फूलन की,
आगी रचावो नाभिनदन की, भर लावो रे० ॥१॥
चपो चवेली मरवो मोगरो,
बीच में कलिया गुलाबन की, भर० ॥२॥
चुन चुन कलियां अगियां बनावो,
सूब छबी सुली हारन की, भर० ॥३॥
गेंद गुलानको हीवडे विराजे,
चद्रमुखी मूर्ति मोहन की, भर० ॥४॥
सुर सुरियाभे जिनवर पूज्या,
साख सुणो रायपसेणी की, भर० ॥५॥
द्रव्य भाव से पूजा र करता,
निर्मल ज्योत समकित की ।
भर लावो रे चगेरी० ॥६॥

श्री आदिनाथ गायन

आओजी आओ, आदिनाथ क गुग गाने वाले ।
चरनन क चाहने वाले, दरिसन क पानेवाले, तान मान वाल से जिन मंदिर को गजाने वाले । आओ जी० ॥१॥
समकित को धारन वाले, त्रिपदी पद पालन वाले, चउ गुन क जान, आतम ज्ञान के बढ़ाने वाल । आओजी० ॥२॥
पर जीव के जानन वाले, दया क मानन वाल, भक्षाभक्ष दिल में लक्ष क लगाने वाले । आओजी० ॥३॥
श्रावक व्रत धरने वाल, एक अठ से डरने वाले, तरने भव पार सुकृत नाव क चलाने वाल । आओजी० ॥४॥
जिन वच रस पीने वाल, धन धन जग जीने वाले, गिरत भव कूप में निज प्राण क बचाने वाले । आओजी० ॥५॥

श्री अजितनाथ जिन स्तवन

प्रीतलडी बंधाणी रे अजित जिणंदसु,
काइ प्रभु पाखे क्षण एक मन न सुहाय जो ।
ध्यान नी ताली र लागी नेहशु,
जलदघटा जिम शिवसुतवाहन दाय जो, प्रीत० ॥१॥
नेहघलु मन माहरु र, प्रभु जलने रह,
तन धन मन ए कारणथी प्रभु मुझ जो ।

मार तो आधार र साहिब राखलो,
अतर्गत तु प्रभु आगल कहु गझ जो, प्री० ॥२॥
साहब ते साचो र जगमा जाणिय,
सेवकना जे सहज सुधार काज जो ।
एहवे र आचरणे केम करीने रहु,
बिरुद तमारु तरण तारण जहाज जो । प्री० ॥३॥
तारकता तुज माह र श्रवणे साभली,
ते भणी हु आव्यो तु दीनदयाल जो ।
तुज करुणानी लहर र मुज कारज सर,
शु घणु कहीये जाण आगल कृपाल जो, प्री० ॥४॥
करुणादिक कीधी र सेवक ऊपरे,
भवभय भावठ भागी भक्ति प्रसन्न जो ।
मन वाछित फलियार जिन आलबने,
कर जोडीन मोहन कह मन रग जो, प्री० ॥५॥

श्री अजितनाथ जिन स्तवन

अजित जिणदशु प्रीतडी, मुज न गमे हो बीजानो सग क ।
मालती फूले मोहीयो, किम बेसे हो बावल तरु भृग क, अ० ॥१॥
गगा जल मा जे रम्या, किम छिल्लर हो रति पामे मराल के ।
सरोवर जलधर जल विना, नवि चाहे हो जल चातक बाल
क, अ० ॥२॥

कोकिल कल कूजित कर, पामी मजरी हो पजरी सहकार क।
जोछा तरुवर नवि गमे, गिरुआशु हो होय गुणनो प्यार के, अ० ॥३॥
कमलिनी दिनकर कर ग्रह, वली कुमुदिनी हो धर चदसु प्रीतक।
गौरी गिरिश गिरधर विना, नवि चाह हो कमला निज चित्त
के अ० ॥ ४ ॥
तिम प्रभुसु मुज मन रम्यु, बीजासु हो नवि आव दाय क।
श्रीनयविजयविबुधतणो, वाचकजस हो नित नित गुण गाय
क, अ० ॥५॥

श्री सभव जिन स्तवन

सभव जिनवर वीनति,
अवधारो गुण ज्ञाता र।
खामी नही मुज खिजमते,
कदीय होशो फल दाता रे, सभव० ॥१॥
कर जोडी ऊभो रहु,
रात दिवस तुम ध्याने रे।
जो मन मा आणो नही,
तो शु कहिय छाने र, सभव० ॥२॥
खोट खजाने को नही,
दीजिय वाछित दानोरे।
करुणा नजर प्रभुजी तणी,
वाधे सेवक वानो रे, सभव० ॥३॥

काल लब्धि नही मति गणो,
भाव लब्धि तुम हाथे रे ।
लडथडतु पण गयवचु,
गाजे गयवर साथे रे, सभव० ॥४॥

दशो तो तुमहीज भलु,
बीजा तो नवि जाचु रे ।
वाचकजस कह साइसु,
फलशे एह मुन साचु रे, सभव० ॥५॥

श्री सभव जिन स्तवन

(अतरजामी सुण अलवेसर यह चाल)

समकित दाता समकित आपो, मन माग थइ धीठु ।
छति वस्तु देता नु शोचो, मीठु छे सहुए दीठु ।
प्यारा प्राणथकी छो राज, सभव जिनवर मुजने । आ० ।१।
इम जाणो जे आपे लहिय, त लाधु शु लेवु ।
पण परमारथ प्रीछी आपे, तेहज कहिये दवु, प्यारा० ॥२॥
अर्थी हु तू अर्थ समर्पक, इम मत करजो हासु ।
प्रकट न हतु तुमने पण पहिला, ए हासानु पासु, प्यारा० ॥३॥
परम पुरुष तुमे प्रथम भजीने, पाम्या ए प्रभुताई ।
तिण रूपे तुमने इम भजिये, तिणे तुम हाथ वडाइ, प्या० ॥४॥

तुमे स्वामी हु सेवाकामी, मुजने स्वामी निवाजे ।
नही तो हठ माडी मागता, किण विध सेवक लाजे प्या० ॥५॥
ज्योते ज्योति मिले मत प्रीछो, कुण लहेशे कुण भजशे ।
साची भक्ति ते हस तणी परे, खीर नीर नय करशे, प्या० ॥६॥
उलग कीधी जे लेखे आवी, चरण भेट प्रभु दीधी ।
रूपविबुधनो मोहन पभणे, रसना पावन कीधी प्या० ॥७॥

श्री अभिनन्दनजिन स्तवन

दीठी हो प्रभु दीठी जग गुरु तुझ,
मूरति हो प्रभु मूरति मोहन वेलडी जी ।
मीठी हो प्रभु मीठी ताहरी वाणी,
लागे हो प्रभु लागे जेसी सेलडी जी ॥१॥
जाणु हो प्रभु जाणु जन्म कयत्थ,
जो हु हो प्रभु जो हु तुम साथे मिल्यो जी ।
सुरमणि हो प्रभु सुरमणि पाम्यो हथ्थ,
आगणे हो प्रभु आगणे मुझ सुरतरु फल्यो जी ॥२॥
जाग्या हो प्रभु जाग्या पुण्य अकूर,
माग्या हो प्रभु मुह माग्या पासा ढल्या जी ।
वूठा हो प्रभु वूठा अमीरस मेह,
नाठा हो प्रभु नाठा अशुभ शुभ दिन वल्या जी ॥३॥

भूख्या हो प्रभु भूख्या मल्या घृतपूर,
तरश्या हो प्रभु तरश्या दिव्य उदक मल्या जी ।
थाक्या हो प्रभु थाक्या मिल्या सुखपाल,
चाहता हो प्रभु चाहता सज्जन हेते मल्या जी ॥४॥
दीवो हो प्रभु दीवो निशा वन गेह,
साथी हो प्रभु साथी थले जले नौका मिली जी ।
कलिजुगे हो प्रभु कलिजुगे दुल्लहो तुज्झ,
दरिसन हो प्रभु दरिसन लह्यो आशा फली जी ॥५॥
वाचक हो प्रभु वाचक जस तुम दास,
वीनवे हो प्रभु वीनवे अभिनन्दन सुणो जी ।
कहियें हो प्रभु कहियें म देजो छेह,
देजो हो प्रभु देजो सुख दरिसणतणो जी ॥६॥

श्री अभिनन्दनजिन-वाणी महिमा स्तवन

तुम जोजो जोजो रे वाणीनो प्रकाश तुमे जोजो जोजोरे।
उठे छे अखंड ध्वनि जोजनें सभलाय ।
नर तिरय देव आपणी, सहु भाषायें समजाय, तुमे० ॥१॥

द्रव्यादिक देखी करीने, नयनिक्षेपे जुत्त ।
भंग तणी रचना घणी कांइ, जाणे सहु अद्भुत, तुमे० ॥
पय सुधा ने इक्षुवारि हारी जाये सर्व ।
पाखंडी जन माभलीने मूकी दिये गर्व, तुमे० ॥३॥

गुण पांत्रीसे अलंकरी कहुं, अभिनन्दनजिनवाण ।
संशय छेद मनतणा प्रभु, केवल ज्ञाने जाण, तुमे० ॥४॥
वाणी जे जन सांभले ते, जाणे द्रव्य ने भाव ।
निश्चय ने व्यवहार जाणे, जाणे निज पर भाव, तुमे ॥५॥
साध्य साधन भेद जाणे, ज्ञान ने आचार ।
हेय ज्ञेय उपादेय जाणे, तत्त्वातत्त्व विचार, तुमे० ॥६॥
नरक स्वर्ग अपवर्ग जाणे, थिर व्ययने उत्पाद ।
राग द्वेष अनुबंध जाणे, उत्सर्ग ने अपवाद, तुमे० ॥७॥
निज स्वरूपने ओलखीने, अवलंब स्वरूप ।
चिदानन्दघन आतमा ते, थाय निजगुणभूप, तुमे० ॥८॥
वाणी ए जिन उत्तम केरी, अवलंबे पद्मपद्म ।
निपमा ते परभाव तजीने, पामे शिवपुर सद्म, तुमे० ॥९॥

श्री सुमतिनाथ स्तवन

सुमतिनाथ गुणशुं मिली जी, वाधे मुज मन प्रीति ।
तेल बिंदु जिम विस्तरे जी, जलमांहे भली रीति ।
सोभागी जिनशुं लागो अविहड रंग, सो० ॥१॥
सज्जनशुं जे प्रीतडी जी, छानी ते न रखाय ।
परिमल कस्तूरीतणो जी, महिमांहे महकाय, सोभागी० ॥२॥
आंगलिये नवि मेरु ढंकाये छाबडिये रवि तेज ।
अंजलिमां जिम गंग न माये, मुज मन तिम प्रभु हेज सो० ॥३॥

हुओ छिपे नहीं अ गर अरण, जिम खाता पान सुरग ।
पीनत भर भर प्रभु गुण प्याला, तिम मुज प्रेम अभग, सो० ॥४॥
गकी इक्षु पलालगु जी, न रह लही विस्तार ।
वाचक जस कह प्रभुतणो जी, तिम मुज प्रेम प्रकार, सो० ॥५॥

सीनोर गाम सुमति जिन स्तवन

(राग बलिहारी की)

सुखकारी सुखकारी गुरुकारी कृपानाथ हो
जाउ वारी सुमति जिन सुमति सेवक दीजीये जी ।
दरिसन दन दीजे, कुमति को दूर कीजे ।
यही मागु हु हे दातारी, कृपानाथ हो० ॥१॥
कुमति ने कामण किया, मुझ को भरमाय दिया ।
इन से छुडा दो ह सरदारी कृपानाथ हो० ॥२॥
पचम अवतार लिया, दुनिया को तार दिया ।
आशा पूरो म्हु हु पुकारी, कृपानाथ हो० ॥३॥
निरादर नाही कीजे, निरुद सभाल लीजे ।
तरण तारण हो हे अधिकारी, कृपानाथ हो० ॥४॥
सीनोरमडण नामी, सुमति जिनेश्वर स्वामी ।
नडी उतारो प्रभुजी हमारी, कृपानाथ हो० ॥५॥
निधि रस निधि चदा, सवत् हैं सुखकदा ।
वीरविजयनु आनदकारी, कृपानाथ हो० ॥६॥

श्री पद्मप्रभ जिन स्तवन

(देशी झुंबखडे की)

श्री पद्मप्रभजिन सेविये रे, शिवसुंदरीभरतार कमल दल आखड़िया । मोहनजु मन मोहीं ग्यु रे, रूपतणो नही पार मधुहधनु वाकडिया ॥१॥

अरुणकमलसम देहडी रे, जगजीवन जिनराय, वयण रस सेलडिया । त्रीम पूरन लख आउरु र मारे वांछित राज मोहन सुरवलडिया ॥२॥

महियरी सवि टोले मिली रे, शोले सजी शणगार मिली मखि गोरडीया । गुण गाती घुमरी दिय रे, करी चूडी खलकार, कमलमुख गोरडीया ॥३॥

मात सुसीमा उरे धर्यो रे, मुज दिलडामाहे देव, वस्यो दिन रातडीया । कोसम्बी नयरीतणो रे नाथ नमो नित्यमेव, सुणो सखि वातडीया ॥४॥

धनुष अढीशय शोभती रे, उचपणे जगदीश, नमो साहेलडिया । रामविजय प्रभु सेवता रे, लहिये सफल जगीश रुधे सुखवेलडिया ॥५॥

श्री पद्मप्रभ स्तवन

(रखता या कव्वाली)

पदम प्रभु प्राण से प्यारा, छुडावो कर्म की धारा।
कमफद तोडना घोरी, प्रभुजी से अर्ज है मोरी,
पदम प्रभु० ॥१॥

लघुनय एक ये जीया, मुक्ति म वास तुम किया।
न जानी पीड य मोरी, प्रभु अब खेंच ल दोरी।
पदम प्रभु० ॥२॥

विषय सुख मानी मो मन में, गया सब काल गफलत में।
नरक दुख वेदना भारी, निकलवा ना रही बारी।
पदम प्रभु० ॥३॥

परवश दानता कीनी, पापकी पोट सिर लीनी।
भक्ति नही जाणी तुम करी, रहा निश दिन दुख घेरी।
पदम प्रभु० ॥४॥

इण विध वीनती तोरी, करू मै दोय कर जोरी।
आतम आनद मुज दीजो, वीर का काम सब कीनो।
पदम प्रभु० ॥५॥

श्री सुपार्श्वजिन स्तवन

(देशी आछेलाल)

श्रीसुपास जिनराज, तू त्रिभुवन शिरताज ।
आज हो छाजे रे ठकुराई प्रभु तुज पदतणी जी ॥१॥
अतिशय सहजना च्यार, कर्म खप्याथी अग्यार ।
आज हो कीधा र ओगणीस सुरगण भासुर जी ॥२॥
वाणी गुण पात्रीस, प्रतिहारज जगदीश ।
आज हो राजे रे दीवाजे छाजे आठशु जी ॥३॥
दिव्यध्वनि सुरफूल, चामर छत्र अमूल ।
आज हो राजे र भामडल गाजे दुदुभि जी ॥४॥
सिहासन अशोक, वेठा मोहे लोक ।
आज हो स्वामी रे शिवगामी वाचकजस थुण्यो जी ॥५॥

श्री चंद्रप्रभजिन स्तवन

श्री चद्रप्रभ जिन साहिबा रे, तुमे छो चतुर सुजाण, मनना मान्या। सेवा जाणो दासनी रे, देशो पद निर्वाण, मनना मान्या। आवो आवो र चतुर सुख भोगी, कीजे वात एकात अभोगी गुण गोठे प्रगटे प्रेम मनना० ॥१॥

ओछु अधिकु पण कहे रे, आसगायत जेह, मनना मान्या। आप फल जे अणकहे रे, गिरुओ साहिब तेह, मनना मान्या॥

दीन कह्या तिण दानथी रे, दातानी वाधे माम, मनना मान्या। जल दिये चातक खीनवी रे, मेघ हुआ तिणे श्याम, मनना मान्या ॥३॥

पिउ पिउ करी तुमने जपु रे हुं चातक तुमें मेह, मनना मान्या। एक लहरमा दुख हरो रे, वाधे बमणो नेह, मनना मान्या ॥४॥

मोडु वहलु आपजु रे, तो शी ढील कराय, मनना मान्या। वाचक जस कहे जगधणी रे, तुम तूठे सुख थाय, मनना मान्या ॥५॥

श्री सुविधिनाथ स्तवन

(साहिबा मोतीडो हमारो यह दशी)

अरज सुणो एक सुविधि जिनेसर,
परम कृपानिधि तुमें परमेसर। साहिबा
सुजानी जोजो तो वात छे मान्यानी। आ०।
कहवाओ पचम चरणना धारी,
किम आदरी अश्वनी असवारी। सा० ॥१॥
छो त्यागी शिव वास वसो छो,
दशरथसुत रथे केम वसो छो ॥सा०॥
त्यागी प्रमुख परिग्रहमा जो पडशो,
हरिहरादिकने किण विध नडशो, सा० ॥२॥

धुरथी सकल समार निवार्यो,
जिम करी दवद्रव्यादिक धार्यो, सा० ।
तजी सयम ने थाशो गृहवासी,
कुण आशातना तजश चोरासी, सा० ॥३॥
समकित मिथ्यामतिमें निरतर,
इम किम भाजशे प्रभुजी अतर, सा० ।
लोक तो देखशे तेहनु कहशे,
इम चिनता तुम किण थिर रहशे, सा० ॥४॥
पण हव शास्त्रगते मति पहोंची,
तेहथी जोयु में उत आलोची, सा० ।
इम कीध तुम प्रभुताइ न घट,
साहमो इम अनुभव गुण प्रगट, सा० ॥५॥
हय गय यद्यपि तू आरोपाए,
तो पण सिद्धपणु न लोपाए, सा० ।
जिम मुकुटादिक भूषण कहनाए,
पण कचननी कचनता न जाए, सा० ॥६॥
भक्तनी करणीये दोप न तुमने,
अघटित कहनु अजुक्त ते अमन, सा० ।
लोपाए नहा तू कोइथी स्वामी,
मोहनविजय कहे शिर नामी, सा० ॥७॥

श्री शीतल जिन स्तवन

श्री शीतलजिन भेटिय, करी चोख्खु भक्ते चित्त हो ।
तहथी कहो छानु किस्यु, जेहने सोंप्या तन मन वित्त हो ।
श्री शीतल० ॥१॥

दायक नाम छे घणा, पण तू सायर ते कूप हो । ते बहु खजुवा तग तगे, तू दिनकर तेजसरूप हो । श्री शी० ॥२॥

मोहोटो जाणी आदर्या, दारिद्र भाजो जगतात हो ।
तू करुणावतशिरोमणि, हु करुणापात्र विख्यात हो ।
श्री शी० ॥३॥

अतरनामी सवि लहो, अम मननी जे छे वात हो ।
मा आगल मोशालना, शा वरणववा अवदात हो ।
श्री शी० ॥४॥

जाणो तो ताणो किस्यु, सेवा फल दीजें देव हो ।
वाचक जस कहे ढीलनी, ए न गमे मुज मन टेव हो ।
श्री शी० ॥५॥

श्री श्रेयासजिन स्तवन

(कर्म न छूटे रे प्राणिया यह चाल)

तुमे बहु मैत्री रे साहिबा, मारे तो मन एक ।
तुम विण बीजो रे नवि गमें, ए मुज मोटीरे टेक ।
श्री श्रेयास कृपा करो ॥१॥

मन राखो तुमे सवि तणा, पण किहा एक मलि जाओ।
ललचावो लख लोकने, साथ सहज न थाओ।
श्री श्रेयास० ॥२॥

रागभरे जनमन रहो, पण तिहुकाल वैराग।
चित्त तुमारो र समुद्रनो, कोय न पामे ताग।
श्री श्रेयास० ॥३॥

एहवासु चित्त मलव्यु, कल्व्यु पहला न काइ।
सेवक निपट अबूझ छे, निरवहशो तुम साइ।
श्री श्रेयास० ॥४॥

नीरागीसु र किम मिले, पिण मिलवानो एकात।
वाचक जस कहे मुज मिल्यो, भक्ते कामण तत।
श्री श्रेयास० ॥५॥

श्री वासुपूज्यजिन स्तवन

(माहरा मोतीडो हमारो यह दखी)

स्वामी तुमे काइ कामण कीधु, चितड अमारु चोरी लीधु।
माहवा वासुपूज्य जिणदा, मोहना वासुपूज्य ॥आ०॥
अमे पण तुमशु कामण करशु, भक्ति ग्रही मनघरमा धरशु।
माहवा० ॥१॥

मनघरमा धरिया घर शोभा, देखत नित्य रहशु थिर थोभा।
मन वैकुठ अकुठित भक्ते, योगी भाखे अनुभव युक्ते।
साहवा० ॥२॥

क्लेशे वासित मन संसार, क्लेश रहित मन ते भव पार।
जो विशुद्ध मनघर तुमे आव्या, प्रभु तो अमे नवनिधि ऋद्धि
पाव्या। सा० ॥३॥

सात राज अलगा जइ बेठा, पण भगत अम मनमा पेठा।
अलगा ने वलगा जे रहेवु, ते भाणाखडखड दुख सहेवु।
सा० ॥४॥

ध्यायक ध्येय ध्यान गुण एके, भेद छेद करशु हवे टेके।
खीर नीर पर तुमशु मलशु, वाचक जस कहे हेजे हलशु।
सा० ॥५॥

श्री वासुपूज्य स्तवन

(राग मारू)

वासुपूज्य विलासी, चंपाना वासी, पूरो हमारी आश।
करु पूजा हू खासी, केसर घासी, पुष्प सुवासी, पूरो हमारी
आश०॥

चैत्यवंदन करु चित्तथी प्रभुनी, गाउ गीत रसाल।
एम पूजा करी विनति करु छु, आपो मोक्ष विशाल।
दीयो कर्मने फासी, काढो कुवासी, जेम जाय नाशी,
पूरो हमारी आश। वासु० ॥१॥

आ संसार घोरमहोदधिथी, काढो अमने बहार।
स्वारथना सहु कोइ सगा छे, मात पिता परिवार रे।
बालमित्र उदासी, विजयविलासी, अरजी खासी,
पूरो हमारी आश। वासुपूज्य विलासी० ॥२॥

श्री विमलनाथ स्तवन

(नमो रे नमो श्री शत्रुंजय गिरिवर यह देशी)

सेवो भविया विमल जिनेसर, दुलहा सज्जनसंगा जी।
एहवा प्रभुनु दरिसण लेवु, ते आलसमांहे गंगा जी।
सेवो० ॥१॥

अवसर पामी आलस करशे, ते मूरखमां पहलो जी।
भूख्यां जेम घेवर देतां, हाथ न माडे घलो जी। सेवो० ॥२॥
भव अनंतमा दर्शन दीठु, प्रभु एहवा देखाडे जी।
विकटग्रंथि जे पोलि पोलियो, कर्मविवर उघाडे जी।
सवो० ॥३॥

तत्त्वप्रीति करी पाणी पाए, विमलालोके आंजी जी।
लोयण गुरु परमान्न दिये तव, भ्रम नाखे सवि भांजी जी।
सवो० ॥४॥

भर्म भागो तव प्रभुसुं प्रेमे, वात करु मन खोली जी।
सरल तणे जे हइडे आवे, तेह जणावे बोली जी।सेवो० ॥५॥
श्री नयविजयविबुधपयसेवक, वाचकजस कहे साचु जी।
कोडि कपट जो कोइ दिखावे, तो प्रभु विण नहीं राचु जी।
सवो० ॥६॥

श्री विमलनाथ जिन स्तवन

(गजल कवाली)

विना दर्शन किये तेरा, नहीं दिल को करारी है।
चुरा कर ले गई मन को, प्रभु सूरत तुम्हारी है। विना० ॥१॥
न कलपाओ दया लाओ, हमें निज पास बुलवाओ।
सहा जाता नहीं अब तो, विरह का बोझ भारी है। विना ॥२॥
ज्ञान से ध्यान से तेरा, न सानी रूप दुनिया में।
फिदा हो प्रेममें तेरे, उमर सारी गुजारी है। विना० ॥३॥
दया पूरन कष्ट चूरन, करो अब आश मम पूरन।
मेहेर की एक ही दृष्टि, हमें दृष्टि तुम्हारी है॥ विना० ॥४॥
विमल है नाम प्रभु तेरा, विमल कर नाथ मन मेरा।
चरण में आप के डेरा, तिलक भवभय सिरकारी है। विना० ॥५॥

श्री अनतनाथ जिन स्तवन

(देशी कडखे की)

धार तरवारनी सोहिली दोहिली,
चउदमा जिनतणी चरण सेवा।
धार पर नाचता देख बाजीगरा,
सेवना धार पर रहे न देवा। धार० ॥१॥
एक कहे सेविये विविध किरिया करी,
फल अनेकांत लोचन न देखे।

फल अनेरात किरिया करी नापडा,
रडवड चार गतिमाहि लेखे । धार० ॥२॥
गच्छना भेद बहु नयण निहालता,
तत्त्वनी वात करता न लाजे ।
उदरभरणादि निजकाज करता थका,
मोहनडिया कलिकाल राजे । धार० ॥३॥
वचननिरपेक्ष व्यवहार झूठो कह्यो,
वचनसापेक्ष व्यवहार साचो ।
वचननिरपेक्ष व्यवहार समारफल,
साभली आदरी काइ राचो । धार० ॥४॥
देव गुरु धर्मनी शुद्धि कहो केम रहे,
केम रहे शुद्ध श्रद्धान आणो ।
शुद्ध श्रद्धान विण सर्व किरिया करी,
छार पर लीपणु तेह जाणो । धार० ॥५॥
पाप नही कोइ उत्सूत्र भाषण जिस्यु,
धर्म नही कोइ जग सूत्र सरिखो ।
सूत्र अनुसार जे भविक किरिया करे,
तेहनु शुद्ध चारित्र परखो । धार० ॥६॥
एह उपदेशनो सार सक्षेपथी,
जे नरा चित्तमें नित्य ध्यावे ।
ते नरा दिव्य बहुकाल सुख अनुभवी,
नियत   न पावे । धार० ॥७॥

श्री धर्मनाथ जिन स्तवन

धर्म जिनेसर गाउ रंगसु,
भंग म पड़शो हो प्रीत जिनेसर।
बीजो मनमंदिर आणु नहीं,
ए अम कुलवट रीत जिनेसर। धर्म० ॥१॥
धरम धरम करतो जग सहु फिरे,
धर्म न जाणे हो मर्म जिनेसर।
धर्म जिनेसर चरण ग्रह्या पछी,
कोइ न बांधे हो कर्म जिनेसर। धर्म० ॥२॥
प्रवचन-अंजन जो सद्गुरु करे,
देखे परम निधान जिनेसर।
हृदयनयण निहाले जग धणी,
महिमामेरुसमान जिनेसर। धर्म० ॥३॥
दोडत दोडत दोडत दोडियो,
जेती मननी रे दोड जिनेसर।
प्रेम प्रतीत विचारो ढूकडी,
गुरुगम लेजो रे जोड जिनेसर। धर्म० ॥४॥
एक पखी किम प्रीति परवडे,
उभय मिल्या होय संधि जिनेसर।
हु रागी हु मोहे फंदियो,
तू नीरागी निरबंध जिनेसर। धर्म० ॥५॥

परमनिधान प्रगट मुख आगळे
जगत उलंघी हो जाय जिनेसर।
जोति विना जुओ जगदीशनी,
अंधो अंध पलाय जिनेसर। [illegible]

निर्मलगुणमणिरोहणभूधरा,
मुनिजनमानसहंस जिनेसर।
धन ते नगरी धन वेळा घडी
मात पिता कुल वंश जिनेसर। [illegible]

मनमधुकर वर कर जोडी कहे,
पदकजनिकट निवास जिनेसर।
घननामी आनंदघन सांभळो,
ए सेवक अरदास जिनेसर। [illegible]

श्री शांतिनाथ[illegible]

सुंदर शांतिजिणंदनी, [illegible]
प्रभु गंगाजलगंभीर, [illegible]
गजपुर नयर सोहामणुं, [illegible]
विश्वसेननरिंदनो न[illegible], [illegible]
[illegible] उर [illegible]
[illegible]

प्रभु लाख वरस चोथे भागे, व्रत लीधु छे ।
प्रभु पाम्या केवल ज्ञान, कारज सीधु छे ॥४॥
धनुष चालीसनु इशनु, तनु सोह छे,
प्रभु देशना ध्वनि वरसत, भवि पडिबोहे छे ॥५॥
भक्तवत्सल महिमानिधि, जन तार छे ।
बुडता भवजलमाह, पार उतार छे ॥६॥
सुमतिविजय गुरु नामथी, दुख नाशे छे ।
कह रामविजय जिनध्यान, नवविधि पासे छे ॥७॥

श्री शांतिनाथ स्तवन

सुणो शांतिजिणंद सोभागी, हु तो थयो छु तुम गुण रागी। तुमे नीरागी भगवंत, जोता किम मलशे तंत। सुणो०॥१॥

हु तो क्रोध कषायनो भरियो, तु तो उपशम रसनो दरियो। हु तो अज्ञाने आवरियो, तु तो केवल कमला वरियो। सु० ॥२॥

हु तो विषयारसनो आशी, त तो विषया कीधी निराशी। हु तो कर्मने भारे भार्या, तें तो प्रभु भार उतार्या। सु० ॥३॥

हु तो मोहतणे वश पडियो, तु तो सघला मोहने नडियो। हु तो भवसमुद्रमां खुतो, तु तो शिवमंदिरमा पहोतो। सु० ॥४॥

मारे जन्म-मरणनो जोरो, तें तो तोडयो तेहनो दोरो।
मारो पामो न मेले राग, तमे प्रभुजी थया वीतराग। सु० ॥५॥
मने मायाए मूक्यो पाशी, तु तो निरबंधन अविनाशी।
हु तो समकितथी अधूरो, तु तो सकल पदारथे पूरो। सु० ॥६॥
म्हारे छो तू ही प्रभु एक, त्हारे मुज सरिखा छे अनेक। हु
तो मनथी न मूकु मान, तु तो मानरहित भगवान। सु० ॥७॥
मारु कीधु ते शु थाय, तु तो रकने करे राय। एक करो
मुज महरवानी, म्हारो मुजरो लेजो मानी। सु० ॥८॥
एक वार जो नजरे निरखो, तो करो मुजने तुम सरिखो।
जो सेवक तुम सरिखो थाशे, तो गुण तुमारा गाशे। सु० ॥९॥
भवोभव तुज चरणनी सेवा, हु तो मागु देवाधिदेवा।
सामु जुओने सेवक जाणी, एहवी उदयरत्ननी वाणी॥ सु०॥११॥

श्री शांतिनाथ स्तवन

क्षण क्षण साभरो शांति सलूणा,
ध्यान भुवन जिनराज पगुणा, क्षण० आ।
शांतिजिणंद के नाम अमीसे,
उलसित होत हम रोम वपुना क्षण०।
भव ~ ~ फिरते पायो,
छोडत ... प्रभुना। क्षण० ॥१॥

छिल्लरमें रति कबहु न पावे,
जे झीले जल गंगा यमुना ।
तुम सम हम शिर नाथ न थाशे,
कर्म अधुना दूना धूना । क्षण० ॥२॥

मोहलडाईमें तेरी सहाई,
तो खिणमें छिन्न छिन्न करुना ।
नाही घटे प्रभु आना कुना,
अचिरासुत पति मोक्षवधूना । क्षण० ॥३॥

ओरकी पासमें आश न करते,
चार अनंत पसाय करुना ।
क्यों कर मागत पास धतूरे,
युगलिक याचक कल्पतरुना । क्षण० ॥४॥

ध्यान खडग वर तेरे आसंगे,
मोह डरे सारी भीक भरूना ।
ध्यान अरूपी तो सोई अरूपी,
भक्त ध्यावत ताना तूना । क्षण० ॥५॥
अनुभव रस वध्यो उपयोगे,
ध्यानसुपान में काथा चूना ।
चिदानंद झकझोल घटासे,
श्री शुभवीरविजय पडिपुन्ना । क्षण० ॥६॥

श्री शातिनाथस्तवन

(गजल कवाली)

अजब है शातिजिन दर्शन, हमारा होत मन परसन ।
आकणी ।

मूरत क्या मोहनी प्यारी, भरी समतारसे भारी ।
जिगर में प्रेमरस भरती, हमारे पाप मल हरती ।
अजब है० ॥१॥

पडा ससारवधन में, गई थी सुध बुध मेरी ।
सूरत तेरी निहाली मैं, छुटा हू ना लगी देरी ।
अजब है० ॥२॥

कमल पर ज्यु लगा भमरा, लुभाया तेरी सूरत में ।
बिठा ले चरण में अपने, सुनी ले अर्ज भी दिल म ।
अजब है० ॥३॥

कृपादृष्टि अहा कीनी, कनूतरपे दयाभीनी ।
विजय सोभाग्य को तारो, दुखों के फद सब टारो ।
अजब है० ॥४॥

श्री शातिनाथ गायन

(वीरा वेश्याना यारी यह देशी)

श्री शाति तुमारी, छे बलिहारी, जग विषे जिनराज। पूरो आशा अमारी, दइ सुखकारी, छे बलिहारी जग विषे जिनराज ॥आं०॥

कुसुमवासित आसन सुदर, धूपधूमादिनी धूम। उडी रही अलबेला स्वामी, नाचु छनक छुम। भावअतर धारी, ज्ञान सुधारी, छे बलिहारी, जगविष जिनराज। श्री शाति० ॥१॥

रोग शोक वियोग विदारी देजो दर्शन दान। गाजता गभीर मृदग साथे, नित्य लगावु तान। प्रभु भक्ति वधारी, जय जय कारी, छे बलिहारी जग विषे० ॥२॥

मुकुट मडल काने कुडल, चमके झाक झमाल। शाति सघमा शाति फेलावी, करजो मगलमाल। मागे 'वान' विचारी, विनयधारी, छे बलिहारी, जगविषे जिनराज। श्री शाति० ॥३॥

श्री कुथुनाथ स्तवन

(आशक तो हो चुका हू यह चाल)

कुथुजिनद प्यारा, नमता हू नाथ तुम को। आं०।
शक्ति अनत भरिया, समतासुधा का दरिया।
मुक्तिवधू को वरिया, नमता हू नाथ तुम को। कुथु० ॥१॥

नृप सूरजी के नंदा, टालो जी कर्मफंदा ।
देवो विशुद्धानंदा, नमता हू० ॥२॥
चारों गति का फेरा, गारो जी नाथ मेरा ।
कर लो पदाति तेरा, नमता हू० ॥३॥
ममता गई है मेरी, मूर्ति निहाल तेरी ।
छटकी भवों की फेरा, नमता हू० ॥४॥
जपते ही नाम तेरा, विनमा है मोह मेरा ।
मिलिया विवेक डेरा, नमता हू० ॥५॥
करुणा से दास तारो, कुगति के द्वार ठारो ।
कर्मन् के बंध वारो, नमता हू० ॥६॥
मन की उपाधि चूरो, सिद्धि सुखा को पूरो ।
कर लो सोभाग शूरो, नमता हू० ॥७॥

श्री अरनाथजिनस्तवन

(आमणरा जोगी यह देशी)

श्री अरजिन भवजलनो तारु, मुज मन लागे वारु रे, मनमोहन स्वामी । बाह ग्रहीए भविजन तारे, आणे शिवपुर आरे रे, मनमोहन स्वामी ॥१॥

तप जप मोह महातोफाने, नाव न चाले माने रे, मन- मो० । पण नवि भय मुज हाथो हाथे, तारे ते छे साथे रे, मनमो० ॥२॥

भगतने स्वर्ग स्वर्गथी अधिकु, ज्ञानीने फल जोइ रे, मन० । काया कष्ट विना फल लहिये, मनमा ध्यान धरेइ रे, मन० ॥३॥

ज उपाय बहुविधिनी रचना, योगमाया ते जाणो रे, मन० । शुद्ध द्रव्य गुण पर्याय ध्याने, शिव दिये प्रभु सपराणो रे, मन० ॥४॥

प्रभुपद वलग्या ते रह्या ताजा, अलगा अंग न साजा रे, मन । वाचक जस कहे अवर न ध्याउ, ए प्रभुना गुण गाउ रे, मन० ॥५॥

श्री मल्लिनाथजिनस्तवन

मनमोहन मल्लिनाथ को जस बोलेंगे,
शिवरमणी को रग घुघट पट खोलेंगे, आ ।
मोह्यो मन धन मोरज्यु जस बोलेंगे,
अब ओर न चाहु सग, घुंघट पट० ॥१॥
चिंतामणि को पाय के जस०,
कोण राचे काचे काच, घुघट० ।
को चाहे खरकेलिकु जस०,
तजी सुरकुमरीको नाच, घुघट० म० ॥२॥
चावलकु सेवे नहीं जस०,
तजी मधुकर मालतीफूल, घुघट० ।

कोमल शय्या छोड के जस०,
कुण बेठे धरिके शूल, घुघट० । म० ॥३॥
प्रभुकी मूरति मेरे मन वसी जस०,
सो तो विसराई विसरे न, घुघट० ।
दर्शन प्रभुमुख देख के जस०,
हम पावन कीने नेन, घुघट० । मनमोहन० ॥४॥
जन्म कृतारथ मैं कर्यो जस०,
जब पायो ऐसो ईश घुघट० ।
विमलविजय उवझाय को जस०,
एम राम कहे शुभ शीस घुघटपट खोलेंगे,
मनमोहन मल्लिनाथ को जस बोलेंगे ॥५॥

श्री मुनिसुव्रतजिनस्तवन

(इडर आंबा आंबली रे यह देशी)

मुनिसुव्रत कीजे मया रे, मनमाने धरी महर। महेर विहुणा मानवी रे, कठिन जणाये कहर जिनेसर तु जगनायक देव, तुज जगहित करवा टेव, जिने० ॥

अरहट क्षेत्रनी भूमिकारे, सिंची कृतारथ होय। धाराधर सघली धरा रे, उद्धरवा सज्ज जोय, जिनेसर० ॥२॥

ते माटे अम उपरे रे, आणी मनमा महेर। आपे आव्या आफणी रे, बोधबीज भरुअच्छ शहर, जिनेसर० ॥३॥

अणप्रार्थता उद्धर्या रे, आप करिय उपाय। प्रारथता रह निलरतार, ए कुण कहिये न्याय, जिनेसर० ॥४॥

सनध पण तुज मुज निंचे रे, स्वामी–सेवकभाव। मान कह हवे महेरनो रे, न रह्यो अजर प्रस्ताव, जिनेसर० ॥५॥

श्री नमिनाथजिन स्तवन

(आसणारा जोगी यह दशी)

आज नमिजिन राजने कहिये, मीठे वचने प्रभुमन लहिये रे। सुखकारी साहिबजी। प्रभु छे निपट निसनेही नगीना, अमे छु सेवक आधीना रे, सुख० ॥१॥

सुनजर करशो तो वरशो वडाई, सुकहिशे प्रभुने लडाइ रे, सुख०। तुमे अमने करशो महोटो, कुण कहशे तुने प्रभु खोटो रे, सुख० ॥२॥

नि शक थइ शुभ वचन कहशो, जगशोभा अधिकी लेशो रे, सुख०। अम तो रह्या छु तुमने राची, रखे आप रहो मन खाची र, सुख० ॥३॥

अमे तो किस्यु अतर नवि राखु, जे होवे हृदय कही दाखु रे, सु० गुणियल आगल गुण कहवाए, ज्यारे प्रीत प्रमाणे थाये रे, सु० ॥४॥

विषधर ईश हृदय लपटाणो, तेहथो अमने मिल्यो छे टाणो रे, सु. निरखहेशो जो प्रीत हमारी, कलि कीरत थाशे तुमारी र, सु० ॥५॥

धूर्ताई चित्तडे नवि धरशो, काइ अवलो विचार न करशो रे, सु.
जिम तिम जाणी सेवक जाणेजो, अवसर लही सुधी लेजोर,
सु ॥६॥
आगगे कहिये तें तुमने, प्रभु दीने दिलासो अमने रे, सु
मोहनविजय सदा मन रंगे, चित्त लाग्यु प्रभुने संगे र, सु ॥७॥

श्री नेमिनाथ स्तवन

(अजित जिणंदसु प्रीतडी यह चाल)

परमातम पूरण कला, पूरण गुण हो पूरण जन आश।
पूरण दृष्टि निहालिये, चित्त धरिये हो अमची अरदास, पर॥१॥
सर्व देश घाती सहु, अघाती हो करी घात दयाल।
वास किये शिवमंदिर, मोह विसरी हो भमतो जगजाल, पर॥२॥
जगतारक पदवी लही, तार्या सही हो अपराधी अपार।
तात कहो मोहे तारता, किम कीनी हो इण अवसर वार, पर॥३॥
मोह महामद छाकथी, हु छकियो हो नहीं शुद्धि लगार।
उचित सही इण अवसरे, सेवकनी हो करवी संभाल, पर ॥४॥
मोह गया जो तारशो, तिण वेला हो किहा तुम उपगार।
सुखवेला सज्जन घणा, दु खवेला हो विरला संसार, पर॥५॥
पण तुम दरिसणजोगथी, थयो हृदये हो अनुभवप्रकाश।
अनुभव अभ्यासी करे, दुखदायी हो सहु कर्मविनाश, पर ॥६॥
कर्मकलंक निवारी ने, निजरूप हो रमे रमता राम।

लहत अपूरव भानथी, इण रीत हो तुम पद विशराम, पर ॥४॥
निकरण जोगे वीनवु, सुखदायी हो शिवादेवीनंद ।
चिदानद मनम सदा, तुमे आवो हो प्रभु नाणदिणंद, पर०॥५॥

श्री नेमिनाथ स्तवन

(तर्ज जिनमत का डका०)

आनंद का डका दुनिया म, बजवा दिया नेमि लालेने ।
ब्रह्मचर्य पराक्रम यादव म, बतला दिया नेमि लाले ने ॥
प्रभु आयुधशाला म जा करके, पचायन शख को पूर दिया ।
सुनते ही गिरधर आन खडे, चकरा दिया नेमि० ॥आ०॥१॥
श्री नेमिक बलको दखन को, श्रीकृष्णने लवा हाथ किया ।
गोपीयन के सन्मुख गिरिधर को, शर्मा दिया नेमि० ।आ०।२॥
फिर जान चढी आडबर से, तोरण से रथको फेर दिया ०।
पशुअन के कारण राजुल को, छटका दिया नेमि०। आ०॥३॥
दीक्षा का अवसर जान प्रभु, निज मात पितादिक को समझाया ।
एक वर्ष लगे दान काचन का, दिलवा दिया नेमि०।आ०॥४॥
एक सहस्र पुरुप सग सजम ले, सर्वज्ञ पद को प्राप्त किया ।
कर्मों का लश्कर जीत लिया, शिवपद का नेमि०।आ० ॥५॥
पृथ्वी तल को पावन कर प्रभु, शाश्वत सुख को प्राप्त किया ।
पर तिरिया परधन नही लेना, फर्मा दिया नेमि०॥
आनद का०॥६॥

श्री नेमिनाथस्तवन

हा नेम मने लागे प्यारो, शाम वरण मोहनगारो रे
नेम मने० आंकणी ।
समुद्रविजय शिवादेवी को जायो,
नगरी द्वारिका जनम लहायो ।
तीन लोक म हुओ उजियारो रे, नेम मने० ॥१॥
जान लइ प्रभु परणवा जावे,
उग्रसेन के घर जब आवे ।
सुणी पुकार पशु रथ पाछो फिरावे रे, नेम० ॥२॥
बालपने से हुए ब्रह्मचारी,
तजी रूपाली राजुल नारी ।
ससार मोहनी दूर निवारी र, नेम० ॥३॥
भरी जुवानी सजम लीनो,
शुक्ल ध्यान सहसावन कीनो ।
केवलज्ञान जहा प्रभु लीनो रे, नेम० ॥४॥
मोक्ष गये गिरनार स्वामी,
जन्म मरण से हुए विसरामी ।
सौभाग्यविजय शिरनामी रे, नेम

श्री नेमिनाथस्तवन

(धन धन वो जग में नरनार यह चाल)

नमु नेमनाथ महाराज, सांवरीया प्रीत लगाने वाले,
जाकुणी।
तेरी मूरत मोहनगार, मेरी अखियनको सुखकार।
तुम दर्श किया आनंद अपार, प्रभु मोसे प्रीत लगाने वाले,
नमु नेमनाथ० ॥१॥
किया पशुजनका उपकार, मुज पर क्यु न लगार।
तुम दास करो उद्धार, प्रभु भवपार कराने वाले, नमु० ॥२॥
कर सहसावनमें ध्यान, दिन पचावन परमाण।
लियो कवल शुभ नान, नाथ गिरनार दिपाने वाले, नमु० ॥३॥
बावीसमा जिनचंद, प्रभु शिवादेवी के है नंद,
सौभाग्यविजय सब फंद हरो, हम नाथ कहाने वाले,
नमु नेमनाथ० ॥४॥

नेमि राजुल पद

राजुल पुकारे नेम, पिया ऐसी क्या करी।
मुझे छोडके चले, चूक हम से क्या परी॥
राजुल पुकार० ॥१॥
हुइ आश की निराश, उदासीनता धरी '

प्यारा धस नहीं इसेरा, प्रीतम पीडमें परी ॥
राजुल पुकारे० ॥२॥

हम से रह्यो न जाय, प्रीतम तुम विना घरी ।
संग लीजिये दयाल, दया दिल में धरी ॥
राजुल पुकारे० ॥३॥

निशदिन तुमारा नाम, लेते ज्ञान की झरी ॥
राजुल पुकारे० ॥४॥

श्री नेमिनाथ गायन

मुझे चपलासी चमक बताय गयो रे, मुझे ।
महल चढी जोइ हियो हरखायो,
नैना को नेह लगाय गयो रे, मुझे० ॥१॥
कोड छप्पन जादव संग लायो,
नहीं पूरो खातो ग्वताय गयो रे, मुझे चपला० ॥२॥
समुद्रविजय शिवादेवीनंदन,
निरखी पशु पछताय गयो रे । मुझे चपला० ॥३॥
तोरणसे फिर गिरनारी गयो,
संजम दिलमे रचाय गयो रे । मुझे चपला० ॥४॥
नेम राजुल मिली ख्रर्म सधायो,
अचल अखंड पताय गयो रे । मुझे चपलासी० ॥५॥

श्री पार्श्वनाथजिनस्तवन

राता जेवा फूलडाने शामल जेवो रग ।
आज तारी आगी नो काइ रूडो बन्यो छे रग,
प्यारा पासजी हो लाल, दीनदयाल मुने नयणे निहाल ॥
जोगी वाडे जागतो ने मातो धिंगणमल्ल ।
शामलो सोहामणो काइ, जीत्या आठे मल्ल । प्या० ॥२॥
तू छे मारो साहिबो ने, हु छु तारो दास ।
आश पूरो दासनी काइ साभली अरदास । प्या० ॥३॥
देव सघला दीठा तेमा, एक तू अवल्ल ।
लाखेणो छे लटको ताहरो देखी रीझे दिल्ल । प्या० ॥४॥
कोई नमे पीरने ने, कोइ नमे राम ।
उदयरत्न कहे प्रभु, मारे तुमसु काम । प्या० ॥५॥

श्री पार्श्वनाथस्तवन

पारस तोरी निरखण दो असवारी, अरजी सुणो प्रभु म्हारी ॥ पारस ०॥आ०॥

काशी देश वाणारसी नयरी, दिन दशमी जयकारी ।
वामाराणी कूखथी प्रभुजी, जन्म लियो सुखकारी । पारस ०।१॥
छप्पन दिक्कुमरी हुलराया, हिये हर्ष अतिभारी ।
चोसठ इद्र करे वली महोच्छव, करवा भवजल पारी ॥
पारस ०॥२॥

एक क्रोड़ साठ लाख सोहे छे, कलस महामनुहारी ।
चार जोजन पहोला पट, पचीस जोजन उंचा धारी ॥
पारस० ॥३॥
नीचा उंचा जोजन पहोला, निर्मल भरीयो वारी ।
फूल चंगेरी बावना चंदन, केशर न घनसारी ॥पारस० ॥४॥
इणि परे ओछव सुरपति कीनो, जोइज्यो ग्रंथ संभारी ।
सुरगिरि ऊपर पाडुकवन में, पाडुशिला अतिप्यारी ॥
पारस० ॥५॥
अश्वसेनराय ओछव कीनो, दान दियो दिल धारी ।
शहरनी श्रेष्ठता जोव जुक्के, बेठा गोखमझारी ॥ पा० ॥६॥
लोक सहु पूजापो लइने, कमठकुं पूजनकारी ।
प्रभुजी पधार्या देखण काजे, नाग जलं तिण वारी ॥पा० ॥७॥
काष्ठ फडावी नाग निकाल्यो, सभलाव्यो मंत्र भारी ।
समकित लेइने सुरपति हुवा, धरणेन्द्र एकावतारी । पा० ॥८॥
उगणीसे इगतालीस वर्षे, पोष दशम रवीवाली ।
आहोर नगरमें ओछव कीनो, संघ सकल बलिहारी ॥पा० ॥९॥
सुंदरमूर्ति प्रभुनी बिराजे, भविजनकुं सुखकारी ।
कीर्तिचंद्रसम शोभे जगमें केशरविजय जयकारी ॥ पा० ॥१०॥

पचासरा पार्श्वनाथ स्तवन

(प्रथम जिनेश्वर प्रणमिये–यह चाल)

परमातम परमेश्वरु जगदीश्वर जिनराज ।
जगबधन जगभाण बलिहारी तुमतणी, ।
भवजलधिमा र जहाज ॥ परमा० ॥१॥
तारक वारक मोहनो, धारक निजगुण ऋद्धि ।
अतिशयवंत भदंत रुपाली शिववधू,
परणी लही निजसिद्धि ॥परमा० ॥२॥
ज्ञान दर्शन अनंत छे, वली तुज चरण अनंत।
एम दानादि अनंत क्षायिक भाव थया,
गुण ते अनंता अनंत ॥परमा० ॥३॥
बत्तीस वरण समाय छे, एकज श्लोकमझार ।
एक वर्ण प्रभु तुज न माये जगतमा,
केम करी थुणिये उदार ॥परमा ॥४॥
तुज गुण कोण गणी शके जो पण केवल होय ।
आविर्भावे तुज सयल गुण माहरे,
प्रच्छन्नभावथी जोय ॥ परमा० ॥५॥
श्री पचासरा पासजी, अरज करु एक तुज ।
आविर्भावथी थाय दयाल कृपानिधि,
करुणा कीजे जी मुज ॥परमा० ॥६॥

श्री जिन उत्तम ताहरी, आशा अधिक महाराज ।
पद्मविजय कहे एम लहू शिवनगरीनु,
अक्षय अविचलराज ॥परमा० ॥७॥

पार्श्वनाथजिनस्तवन

(राग काफी)

जिनराज नाम तेरा, राखु हमारे घटमें ।
जागे प्रभाव मेरा, अज्ञान का अंधेरा ।
भाग्या भया उजारा, राखु हमारे० ॥१॥
मुद्रा प्रमोद कारी, प्रभु पासजी तिहारी ।
मोह लगत है प्यारी, राखु हमारे० ॥२॥
सूरत तेरी रागे, देख्या विभाव त्यागे ।
अध्यातम रूप जागे, राखु हमारे० ॥३॥
त्रिलोकी नाथ तुम ही, मैं हूं अनाथ गुनहीं ।
करिये सनाथ हम हीं, राखु हमारे० ॥४॥
जिनजी तिहारी साखे, जिनहर्षसूरि भाखे ।
दिलमें हि याही राखे, राखु हमारे घट में ।
जिनराज० ॥५॥

नवकोडा पार्श्वनाथ स्तवन

(माढ राग)

नवकोडा स्वामी अतरजामी तारो दीनदयाल ॥
अश्वसेन जी क लाडला रे, वामादवी माय ।
नगर बनारसी जन्म लियो प्रभु, नील वरण छे कायरे ॥
नवकोडा० ॥१॥
पार्श्वनाथप्रभाव जगतमें, पूजे सुर नर इन्द ।
श्याम मूरत सुदर जिनजी को, मुखडो छे पूनमचद रे ॥
नवकोडा० ॥२॥
अरज सुणीजो दर्शन दीजो, मुजरो लीजो मान ।
जन्म मरण दु:ख टालो जिनजी, अरज करे छे कान र ॥
नवकोडा० ॥३॥

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

(नाथ कैसे गजको बध छुडायो–यह चाल)

नाथ मेरी वीनतडी अवधारो,
मोए जैसे बने ऐसे तारो, नाथ मेरी० । आ ।
अश्वसेन वामाजीको नदन, नागकु तारणहारो । कवल
ज्ञान लही जगभूषण, शिखर समेत शणगारो, नाथ मेरी० ॥१॥
सुर नर नरक निगोद तणा दुख, कहेवा न आवे पारो ।

अनतकाल मोह भटकत वीत्यो, तुमसे आन पुकारो नाथ० ॥२॥

ऐसा कोण दयाल जगतमें, जासे कहिये तारो। अनेक जीव भवजलसे तारे, मुजकु क्यु न सभारो। नाथ० ॥३॥

मिथ्यामत तम दूर करन कु, सहस्रकिरण अवतारो। सम कित शुद्ध ज्ञान निज दे के भवजल पार उतारो। नाथ० ॥४॥

वीस अधिक ओगणीस सातमें, माघ शुक्ल सोमवारो। बनारसीमें ओछव होवे, श्री सघ जयजयकारो। नाथ० ॥५॥

रामघाट प्रभु पास विराजे, समवसरण मनोहारो। हाथ जोड के अरज करत है, मोहन दास तुमारो ॥ नाथ मेरी वीनतडी अवधारो० ॥६॥

श्री पार्श्वनाथ स्तवन

(ढुढ फिरा जग सारा० यह चाल)

पार्श्वनाथ सुखकारा सुखकारा, जिनपति पूजो प्रेमसे। आ०
ज्ञान अनतक है प्रभु धारी, कर्म रोग सब दूर निवारी,
सूरज परे तज धारा तज धारा, जिनपति० ॥१॥
भवसमुद्रमें पडते बचावे, मोक्षमारग प्रभुजी दिखलावे,
कर जगत उपगारा उपगारा, जिनपति० ॥२॥
कमठ हठीको दूर निवारा, जलती आगसे सर्प उगारा
अहो दयाक प्रभु धारा प्रभु धारा, जिनपति० ॥३॥

पार्श्वयक्षसे पूजित पाया, पद्मावती-धरणेंद्रको भाया।
वंदो ऐसे प्रभु प्यारा प्रभु प्यारा, जिनपति० ॥४॥
एक ही चित्ते नाथ पूजनसे, वार वार फिर ध्यान करनसे,
होवे करम छुटकारा छुटकारा, जिनपति० ॥५॥
महाप्रभावी है इस जुगमें, पूरे मनोरथ मारे छिनमें,
वंदे सौभाग्य दिल धारा दिल धारा, जि० ॥६॥

श्रीमहावीर जिन स्तवन

(राग कडखेकी)

तार हो तार प्रभु मुज सेवक भणी,
जगतमा एटलु सुजस लीजे।
दास अवगुण भर्या जाणी पोता तणो,
दयानिधि दीन पर दया कीजे। तारहो० ॥१॥
राग-द्वेष भर्या मोह वैरी नड्यो,
लोकनी रीतिमा घणुंये रातो।
क्रोधवश धमधम्यो शुद्ध गुण नवि रम्यो,
भम्यो भवमांहि हु विषयमातो। तार० ॥२॥
आदर्युं आचरण लोकउपचारथी,
शास्त्र अभ्यास पण कांइ कीधो।
शुद्ध श्रद्धान वली आत्म अवलंबन विनु,
तेहवो कार्य तिणे को न सीधो। तार० ॥३॥

स्वामीदरिशण समो निमित्त लही निर्मलो,
जो उपादान ए शुचि न थाशे ।
दोष को वस्तुनो अथवा उद्यम तणो,
स्वामीसेवा सही निकट लाशे । तार० ॥४॥
स्वामीगुण ओलखी स्वामिने जे भजे,
दरिसणशुद्धता तेह पामे ।
ज्ञान चारित्र तप वीर्य उल्लासथी,
कर्म झीपी वसे मुक्ति धामे । तार हो० ॥५॥
जगतवत्सल महावीर जिनवर सुणी,
चित्त प्रभुचरणने शरण वासो ।
तारजो बापजी बिरुद निज राखवा,
दासनी सेवना रखे जोशो । तार० ॥६॥
वीनती मानजो शक्ति ए आपजो,
भावस्याद्वादता शुद्ध भासे ।
साध्य साधक दशा सिद्धता अनुभवी,
देवचंद्र विमल प्रभुता प्रकाशे । तार० ॥७॥

श्रीमहावीरस्तवन

(आवो आवो पासजी० यह देशी)

वाला प्रभु वीरजी सुखकारा रे, मारा प्राणथकी छो प्यारा ।
वाला० आ० ।

तात सिद्धारथ राया रे, माता त्रिशलाना प्रभु जाया रे।
कांचनवरणी छे जस काया। वाला० ॥१॥
बालपणाथी छो ब्रह्मचारी रे, परण्या यशोदा नारी रे।
रह्या त्रीस वरस घरबारी। वाला० ॥२॥
लेइ संजम वनमां वसिया रे, बार वरस लगे तप रसियारे,
पाम्या केवल भवदव खसिया। वाला० ॥ प्रभु० ॥३॥
प्रभु तार्या मेघकुमारा रे, कर्यो चंडकोशिक उद्धारा रे।
तारो मुजने प्रभु हितकारा। वाला० ॥४॥
शरणे आव्यो प्रभु ताहरे रे, चरणकमल वंदू तुमारे रे,
सौभाग्यविजय दिल प्यारे। वाला० ॥ प्रभु० ॥५॥

श्रीमहावीरस्तवन

मने तो मलियो मारो नाथ, पूरवना पुण्य प्रभावे रे।
मने तो मलियो० ॥
प्रीति अनादिनी, भूली गया छो स्वामी।
हवे नहीं छोडुं तारो साथ, नहीं छोडुं कदापि रे।
मने तो मलियो० ॥१॥
काल अनादिनो, हुं रखडुं छुं प्रभु जी,
भ्रमण करुं छुं गति चार, दुःखबहु तेथी पामुं रे।
मने तो मलियो० ॥२॥
हवे तुमे मलिया स्वामी, दुःख अमारुं कापो।

आपो ने शिवरमणीनो साथ, आपो प्रीत करीने रे ।
मने तो मलियो० ॥३॥
सुलसादिक नवने आप, जिनपद दीधु व्हाला ।
चंदनबालानु काप्यु दुख, तेम अमारु कापो रे ।
मने तो मलियो० ॥४॥
त्रिशलाना नंदन जिनजी, वीनति अवधारो व्हाला ।
प्रीतेथी खेंची ल्योने हाथ, नाथ मैं तमने धाया रे ।
मने तो मलियो० ॥५॥
धामनी कहे छे व्हाला, वीर प्रभुना गुणनी राशि ।
गावाथी तरिये आ संसार, वात छे सहज साची रे ।
मने तो मलियो० ॥६॥

श्रीमहावीरस्तवन

वाला वीर जिनेश्वर जन्म-जरा निवारजो रे,
प्यारा प्रभुजी प्रीते मुज शिर पर कर थापजो रे वा० ॥
तीन रतन आपो प्रभु मुजने,
खोट खजाने को नहीं तुजने ।
अरजी उर धरी कर्मकटक सहारजो रे । वाला० ॥१॥
कुमति दारुण वलगी मुजने,
नमी नमी वीनवु छु प्रभु तुजने ।
ए दुखथी दूर करवा व्हेला आवजो रे । वाला० ॥२॥

आ अटवीमा भूलो पडियो,
तू साहिब साचो मने मलियो ।
सेवकने शिवपुरनी सटक देखाडजो रे । वाला० ॥३॥
अरजी उचरीने जिन आगे,
महावीरमडल प्रभुपद मागे ।
महेर करी महाराज प्राण ने तारजो र ।
वाला वीरजिनेश्वर० ॥४॥

श्रीमहावीरस्तवन

(राग-इद्रसभाका)

महावीर महावीर मे जपु, और नित्य करू प्रणाम ।
प्रभुजी तुमारु मुखड्ड दखी, सफल हुआ सब काम ॥१॥
तेरे अग पर पुष्प चढाउ, भात भात के जात ।
गुलाब चपेली जासुद डमरो, मालती मोगर साथ ॥२॥
हीरे जडेलो मस्तके मुगट, कानमें कुडल सार ।
बांह बाजुबद बेरखा, ओर गले मोतिनको हार ॥३॥
ऐसी अगी महावीर प्रभुकी, दर्शन करे नरनार ।
प्रभु तोरा चरणकमल पसायसे, भविजन पामे भवपार ।
महावीर० ॥४॥
श्री लघुआदिजैनगोष्ठी, गावे गीत रसाल ।
सेवक पर करुणा करी, प्रभु दजो सुख विशाल ।
महावीर० ॥५॥

श्रीमहावीरजिनस्तवन

(राग-कानूडा तारी कामण०)

वीरजी तारी पावनकरनारी, मनमा आखलडी लागी।
मीठी वली सेवकमनवशकरनारी, मनमा० ॥
भवभय हरनारी तुम सुणवा, वाणी सुखकारी ।
हू चाहू हू चाहू जिनवर थइने हुसियारी, मनमा ॥१॥
दर्शन नर नारी तुम करवा, आवे दिल धारी ।
तू दाता तू दाता शिवसुख थइने शिवचारी, मनमा०॥२॥
जयहर उपकारी प्रभु तुम छो, आतमहितकारी ।
हू मागु हू मागु सुखकर वल्लभ भव पारी,
मनमा आखलडी लागी० ॥३॥

श्री चौवीसजिनस्तवन

ऊठ प्रभाते आदिजिननु, चेतन समरण कीजे रे। दिन दिन आनद मगल वाधे, जगमा जस बहु लीजे रे॥ऊठ०॥१॥

ऋषभ अजित सभव अभिनदन, सुमतिनी सेवा कीजे रे। पद्म सुपार्श्व प्रभुता आपो, चद्रप्रभु सुख दीजे रे॥ ऊठ० ॥२॥

सुविधि शीतल श्रेयास ध्यावो, वासुपूज्य विख्याता रे। विमल अनत धर्मजिन शाति, अनुभव सुखना दाता रे॥ ऊठ० ॥३॥

कुथु अर मल्लि मुनिसुव्रत, नमि नेमि जयकारी रे। पार्श्व वीरप्रभु समरण करता, आपो शिववधू सारी र ॥ ऊठ० ॥४॥

पुडरीक पमुहा मुनिवर वदू, गुणवता ऋपिराज रे। सोल सतीना समरण करता, सीझे वछित काज र ॥ ऊठ० ॥५॥

थावर जगम तीरथ जगमें, जे वद नरनारी रे। कीर्तिकमला ते भवि पामे, मोक्षतणा अधिकारी र ऊठ० ॥६॥

श्री सीमधरजिनस्तवन

श्रीसीमधर साहिबा, हु किम आवु तुम पास हो मुणिद। दूर विचे अतर घणो, मुने मिलवानी घणी आश हो मुणिंद ॥ श्रीसीमधर० ॥१॥

हु इण भरतने छेहडे, तुम प्रभु विदहमझार हो मुणिंद। डुगर वली नदियाघणी, तिहा कोश तो कइ हजार हो मुणिंद। श्रीसी० ॥२॥

प्रभुजी दता होशो देशना, साभले जिहांना लोग हो मुणिद। धन्य ते गाम नगर पुरी, ज्या वर्ते पुन्यसयोग हो मुणिद। श्रीसी० ॥३॥

धन्य ते श्रावक श्राविका, काइ निरखे प्रभु मुखचद हो मुणिद। मुज मनोरथ मनतणा, काइ फलशे भाग्य अमद हो मुणिद। श्रीसी० ॥४॥

वरतारो वरती रह्यो, काइ जोशी माडयु लगन्न हो मुणिं-द। कह सीमधर कद भेटयु, मुज मन लागी लगन्न हो मुणींद। श्रीसी० ॥५॥

पिण जोशी नही एहवो, काइ भाजे मननी भ्राव हो मुणींद। णइ भव तात कृपा करी, मुन आण मिलावो एकात हो मुणींद। श्रीसी० ॥६॥

वीतराग भाव सदा तुमें, वतो छो जगनाथ हो मुणींद। मे जाण्यु तुम केडथी, हव हु थयो स्वामी सनाथ हो मुणींद श्रीसी० ॥७॥

पुक्खलवइविजया वस, काइ नयरी पुडरिगिणी स्वाम हो मुणींद। सत्यकीनदन वदना, काइ जयधारो गुणना धाम हो मुणींद। श्रीसी० ॥८॥

राय श्रेयासकुलचदलो, राणी रुकमणींवरो कत हो मु-णींद। वाचक रामविजय कहे, तुम ध्याने हुवो मुज चित्त हो मुणींद। श्रीसी० ॥९॥

श्रीयुगमधर जिनस्तवन

काया पामी अतिकूडी, पाख नहीं आवु ऊडी, लब्धि नही कोय रूडी रे। श्रीयुगमधरने कहजो, दधिसुत वीनतडी सुणजो रे। श्री युग० ॥१॥

तुम सेवामाहे सुरकोडी, ते इहा आवे इक दोडी, आश फले पातक मोडी रे। श्री० ॥२॥

दुष्षम समयमा इण भरते, अतिशयनाणी कोइ नवि वरते, कहीये कहो कोण सांभलते रे । श्री० ॥३॥

श्रवणो सुखिया तुम नामे, नयणा दर्शन नवि पामे, एतो झगडाने ठामे रे । श्री० ॥४॥

चार आगल अंतर रहेतु, शोक्लडीनी परे दुख सहेतु, प्रभु विना कोण आगल कहेतु रे । श्री० ॥५॥

महोटा महेर करी आप, वहुनो तोल करी थाप, मज्जन जस जगमा व्याप रे । श्री० ॥६॥

वेहुनो एकमतो थावे, केवल नाणजुगल पावे, तो सवि वात वनी आवे रे । श्री० ॥७॥

गजलांछन गजगतिगामी, विचरे विप्राविजय स्वामी, नयरी विजया गुणधामी रे । श्री० ॥८॥

मात सुताराये जायो, देवरथनरपतिकुल आयो, पडित जिनविनये गायो रे । श्री० ॥९॥

श्री चंद्राननजिनस्तवन

चंद्रानन जिन, सांभलीये अरदास रे ।
मुज सेवक भणी, छे प्रभुनो विसासो रे । चंद्रा० ॥१॥
भरत क्षेत्र मानवपणो रे, लाधो दुष्षमकाल ।
जिन पूरवधर विरहथी रे, दुलहो साधन चालो रे ।
चंद्रानन० ॥२॥

द्रव्यक्रियारुचि जीवडा रे, भावधरमरुचिहीन ।
उपदेशक पण तेहवा रे, शुं करे जीव नवीन रे । च ॥३॥
तत्त्वागम जाणग तजी रे, बहु जन सम्मत जेह ।
मूढ हठी जन आदर्यो रे, सुगुरु कहावे तेह रे । च० ॥४॥
आणा साध्य विना क्रिया रे, लोके मान्यो रे धर्म ।
दमण नाण चारित्रनो रे, मूल न जाण्यो मर्म रे । च० ॥५॥
गच्छकदाग्रह साचवे रे, माने धर्म प्रसिद्ध ।
आतमगुण अकषायता रे, धर्म न जाणे शुद्ध रे । च० ॥६॥
तत्त्वरसिक जन थोडला रे, बहुलो जनसंवाद ।
जाणो छो जिनराजजी रे, सघलो एह विनोद रे । च० ॥७॥
नाथचरणवंदनतणो रे, मनमां घणो उमंग ।
पुण्य विना केम पामिये रे, प्रभु सेवननो संग रे । च० ॥८॥
जगतारक प्रभु वंदिये रे, महाविदेहमझार ।
वस्तुधर्म स्याद्वादता रे, सुणि करिये निरधार रे । च० ॥९॥
तुज करुणा सहु उपरे रे, सरखी छे महाराय ।
पण अविराधक जीवने रे, कारण सफलो थाय रे । च० ॥१०॥
एहवा पण जग जीवने रे, देव भगति आधार ।
प्रभु समरण थी पामिये रे, देवचंद्र पद सार रे । च० ॥११॥

श्री आदिशांतिनाथजिनस्तवन

मैं अरज करू शिरनामी, प्रभु कर जोड जोड जोड ॥
मैं भवबन में जा फसिया, वहां काल अनंता वसिया ।
मुझे लोभ सर्प आ डसिया, अखिया खोल खोल खोल ।

मैं अरज० ॥१॥

क्रोधानलने अतिबाला, मेरा अंग पड गया काला ।
मुझे पिला दे प्रेमरस प्याला, अमृत घोल घोल घोल ।

मैं अरज ० ॥२॥

मान अजगर मुझ को खावे, मेरा प्राण पलक में जावे ।
जडी जीवन कौन पिलावे, वनमें घोल घोल घोल ।

मैं अरज० ॥३॥

तुम नाम मंत्र से माना, कटु हो गया प्रभु ताजा ।
कठोरगाम महाराजा, आया डोल डोल डोल ।

मैं अरज० ॥४॥

श्री आदि शांतिजिन स्वामी, हमो मांग शिरनामी ।
गुण मुक्ताफल दो धामी, प्रभु जिन मोल मोल मोल ।

मैं अरज० ॥५॥

सामान्य जिन स्तवन

(राग कवाली)

गतास्ते दु समयदिवसा, गता सा दीनता क्षा ।
समाक्षाज्जादिभवपारा, गतोऽस्मि त्व पदं कुशली ॥१॥
अहो ससारकान्तारे, मयाऽद्य भ्राम्यताऽदर्शि ।
जगध्दितकारिसद्बुध्दि,-जिनार्य सार्थपतिरेप ॥२॥
अलोक्याऽऽलोकनाऽपूत, मयेद दृष्टियुगमद्य ।
पवित्रीभावमापन्नं, जिनेश्वर दर्शनाद् भवत. ॥३॥
त्वदीया भक्तिरल्पापि, विधत्ते पातक विफलम् ।
यथा वह्नेलवो दारु,-चय क्षणमात्रतो दहति ॥४॥
भव दाताऽथवा कृपण,-स्तथापि मे त्वमगामि ।
तवाग्रे सत्यमिति भाषे, कदाचिन्नैव याचेऽन्यम् ॥५॥
न मेऽर्थो वैबुधैर्लोभै,-र्न वा भूपालभोगाद्यै ।
इद तु याच्यते भगवन् ! वसेमम मानसे सततम् ॥६॥
यदि त्वन्नामदीपोऽय, मदीय द्योतयद् हृदयम् ।
तदा निजरूपससिध्दे,-र्भवेत्कल्याणपदगमनम् ॥७॥

सामान्य जिन स्तवन

अब तो प्रभुजी का लेलो शरन, लेलो शरन
प्यारे लेलो शरन । अबतो ०॥
उत्तम कुल जाति,

मानव भव अब पायो रतन। अबतो ० ॥१॥
द्रव्य भाव स पूजा प्रभुकी,
महानिशीथ जिनवरवचन। अबतो ० ॥२॥
गृही को पूजा दोनों ही सुदर,
भाव पूजामें साधु लगन। अबतो ० ॥३॥
अष्ट द्रव्य से द्रव्य पूजा है,
भाव पूजा करो प्रभु नमन। अब तो ० ॥४॥
जिनप्रतिमा जिन सरखी मानो,
आतम वल्लभ तारन तरन।
अब तो प्रभुजी का ० ॥५॥

श्री परमात्मस्तवन

सकल समता सुरलतानो, तूही अनोपम कद रे।
तूही कृपारस कनक कुंभो, तूही जिणद मुणिद रे ॥१॥
प्रभु तूही तूही तूही तूही तूही करता ध्यान रे।
तुज स्वरूपी जे थया, तणे लह्यु ताहरु तान रे। प्रभु० ॥२॥
तूही अलगो भव थकी पण, भविक ताहरु नाम रे।
पार भवनो तह पामे, एह अचरिज ठाम रे। प्रभु० ॥३॥
जन्म पावन आज माहरो, निरखियो तुज नूर रे।
भवो भव अनुमोदना जी हुओ आप हजूर रे। प्रभु० ॥४॥

एह माहरे अखय आतम असंख्यात प्रदेश रे।
ताहरा गुण जे अनंता किम करु तास निवेश रे। प्रभु० ॥५॥
एक एक प्रदेश ताहरे गुण अनंतनो वास रे।
एम करी तुज सहज मीलत हुए ज्ञान प्रकाश रे। प्रभु ॥६॥
ध्यान ध्याता ध्येय एक एकीभाव होय एम रे।
एम करता सेव्य सेवक भाव होए क्षेम रे। प्रभु० ॥७॥
शुध्ध सेवा ताहरी जे होय अचल स्वभाव रे।
ज्ञानविमल सुरींद प्रभुता, होय सुजस जमाव रे। प्रभु० ॥८॥

जिन-स्तवन

(तर्ज-हे प्रभु आनंद दाता०)

छोड जिनवर को, दुनीसे दिल लगा कर क्या करू।
हाथ हीरा मिल गया, कंकर को ले कर क्या करू ॥आं०॥
भवार्णव के ताप से, जलता फिरू कइ कालसे।
कल्पछाया मिल गइ, छाते को सिर पर क्या धरू ॥१॥
मोह अंधेरी रैन मे, चलते ही खाई ठोकरें।
ज्ञान दिनकर दख फिर, बत्ती जलाकर क्या करू ॥२॥
काल अनादि कर्म के हू, रोग से पीडित हुआ।
धर्म चूर्ण मिल गई, वैद्यो से मिल कर क्या करू ॥३॥
देव दवी सेव से, जलता रहा संसार में।
मोक्ष दाता अब मिला, पर की पूजा कर क्या करू ॥४॥

गा रहा हू प्रेम से, प्रभु गुण प्रभु के सामने ।
'प्राण' ही होवे खुशी, औरों को रिझा कर क्या करू ॥५॥
छोड जिनवर को०॥

जिन-स्तवन

है जगत मे नाम ये रोशन, सदा तेरा प्रभु ।
तारते उसको सदा जो, ले शरण तेरा प्रभु ॥
लाख चोरासी में घरा, कमाने मारा मुझे ।
ले बचा अब तो सहारा, है मुझे तेरा प्रभु । है० ॥१॥
सेंकडो को तारत हो, मेहर की करके नजर ।
क्यो नही तारा मुझे है, क्या गुना मेरा प्रभु ॥
है जगत में० ॥२॥
हाल जो तन का हुआ है, आप बिन किसको कहू ।
मोहराजाने मुझे, चारों तरफ घेरा प्रभु ॥
है जगत में० ॥३॥
आप से हरदम तिलक की, तो यही अरदास है ।
आप चरणों में रह, मेरा सदा डेरा प्रभु ॥
है जगत म० ॥४॥

जैनधर्मकी महत्ता पर स्तवन

(तर्ज—कमली वाले ने)

सब धर्मों में यह आला है,
आला है जैन निराला है।
सब चुन चुन कर लेय रहे,
तत्त्वों का यही मसाला है ॥आ०॥
ऐसे हैं जिनवर देव जिन्हें,
नहीं पक्षपात से चारा है।
आठों कर्मों को दूर किया,
शिवपुर में घर कर डाला है ॥सब०॥१॥
गुरु जैनी हैं सत्यवादी ये,
नहीं पाप परिग्रह या रागी हैं।
कंचन कामिनी को त्याग सदा,
महा पांच व्रतों को पाला है ॥सब०॥२॥
नहीं दुर्गति में गिरने देवे,
सद् रस्ता धर्म बताता यह।
सम्यक् दर्शन और ज्ञान क्रिया से,
'धीरज' जैन उजाला है ॥सब०॥३॥

प्रभु पूजा गायन

भर लावो रे कटोरा केसर का,
नव अंग पूजो परमेश्वर का। भर०॥
अमल कस्मीरी केसर मगाया,
कीच बनाया कीस्तूरी का। भर० ॥१॥
सती द्रौपदी चदण चर्चा,
ज्ञान सुणो सूत्र ज्ञाता का। भर० ॥२॥
नर नारी मिल मिल क पूजो,
ज्यु सुख पावो मुक्ति का। भर० ॥३॥
आन आनद मोण हर्ष बधावो,
ज्ञान चाकर प्रभु चरणा का।
भर लावो रे कटोरा केसर का ॥४॥

प्रभु भक्ति उपदेश पद

ध्यान म जिन के सदा, लयलीन होना चाहिये।
ज्ञान गुन ज्ञान शैली, परवीन होना चाहिये। ध्यान०॥
राह सयम की पकड, कल्याण की सूरत मिले।
काल गफ्लत में सज्जन, नाहक न खोना चाहिये।
ध्यान म० ॥१॥
धर्म खेती किया चाह, जमीन कु साफ रख।

बीज समकित का हृदय में, रुचि से बोना चाहिये।
ध्यान में० ॥२॥

कामना मन की सफल, आनंद से पूरन भई।
अब तो समतासेज ऊपर, सुख मे सोना चाहिये।
ध्यान में० ॥३॥

दाम चूनी अपने घर, आनद से फुलेगा कल्प।
भवस्थिति पकने मे, मुगताफल सही लेना चाहिये।
ध्यान में० ॥४॥

प्रभु प्रार्थना पद

साहब तेरी बंदगी मैं भूलता नहीं,
भूलता नहीं मैं विसरता नहीं। साहब०॥
अष्टादश दोष रहित देव है सही,
अन्य देव हरिहरादि मानता नहीं। साहब० ॥१॥
मुनि हैं निर्ग्रंथ सद्गुरु है सही,
अन्य गुरु वेशधारी मानता नहीं। साहब० ॥२॥
दान शीयल तप भाव धरम है सही,
अन्य धर्म विषय को मैं मानता नहीं। साहब० ॥३॥
मुक्ति रूप सिद्धि सुख वाछता सही,
संसार दुख जाल रूप जाचता नहीं। सा० ॥४॥
कहै मुनि वीतराग तारिये सही,
आवागमन भवभ्रमण का मेटिये सही। साहब० ॥५॥

प्रभु गुण गायन

सुसगी सुसगी सुसगी प्रभु मिल गये,
सफल भये मोर नैन। सुसगी० ॥१॥
एक तो मै दरिसन, मैं दरिसन, मैं दरिसन प्यासी,
दरिसन विना नही चैन । सुसगी प्रभु० ॥२॥
एक तो मैं पापी, मैं पापी, मैं पापी हू प्राणी ।
तारण वाले भगवान् । सुसगी० ॥३॥
एक तो मैं माया, मै माया, मैं माया का लोभी,
झूठी माया मेरी जान । सुसगी प्रभु० ॥४॥
एक तो मैं आया, मैं आया, मैं आया तोरे चरणे,
जैनमडली गुण गाय । सुसगी प्रभु मिल गये ॥५॥

जिनप्रतिमास्थापनास्तवन

श्री जिनप्रतिमा हो जिनसरखी कही, दीठा आणद अग ।
समकित बिगड हो शका कीजता, जिम अमृत विष सग
श्री० ॥१॥

आज नहीं कोइ तीर्थंकर इहा, नही कोइ अतिशयवत। जिन-
प्रतिमानो हो एक आधार छे, आपे मुक्ति एक्त। श्री० ॥२॥
सूत्र सिद्धात हो तर्क व्याकरण भण्या, पडित पण कहे लोक।

जिनप्रतिमाने हो जे माने नहीं, तेहनो सघलो फोक।
श्री० ॥३॥

प्रतिमाने आगे हो नमुत्थुण कहे, पूजा सत्तर प्रकार।
फल पिण बोल्या हो हित सुख मोक्षना, द्रौपदीने अधिकार।
श्री० ॥४॥

रायपसेणी हो ज्ञाता भगवती, जीवाभिगमादिमाझ।
ए सूत्र मान हो प्रतिमा माने नही, माहरी माय ने वाझ।
श्री० ॥५॥

साधुने बोल्यो हो भावस्तव भलो, श्रावक ने द्रव्य भाव।
ए बेहु करणी हो करता निस्तरे, श्रीजिनप्रतिमा प्रभाव।
श्री० ॥६॥

पासनाथ हो तुज प्रसादथी, सद्दहणा मुज एह।
भव भव हो जो हो समयसुन्दर कहे, श्रीजिनप्रतिमासु नेह।
श्री० ॥७॥

दीवाली वीरप्रभु स्तवन

मारग देशक मोक्षनो रे, केवल ज्ञान निधान।
भाव दया सागर प्रभु रे, पर उपगारी प्रधानो रे।
वीर प्रभु सिद्ध थया, सघ सकल आधारो रे,
हवे इण भरतमा, कोण करशे उपगारो रे। वीर० ॥१॥

नाथविहुणु सैन्य ज्यु रे, वीरविहुणो रे संघ ।
साधे कोण आधारथी रे, परमानंद अभंगो रे ।वीर० ॥२॥
मातविहुणो बाल ज्यु रे, अरहो परहो अथडाय ।
वीरविहुणा जीवडा रे, आकुल व्याकुल थाय रे। वीर० ॥३॥
संशयछेदक वीरनो रे, विरहो केम खमाय ।
जे दीठे सुख उपजे रे, ते विण केम रहवाय रे ।
वीर० ॥४॥
निर्यामक भवसमुद्रनो रे, भव-अटवी-सत्थवाह ।
ते परमेश्वर विण मले रे, केम वाधे उत्साहो रे।
वीर० ॥५॥
वीर थका पण श्रुततणो रे, हतो परम आधार ।
हवे इहां श्रुत आधार छे रे, अहो जिनमुद्रा सार रे ।
वीर० ॥६॥
त्रण काले सवि जीवने रे, आगमथी आणंद ।
सेवो ध्यावो भविजना रे, जिनपडिमा सुखकंदो रे ।
वीर० ॥७॥
गणधर आचारज मुनि रे, सहुने इणि पर सिद्ध ।
भव भव आगम संगथी रे, देवचंद्र पद लीध रे
वीर० ॥८॥

दीवाली महावीरजिन स्तवन

म्हारे दीवाली थई आज, जिनमुख जोवाने ॥आ०।
महावीर स्वामी मुगते पहोता, गौतम केवल नाण रे।
धन अमावस दीवाली म्हार, वीर प्रभु निर्वाण।
जिनमुख० ॥१॥
चारित्र पाली निरमलु ने, टाली विषय कषाय रे।
एहवा मुनिने वांदिये तो, उतार भवपार। जिन० ॥२॥
बाउला वहोराव्या वीरजीने, तारी चंदन बाला रे।
केवल लहीने मुगत पहोता, पाम्या भवनो पार। जिन० ॥३॥
एहवा मुनिने वांदिये, जे पंचम नाणन धरता रे।
समवसरण दई देशना, प्रभु तार्या नर ने नार। जिन० ॥४॥
चोवीसमा जिनेश्वरु ने, मुक्ति तणा दातार रे।
कर जोडी कवि इम भणे, प्रभु भवनो फेरो टाल। जिन ॥५॥

श्री पर्युषणा स्तवन

(आखडीये मे आज शेत्रुंजो दीठो रे यह चाल)

सुणजो साजन संत पजूसण आव्यां रे।
तुमे पुण्य करो पुण्यवंत, भविक मन भाव्या रे ।आ०।
वीर जिणेसर अति अलवेसर, व्हाला मोरा परमेश्वर एम बोले रे।
पर्व माहे पजूसण मोटा, अवर न आव तोले रे। पजू० ॥१॥

चोपगमांहे जेम केशरी मोटो, वाला मोरारागमां गरुड ते कहिये रे।
नदीमांहे जेम गंगा मोटी, नगमां मेरु लहिये रे। पजू० ॥२॥
भूपतिमां भरतेश्वर भाख्यो, वा० देव मांहे सुर इंद्र रे।
सकल तीरथ मांहे शेत्रुंजो दाख्यो, ग्रहगणमां जेम चंद्र रे
पजू० ॥३॥

दशरा दीवाली ने वली होली, वा० आखातीज दिवासो रे।
बलेव प्रमुख बहुला छे बीजा, पण ए मुक्तिनो वासो रे।
पजू० ॥४॥

ते माटे अमार पलावो, अट्ठाइ महोच्छव कीजे रे।
अट्ठम तप अधिकाइये करीने, नर भव लाहो लीजे रे।
पजू० ॥५॥

ढोल दुंदुभि भेरी नफेरी, वा० कल्पसूत्र जगावे रे।
झांझरनो झमकार करीने, गोरीनी टोली मली आवे रे।
पजू० ॥६॥

सोना रूपाने फूलडे वधावी, वा० कल्पसूत्र ने पूजे रे।
नव वखाण विधिए सांभलतां, पाप मवासी धूजे रे। पजू० ॥७॥
ए अट्ठाहिनो महोच्छव करतां, वा० बहु जगजन उद्धर्या रे।
विबुध विनीत वरसेनक एहथी, नवनिधि ऋद्धि सिद्धि वर्या रे।
पजू० ॥८॥

श्री सिद्धाचल स्तवन

(तीरथनी आशातना नवि० यह देशी)

विमल गिरिने भेटता सुख पायो, हारे सुख पायो रे सुख पायो, हारे आनंद घणो दिल छायो, हारे नमता गिरि-राज। विमल० ।आ०।

मूल मंदिर प्रभु ऋषभनी अतिप्यारी, हारे सोहे मूरत मोहनगारी। हारे जस महिमा छे अतिभारी, हारे मानु मोह-नवेल। विमल० ॥१॥

आस पास जिन बिंबने दिल धरिये, हारे रायण पगला न विसरिये। हारे पुंडरीक गणधर गुण वरिये, करिये जन्म पवित्र। विमल० ॥२॥

ऋषभ प्रभुजी आविया दिल धारी, हारे इहां पूर्व नवाणु वारी। हारे मुनि ध्यान धरयु अतिभारी, तीर्थ नमु गुणखाण। विमल० ॥३॥

पुंडरीकाचल नामथी ओलखायो, हारे ज्ञातासूत्रमें तीर्थ बतायो। सीमंधरजिन मुख से गवायो, नाम लिया दुख जाय। विमल० ॥४॥

तीर्थ प्रतापी भेटीयो मनुहारी, हारे रुडो देश सोरठ शणगारे। सौभाग्यविजय दिल प्यारो, नमिये वार वार। विमल० ॥५॥

श्री सिद्धाचल स्तवन

जिनदा तोरे चरण कमलकी रे,
हु चाहु सेवा प्यारी, तो नाशे कर्म कठारी,
भव भ्रांति मिट गइ मारी। जिनदा० ॥१॥

विमलगिरि राजे रे, महिमा अति गाजे रे।
वाजे जग डंका तेरा, तू सचा साहिब मेरा।
हु बालक चेरा तेरा। जिनदा० ॥२॥

करुणा कर स्वामी रे, तू अंतरजामी रे।
नाभि जग पूनमचंदा, तू अजर अमर सुखकंदा।
तू नाभिरायकुल नंदा। जिनदा० ॥३॥

इणगिरि सिद्धा रे मुनि अनंत प्रसिद्धा रे।
श्री पुंडरीक गणधारी, पुंडरीकगिरि म्हारी,
ए सहु महिमा तारी। जिनदा ॥४॥

तारक जग दीठा रे, पाप पंक सहु निठा रे।
इच्छा मो मन में भारी, मे कीधी सेवा तारी।
हु मास रही शुभ चारी। जि० ॥५॥

निरुद निहारो रे, अब मोह तारो रे।
तीर्थ जिनवर तो भेटी, जन्म जरा दु ख मेटी।
हु पायो गुणनी पेटी। जिनदा० ॥६॥

द्राविड वारिखिल्ला रे, दश क्रोडि मुनि मिल्ला रे।
हुआ भक्ति रमणी भरतार, कार्तिक पूनम दिन सारा।
जिनशासन जग जयकारा। जि० ॥७॥
संवत शशि चारा रे, निधि इंदु उदारा रे।
आतम को आनंदकारी, जिनशासन की बलिहारी।
पाम्या भवजल पारी। जिनदा० ॥८॥

श्री शत्रुंजय स्तवन

शेत्रुंजानो वासी प्यारो लागे मोरा राजिंदा,
लागे मोरा राजिंदा जी लागे मोरा० ॥
इण डुंगरीयारी जीणी जीणी कोरणी,
उपर शिखर बिराजे मोरा राजिंदा। शेत्रु० ॥१॥
चोमुख बिंब अनुपम बिराजे,
अद्‌भुत दीठा दुख भागे मोरा राजिंदा०। शे० ॥२॥
चुवा चंदन और अरगजा,
केशर तिलक बिराजे मोरा राजिंदा०। शे० ॥३॥
मस्तके मुकुट कान में कुंडल,
बांह बाजुबंद छाजे मोरा राजिंदा०। शे० ॥४॥
ज्ञान विमल प्रभु इणि परे बोले,
भव पार उतारो मोरा राजिंदा० शे० ॥५॥

गहुली

आज हमारे रे मगल रग वधाई, जय जय श्रीमहावीर जिनेश्वर
जगगुरु जगहितकारी, तुम शासन जगमा जयवतु
वरते मगलकारी । आज हमारे र मगल रग वधाई ॥१॥
स्वामि सुधर्म गणीश-परपर-नदनवन सुरशाखी ।
जगचद्रसूरीश्वरराने, तपगच्छ कीर्ति दाखी । आ० ॥२॥
हीरविजयसूरि जगहीरो, जेणे अवपथ प्रतिरोध्यो ।
अद्भुतशक्ति-कलापरिचयथी, अकबर भूपति बोध्यो ।
आ० ॥३॥
तास परपर गुणमणिरोहण, मणिविजय गुरुराया ।
शमदम त्यागवृत्तिधरी दुष्कर, सघ सकल मनभाया । आ० ॥४॥
तास शिष्य श्रीसिद्धिविजयगणि, शिष्यगणे परिवरिया ।
सघतणा शुभ आग्रहवशथी, महेशाणे पाउधरिया । आ० ॥५॥
अद्भुत तपगुण अद्भुत जपगुण, अद्भुत शमगुण परग्यो ।
शास्त्रबोध पण अद्भुत निरखी, सघ सकल बहु हरख्यो ।
आ० ॥६॥
देशदशातर कुकुमपत्री, मोकली सघ तेडाव
सूरिपद देवाने कारण, होंश घणी मन लाव । आ० ॥७॥
देशदेशातरथी आवीने, सघ चतुर्विध मलियो ।
शासनशोभा अग विचारी, जिनसम गुणमणिकलियो । आ० ॥८॥

वार इक्कीस धोइ जलमांह, तेह पिंड खाइ जल पीवो।
एहवो तप सुणता जीव रूप, मन धन धारो जीवो हो ॥धन्ना०
॥४॥

चउद सहस मुनीश्वर मांह, आपने वीरजी वखाण्या।
दरिशन निरमत पुण्यवंत पाव, अमे पण आज पिछाण्या हो
धन्ना० ॥५॥

नव मास लगे संजम पाली, सर्वार्थसिद्धिमें जाय।
राम कह ऐसे मुनीश्वर, निश्चे मुक्ति पद पाय हो॥धन्ना० ॥६॥

सद्गुरुसदुपदेशसज्झाय

इम सद्गुरु जीवने समझावे, नरभव अथिर दिखावे रे।
सो तो साचा सैण कहावे, जे जिनधर्म शुणावे रे॥ इम० ॥१॥

कुंती ते कुंकुमवरणी दही, उपमा दीजे कही रे। व्हाला
मिलिया सगा स्नेही, वाले घोचा दइ रे ॥ इम० ॥२॥

केना काका ने केनी काकी, काइ म जाणे नाकी रे।
स्वारथ विण सहु जावे थाकी, भगवन् इण परे भाखी रे॥
इम० ॥३॥

पहरण मलिया कडा ने मोती, वाग वेस न धोती रे।
घणी ज मेली आवी न पोथी, धम विना सहु थोथी रे॥
इम० ॥४॥

आव राल फिर यम दोला, हुव मितागा खोला र।
नाडया तूट काढे यम डोला, जीवडो खाय हिलोला रे॥
इम० ॥५॥

मदु मिलि अपणो रोणो रोव, नेहनी गति इग जोव रे।
जो स्वारथ पूग्यो नवि होव, तो पूठ ही निगोव र॥इम०॥६॥

म्हारो म्हारो करी म्हो घलो, जग स्वारथनो मेलो रे।
उठी चलेगो हम अकेलो, निछडया मिलशो दोहलो रे॥
इम० ॥७॥

धन मपद वादल जिम छाया, चदने चरची काया र।
एह ससारनी काची माया, छोडीने शिवपद पाया रे॥
इम० ॥८॥

धर्म तणो शरणो ले मोटो, छोड द मारग खोटो रे।
दया धमनो ले तू ओटो, कदी न आव त्रोटो रे॥इम०॥९॥

राजा चक्रवर्ती महाबलिया, काल अनता गलिया र।
कमज तूट शिवसुख मलिया, अवर ससार म रुलिया रे॥
इम० ॥१०॥

रात दिवस जिनजी सम ध्यावे, मन वाछित फल पावे रे।
प्रेम ने राज सदा सुख पावे, विजयरत्न गुण गाव रे॥
इम० ॥११॥

समकितभेद भावनारूप सज्झाय

चाखो नर समकित सुखडली, दु ख भूखडली भाजे रे। चार सद्दहणा सवैया लाडु, तीन लिंग फीणा छाजे रे॥ चाखो० ॥१॥

दशविध विनय दोठा मीठा, त्रण शुद्धि सरस सुहाली रे। आठ प्रभावक जनने रागी, वली दोषे करी टाली रे॥ चाखो० ॥२॥

भूषण पांच जलेबी कूली, छव्विह जयणा खाजा रे। लक्षण पाच मनोहर घेवर, छठाण गुदवडा ताजा रे॥ चाखो० ॥३॥

छ आगार नागोरी पेंडा, छ भावना पण पूडी रे। मत सठ भेद ए नव नवी भाणी, समकित सुखडी रूडी रे॥ चाखो० ॥४॥

श्री जिनशासन चोवटे मांडी, सिद्धांत धाली सारी रे। ए चाखे अजरामर थावे, शिष्य सुदर्शन प्यारी रे। चाखो० ॥५॥

मुनिगुणसज्झाय

ऐसे मुनिजन देखे वनम, ए तो समतारस लीननमें। ऐसे मुनिजन० ॥१॥

धूप महे शिखरन के ऊपर, मगन रहे ज्ञानन में। ऐसे० ॥२॥

मरुदेवी माता की सज्झाय

तुज साथे नहीं बोलु ऋषभ जी, त मुजने विसारी जी। अनन्तज्ञाननी तु ऋध्धि पाम्यो, तो जननी न संभारी जी। तुज० ॥१॥

मुजने मोह हतो तुज ऊपर, ऋषभ ऋषभ करी जपती जी अन्न उदक मुजने नवि रुचतु, तुज मुख जोवाने तपति जी। तुज० ॥२॥

तु तटो शिर छत्र धरावे, सेवे सुर नर नारी जी। तो जननी ने केम संभार, जाणी जाणी प्रीति ताहरी जी। तुज० ॥३॥

तु केहनो ने हु नथी केहनी, नथी रहा कोइ केहनु जी। ममता मोह धरे जे मनमा, मूर्ख पशु सहि तहनु जी। तुज० ॥४॥

अनित्य भावनाए चढ्या मरुदेवा, नठां गयवर खंधो जी। अन्तगड केवली थइ गया मुक्ते, ऋषभने मन आणंदो जी। तुज० ॥५॥

रहनेमि की सज्झाय

काउसग्ग ध्याने मुनि रहनेमि नामे,
रह्या छे गुफामा शुभपरिणाम रे।

दवरिया मुनिवर ध्यानमां रहजो,
ध्यानथकी होय भवनो पार रे, दवरिया० । आ० ॥
वरसाद भीना चीवर मोकला करवा,
राजुल आव्या तेणे ठाम रे, दवरिया० ॥१॥

रूप रति रे नवे वरजित बाला,
देखी खोभाणो तेणे काम रे, दवरिया० ।
दिलड्ड खोभाणु जाणी राजुल भाखे,
राखो थिर मन गुणना धाम रे, दवरिया० ॥२॥

जादवकुलमां जिनजी नेम नगीना,
वमन करी छे मुजने तेण रे, दवरिया० ।
वमन तेहना तुमे शिवादवी जाया,
एवडो पटन्तर कारण कुण रे, दवरिया० ॥३॥

परदारा सेवी प्राणी नरकमां जावे,
दुर्लभ बोधि प्राय होय रे, दवरिया० ।
साधवी साथे जे पाप न बाधे,
तेहनो छुटकारो कदीय न थाय रे, दव० ॥४॥

अशुचि काया रे मलमूत्रनी क्यारी,
तमने केम लागी एवडी प्यारी रे, दव० ।
हु रे सयती तुमे महाव्रत धारी,
कामे [illegible] शो हारी रे, दव० ॥५॥

भोग रम्या रे मुनि मनथी न इच्छे,
नाग अगंधन कुलना नेम रे, दय० ।
धिक् कुल नीचा वई नहथी निहाले,
न रहे सजम शोभा एम रे, दयरिया० ॥६॥
एवा रसीला राजुल वयण सुणीने,
बुझ्या रहनेमि प्रभुजीपास रे, दय० ।
पाप आलोइ फरी सजम लीधुं,
अनुक्रमे पाम्या शिवराज रे, दयरि० ॥७॥
धन्य धन्य जे नर नारी शीयलने पाले,
मधुद्रतधामम व्रत छे एह रे, दय० ।
रूप कहे तेहना नामथी होय,
अम मन निर्मल सुन्दर देह रे, दय० ॥८॥

अरणिक मुनि सज्झाय

अरणिक मुनिवर चाल्या गोचरी, तडके दाझे सीसोजी । पाय अलवाणो रे वेलु परनल, तनसुकुमाल मुनीशो जी । अर० ॥१॥

मुख कमलाणु रे मालती फूल ज्युं, उभा गोखनी हेठो जी । खरी बपोरे रे दीठा एकला, मोही मानिनी ढेठो जी । अर० ॥२॥

नयणरंगीली रे नयणे वींधीया, मुनि थम्या तेणे ठाणो जी। दासीने कह जा रे उतावली, मुनि तेडी घर आणो जी। अर० ॥३॥

पावन कीजे रे मुज घर आगणु, वहोरो मोदक मारो जी। नवयौवनरस काया क्यु दहो, सफल करो अवतारो जी। अर० ॥४॥

चन्द्रवदनीए चारित्र चूकव्यु, सुख विलसे दिन रातो जी। एक दिन रमता रे गोखे सोगठे, तव दीठी निज मातो जी। अर० ॥५॥

अरणिक अरणिक करती मा फिरे, गलिए गलिए मझारो जी। कहो कोणे दीठो र मारो अरणिलो, पूछे लोक हजारो जी। अर० ॥६॥

हु कायर छु रे मारी मावडी, चारित्र खाडानी धारो जी। धिक धिक विषया रे मारा जीवन, में कीधो अविचारो जी। अर० ॥७॥

गोखथी उतरी रे जननीपाय पडयो, मनसु लाज्यो अपारो जी। वछ तुज न घटे रे चारित्र चूकवु, जेहथी शिव सुख सारो जी। अर० ॥८॥

एम समजावी रे पाछो वालिओ, आण्यो गुरुनी पासो जी। सद्गुरु दिये रे शीख भली परे, वैराग मन वास्यो जी। अर०

अग्नि धगवती रे शिला उपर अरणिक अणगण सीधो जी। रूपविजय कहे धन्य ते मुनिवर, जणे मनवांछित फल लीधो जी। अर० ॥१०॥

श्री स्थूलभद्र सज्झाय

श्रीस्थूलभद्र मुनिगणमां शिरदार जो,
चोमासु आव्या कोशा आगार जो।
चित्रामणशालाए तप जप आदर्यां जो ॥१॥
आदरिया व्रत आव्या छो अम गेह जो,
सुन्दरी सुन्दर चपकवरणी देह जो।
हम तुम सरिखो मेलो आ समागमां जो ॥२॥
समारे मे जोयु सकल स्वरूप जो,
दर्पणनी छायामा देहनु रुप जो।
स्वपनानी सुखडली भूख भाग नही जो ॥३॥
ना कहशो तो नाटक करशु आज जो,
बार वरसनी माया छे मुनिराज जो।
त छोडी हु जाउ कम आशाभरी जो ॥४॥
आशा भरियो चेतन काल अनादि जो,
भम्यो धमने हीण थयो परमादी जो।
न जाणी म सुखनी करणी जागनी जो ॥५॥

जोगी तो जङ्गलमा वासो वसिया
वेश्याने मदिरिये भोगनरमिया ज
तुमने दीठा एहवा सयम साधता
सावद्यु सयम इच्छारोध विचा ज
कूर्मापुत्र थया नाणी घरमा जो
पाणीमाह कोरु पङ्कज नाणि जो।
नाणिये तो सघळी तमारी वात जो,
मेरा मीठाइ रमता वहुभात जो।
अवर भूषण नव नवली भांत लावता ज
लावता तो तु दती आदरमान जो,
काया जाणु पतगरग समान जो।
ठालीने शी करवी एहवी प्रीतडी जा
प्रीतलडी करता ते रगभर
रमता ने दखाडता पशु
रीसाणी मनावी मुनन मार्गे जो
साभरे तो मुनिवर मन
ढाक्यो अग्नि उघाड्यो
सजममाह ए छे दूषण
मोटकु तो आव्यु तु
जाता न वह काइ तमाह जो,
मं त वोल
[illegible] वोल क्रम साभळता जो

मोकल्या तो मारगमांह मलिया जो,
सभूति आचारज नामें चलिया जो।
सयम लीधु समकित तेणे शीखव्यु जो ॥१३॥

शीखव्यु तो कही दग्गाडो अमने जो,
धर्म करन्ता पुण्य वडरु तमने जो।
समताल घर आवी वरस्या इम कहजो ॥१४॥

कह मुनीश्वर श्रावने परिहार जो
समकित मूले श्रावकना व्रत बार जो।
प्राणातिपातादिक स्थूलथी उचर जो ॥१५॥

उचरे तो वीरयु छे चोमास जो,
आणा लईने आव्या गुरुनी पास जो।
श्रुतनाणी कहवाणा चौद पूरवी जो ॥१६॥

पूरवी थईने तप्या प्राणी शोक जो,
उज्ज्वलध्याने त गया देवलोक जो
ऋषभ कह नित्य तहने करिये वदना जो ॥१७॥

आत्मप्रबोध-सज्झाय

पूरव पुण्यसयोग पामी, नरभव उत्तम जात।
शुद्ध देव गुरु धर्म लहीने, म करो प्रमादनी वात रे प्राणी,
आतम साधन कीजे ॥१॥

एह संसार असार दुखागर,
श्री जिनधर्म भजीने रे प्राणी, आतमसाधन कीजे।
तन यौवन आउखो दिन दिन, अंजलि जल जिम छीजे।
तू निश्चिंत थइ रह्यो भोला, तुज ऊपर जम गाजे रे, । प्राणी।
आतम० ॥२॥

मात पिता सुत भाइ भगिनी, कांतादिक परिवार। आप स्वारथ खावाने कारण, मलियो छे निरधार रे प्राणी। आ० ॥३॥

पाप करी बहु धन तू मेले, खासी सघलोइ साथ। पाप तणा फल तू भोगवशे, दुर्गति एकलो अनाथ रे प्राणी। आ० ॥४॥

क्रोध मान मद मत्सर मातो, जातो काल न जाणे। संत साधुनी निंदा करता, हियडे शंका न आणे रे प्राणी।
आ० ॥५॥

इंद्र धनुष जिम जलपरपोटो, जइवो संध्यानो राग। जिम चंचल सौदामिनी झबके, तिम धन यौवन लाग रे। प्राणी। आ० ॥६॥

म्हारु म्हारु तु करी रह्यो भोला, ताहरु शरीर न होइ। आव्यो एकिलो ने जाशे एकिलो, ज्ञान दृष्टि करी जोइ रे प्राणी।
आ० ॥७॥

थोडिसी ऋद्धि सुख आगल देखी, झूठो करे अभिमान। जे सुरपति ज्यां जेहने हुता, बत्रीस लाख विमान रे प्राणी।
आ० ॥८॥

लाख चोरासी हय गय रथ जस, महरा चोमठ तस राणी। नव निधि चौद रयण जस मंदिर, लोप न को तस वाणी रे प्राणी। आ० ॥९॥

सहस बत्तीस नृप सेवा करता, पायक छिन्नु क्रोड। ते चक्रवर्ती इण भूमि समाणा, आ जग महोटी खोड रे प्राणी। आ० ॥१०॥

त्रण से साठ संग्राम शूरा, पूरा जस घर भोग। ते वासु देव देवगति हुआ, मूकी नर सुख जोग रे प्राणी। आ० ॥११॥

तीन भुवनमांह रटकी हुतो, नामथी डरता देवा। ते रावण रानारे पूठ, कोइ न रह्यो जल देवा रे प्राणी। आ० ॥१२॥

किहां ते राम किहां बलदेवा, पांच पांडव किहां देव। किहां ते नल कौरव वर्णादिक, ए सहु हुवा कथारूप रे प्राणी। आ० ॥१३॥

जिण घर कनक तोलाता बहुला, कनक तरु तिहां वास। तिण घर रमणी रमती हरिणाक्षी, हरिण चरे तिहां घास रे प्राणी। आ० ॥१४॥

जिण घर मणि माणक झुरजातो, तिल भर न होतो मास। ते घर हुवा रान बरोबर, वसे घुहड काग रे प्राणी। आ० ॥१५॥

एह संसार स्वरूप विचारी, सारी अक्ल करीजे। जेणे प्राणी थावे सुखियो, सो विधि मनमें धरीजे रे प्राणी। आ० ॥१६॥

जो वाछो सुख कीर्ति इण भव, पर भव शिवपुर वास। दान शीयल तप भावना भेटें, करो जिनधर्म उल्लास रे प्राणी। आ० ॥१७॥

वाचस्वर श्री सुमतिविजय गुरु, नेमविजय शिशु भाखे। सो जिनधर्म करो मन शुद्धे, दुर्गति पडता राखे रे प्राणी। आ० ॥१८॥

श्रीमेतारज मुनि सज्झाय

(सोना रूपा के सोगठे यह देशी)

धन धन मेतारज मुनि, जेणे संयम लीधो।
जीवदयाने कारणे, तेणे कोप न कीधो। धन० ॥१॥
मासखमणने पारणे, गोचरीने जाय।
सोवनकार तणे घरे, पहोता मुनिराय। धन० ॥२॥
सोवन जव श्रेणिकना, ऋषि पासे मुकी।
घर भीतर ते नर गयो, एक वात न चुकी। धन० ॥३॥
जव सघला पखी गले, मुनिवर ते देखे।
तव सोनी घर आवियो, जव तिहा नही देखे। धन० ॥४॥

रहो मुनिवर जव स्या गया, रहो ने कणे लीधा ।
मुनि उत्तर आप नही, तव चपटा दीधा । धन० ॥७॥
मुनिवर उपशमरसभया, पखी नाम न भाप ।
रोप करीन इम कह, जव छे तुम पासे । धन० ॥६॥
जव चोया राजातणा, तू तो मोटो चोर ।
आला चर्मतणो करी, वाध्यो मस्तक दोर । धन० ॥७॥
नेत्रयुगलतणी वेदना, निरखीया तवकाल ।
केवलज्ञान ते निर्मलु, पामी कीधो काल । धन० ॥८॥
शिव नगरी ते जइ चढयो, एहवो साधु सुजाण ।
गुणवतना गुण जे जप, तस घर कोड कल्याण । धन०॥९॥
नव कन्या तणे तजी, तजी कचन कोडी ।
नव पूरवधर वीरना, प्रणमु कर जोडी । धन० ॥१०॥
सिहतणी पर आदरी, सिहनी परे शूरो ।
सयम पाली शिव लही, जस जगमें पूरो । धन० ॥११॥
भारी काष्टतणी तिहा, उनेथी नाखे ।
धडकी पखी जव वम्या, ते दखी आखे । धन० ॥१२॥
तव सोनी मन चिंतव, कीधु खोटु काम ।
वात राजा जो जाणशे, तो टालश ठाम । धन० ॥१३॥
तव ते मनमा चितवे, भयथी निजहाथे ।
सोवनकार दीक्षा लिये, निज कुटुब सघात । धन० ॥१४॥
श्रीरत्नविजय वाचकरु, शिष्य बोले राम ।
साधुतणा गुण गावता, लहिये उत्तम ठाम । धन० ॥१५॥

श्री स्थूलिभद्र सज्झाय १

(देशी आछेलाल)

बोली गयो मुख बोल, चार घडीनो कोल,
आछेलाल हजीय न आव्यो वालहो जी।
देइ गयो दुखदाह, पाछो नाव्यो नाह,
आछेलाल के सही केणे भोल्व्यो जी॥१॥
रह तो नहीं क्षण एक, रे दासी सुविवेक,
आछेलाल जाइ जुओ दशे दिशाजी।
एम बोलती बाल, एहनी उत्तम चाल,
आछेलाल ऊल गयो मुज छेतरी जी॥२॥
उलस आलस थाय, अंग उचालो थाय,
आछेलाल नयणे नावे नींदडी जी।
चोखा चपकशरीर, नणदलना हो वीर,
आछेलाल नयणे में दीठा नही जी॥३॥
जेम बपैया मेह, मच्छने जलसु नह,
आछेलाल भमराने मन केतकी जी।
चकवो चाहे चंद, इंद्राणी मन इंद,
[illegible] प्रिय तमन ओलगु जी॥४॥

तुम विण घडीए छ मास, ते मुज नाखी पास।
आछेलाल निठुरपणु नर तें कर्युं जी।
मारो कोइक दोष मुकी मननो रोष,
आछेलाल साहेब तो करुणा करो जी।५॥

हुं निराधार नार, मेली गयो भरतार
आछेलाल ऊभी करु आलोचना जी।
एम वलवलती कोश, दती करमनो दोष,
आछेलाल दासी आवी रे दोडती जी ॥६॥

सांभल स्वामीनी वात, लाछिलदनो जात,
आछेलाल स्थूलिभद्र आव्यो रे आगणे जी।
वनिता सांभली वात, हियडे हरख न मात।
आछेलाल प्रीति पावन प्रभु तें करी जी ॥७॥

पधारो घर मुज, मुनि भाख्यो मनि गुज,
आछेलाल उठ हाथ अलगी रहे जी।
माता आगे मुमाल, तिम मुज आगल ख्याल।
आछेलाल एह प्रपंच शिक्षा भण्या जी ॥८॥

चित्रशाली चोमास, निहाली मुख तास,
आछेलाल वनिता विविधशु आलोचवे जी।
मादल ताल कमाल, भुंगल भेरी रसाल,
आछेलाल गावे नव नव रागसु जी ॥९॥

वाले विधिसु अंग, फरती फुदडी चंग,
आछेलाल हाव भाव बहु हलसु जी ।
सांभल स्वामीनी वात, सिहने वाले घात,
आछेलाल राडनो पाड राते गयो जी ॥१०॥

सो वालक साथे रोइ, पाणइयाने पानी न होय,
आछेलाल पथ्थर फाटयो ते किम मलेजी ।
समुद्र मीठो न थाय, पृथ्वी रसातल जाय,
आछेलाल सूर्य उगे पश्चिमदिशे जी ॥११॥

प्रतिबोधी इम कोश, छोडी रागने रोष,
आछेलाल द्वादश व्रतने उचरे जी ।
पूरण कीधो चोमास, आव्या श्री गुरुपास,
आछेलाल दुक्कर दुक्कर तू मही जी ॥१२॥

त्रीस वरस घर वास, पुरी सहुनी आश,
आछेलाल पञ्च महाव्रत पालता जी ।
धन्य मात धन्य तात, नागर न्याति रूयात,
आछेलाल चारु यश दिपावियो जी ॥१३॥

जे नर नारी गाय, तस घर लच्छी सवाय,
आछेलाल पभणे शांति मयाधकी जी ॥१४॥

श्रीस्थूलभद्र सज्झाय २

(दशी-भेष र उतारो राजा०)

वेष स्वामी जोइ आपनो, लागी मारा तनडामा लाय जी ।
अणघार्यु रे स्वामी आ तु कयुं, लाजे सुन्दर काय जी ।
कोणे र धुतारे तमने भोलव्या ॥१॥
आवी खबर जो होत तो, जावा देत नही नाथ जी ।
छेतरी छेह दीधो मने, पण छोडु नही साथ जी ।
कोणे रे धुतारे० ॥२॥
बोध सुणी सुगुरु तणो, लीधो सजमभार जी ।
मात पिता परिवार सहु, झूठो आल पपाल जी ।
नथी र धुतारे मने भोलव्यो ॥३॥
एहवु जाणी कोश्या सुन्दरी, थया साधु नो वेष जी ।
आव्यो गुरुनी आज्ञा लई, देवा तने उपदेश जी ।
नथी रे धुतारे० ॥४॥
काले सवारे भेगा रही, लीधा सुख अपार जी ।
ते मने बोध देवा आविया, जोग धरीने आ वार जी ।
जोग रे स्वामी जी अहीं नही रहे ॥५॥
कपट करीने मने छोडगा, आव्या तमे निरधार जी ।
पण छोड नही कदी नाथ जी, नथी नारी गमार जी ।
जो र० ॥६॥

छोड्या मात पिता वली, छोड्यो सहु परिवार जी।
ऋद्धि सिद्धि रे मैं तो तजी दीधी, मानी सघलु असार जी।
छेटी रही रे कर वात तू ॥७॥

जोग थयो रे अम साधुनो, छोडयो सघलानो प्यार जी।
मात समान गणु तने, सत्य कहु निरधार जी।
छेटी रही० ॥८॥

धार वरसनी प्रीतडी, पलमा तूटी जाय जी।
पस्तावो पाछलथी थशे, कहु लागीने पाय जी।
जोग र० ॥९॥

नारीचरित्र जोइ नाथ जी, तुरत छोडशो जोग जी।
माट चेतो प्रथम तमे, पछी हसशे लोक जी।
जोग र० ॥१०॥

चाला जोइ तारा सुन्दरी, डगु नही हु लगार जी।
काम शत्रु कहने कयो, जाणी पाप अपार जी।
छेटी रही रे गमे ते करो ॥११॥

छेटी रही रे गमे त करो, मारा माटे उपाय जी।
पण तारा माथु हु जोउ नही, शाने कर छे हाय जी।
छेटी रही रे० ॥१२॥

नदीमांहे निश दिन रहे पण, पाषाणपणु नवि जाय ।
लोहधातु टंकण नो लागे, अग्नि तुरत झराय । मू० ॥५॥

कागकण्ठमा मुक्ताफलनी, माला ते न जणाय ।
चन्दन चर्चित अंग करीने, गर्दभ गाय न थाय । मू० ॥६॥

सिंह चरम कोइ सियालसुतने, गारे वेप वनाय ।
सियालसुत पण सिंह न होवे, सियालपणु नहीं जाय । मू० ॥७॥

त माटे मूरखथी अलगा, रहे ते सुखीया थाय ।
ऊसर भूमि बीज न होवे, उलटु बीज ते जाय । मूरखने० ॥८॥

समकितधारीसंग करीने, भवभयभ्रांति मिटाय ।
मयाविनय सद्गुरु सेवाथी, बोधिबीज सुख पाय । मूर० ॥९॥

लोभ की सज्झाय

लोभ न करिये प्राणीया रे, लोभ बूरो संसार । लोभ समो जगमा नहीं रे, दुर्गतिनो दातार भविकजन, लोभ बूरो संसार । करजो तुमे निरधार भवि० जिम पामो भवपार । भवि० ॥१॥

अतिलोभे लक्ष्मीपति रे, सागर नामे शेठ । पूरवयोनि धिमा पड्यो रे, जइ बेठो ॥२॥
सोवनमृगना लोभे

सीता नारी गमावीने रे, भमियो ठामो ठाम। भविक० ।३।

दशमा गुणठाणा लगे र, लोभतणु छे जोर।
शिवपुर जाता जीवने रे, एहज महोटो चोर। भविक० ॥४॥

क्रोध मान माया लोभथी र, दुर्गति पामे जीव।
परवश पडियो रापडो र, अहोनिश पाड रीव। भविक० ।५।

परिग्रहना परिहारथी रे, लहिये शिवसुख सार।
देव दानव नरपति थइ र, जाशे मुक्ति मझार। भविक० ॥६॥

मानसागर पंडित भणे र, वीरसागरगुरु शिष्य।
लोभतणो त्याग करी र, पहोंचे सयल जगीश।
भविकजन० ॥७॥

देवानन्दा की सज्झाय।

जिनवररूप देखी मन हरखी, स्तनमें दूध झराया। तव गौतमकु भया र अचभा, प्रश्न करनकु आया हो गौतम ! ये तो हमेरी अम्मा ॥१॥

तम कूखे तुम काहु न वसिया, कवण क्रिया इणे कम्मा।
तव श्री वीर जिणद इम बोले, एह क्रिया इणे कम्मा, हो गौतम०॥

त्रिशलादे देराणी हुती, देवानदा जेठाणी। विषयलोभ करी काइ न जाण्यो, कपट वात मन आणी हो, गौतम० ॥३॥

देराणीनी रतनडाबडी, बहुला रतन चुराया। झगडो करता न्याय हुओ जब, तब कडु नाणा पाया, हो गौतम०।४।

ऐसा शराप दिया देराणी, तुम संतान न होजो। धर्म आगल कोइनु नवि चाले, इद्र चक्रवर्ती जोजो, हो गौतम०।५।

भरतराय जब ऋषभने पूछे, एहमा कोइ जिणदा। मरीचि पुत्र त्रिदण्डी तेरो, चोवीसमो जिनचदा हो, गौतम० ॥६॥

कुलनो गर्व कियो मैं गौतम, भरतराय जब वाद्या। मन वचन कायाए करीने, हरख्यो अति आणदा, हो गौतम० ॥७॥

कर्मसयोगे भिक्षुककुल पाम्यो, जन्म न होवे कबहु। इद्रे अवधे जोता अपहरियो, दन भुजगमनाहु, हो गौतम०।८।

व्यासी दिन हु तिहा कणे रमीयो, हरिणिगमेषी जब आया। सिद्धारथ त्रिशलादराणी, तस कूखे छटकाया, हो गौतम० ॥९॥

ऋषभदत्त ने देवानदा, लेशे सयम भारा। तब गौतम ए मुक्ते जाशे, भगवती सूत्र विचारा, हो गौतम० ॥१०॥

सिद्धारथ त्रिशलादे राणी, अच्युत देवलोक जाशे। बीजे खधे आचारागे, एह बात कहवाशे, हो गौतम० ॥११॥

तपगच्छ श्री हीरविजयसूरि, दियो मनोरथ वाणी। सकलचद प्रभु गौतम पूछे, उलट मनमा आणी, हो गौतम०।१२।

जम्बूस्वामी का चोढालिया

दुहा—

सरस्वती पदपङ्कज नमी, पामी सुगुरुपसाय ।
गुण गाता जम्बूस्वामीना, मुज मन हर्ष न माय ॥१॥
यौवनवय व्रत आदरी, पाले निरतिचार ।
मन वच काया शुद्धसु, जाउ तस बलिहार ॥२॥

ढाल पहली—

राजगृही नगरी भली रे लाल, धार जोजन विस्तार रे भविकजन । श्रेणिक नामे नरसरु रे लाल, मन्त्री अभयकुमार रे भविकजन, भाव धरी नित्य साभलो र लाल ॥१॥

ऋषभदत्त व्यवहारियो रे लाल, वसे तिहा धनवन्त रे भविकजन । धारणी तेहनी भारिया रे लाल, शीलादिक गुणवन्त रे भविकजन । भाव धरी० ॥२॥

सुख ससारना विलसता रे लाल, गर्भ रह्यो शुभ दिन रे भवि० । सुपन लही जम्बूवृक्षनु रे लाल, जन्म्यो पुत्र रतन रे भविकजन, भाव० ॥३॥

जम्बूकुमर नाम थापियु रे लाल, सुपनतणे अनुसार रे भवि० । अनुक्रमे यौवन पामियो रे लाल, हुओ गुणभण्डार रे भविक०, भाव० ॥४॥

ग्रामानुग्रामे विचरता रे लाल, आव्या सोहमस्वाम रे भवि० । पुरजन वादण आविया रे लाल, साथे जम्बू गुणधाम रे, भविक०, भा० ॥५॥

भविकजनना हित भणी रे लाल, दिये देशना गणधार रे भवि० । चारित्र चिंतामणिसारिखु र लाल, भवदुखभञ्जण हार र भविक०, भा० ॥६॥

देशना सुणी जम्बू रीझिया र लाल, गुरुने कह कर जोड र भवि० । अनुमति लेइ मात तातनी रे लाल, सयम लेउ मन कोड रे भवि०, भा० ॥७॥

ढाल दूसरी—

गुरु वादी घर आविया र, पामी मन वैराग । मात पिता प्रते वीनवे र, करसु ससारनो त्याग माताजी अनुमति द्यो मुज आज, जिम सीझे वछित काज माताजी। अनुमति० ॥१॥

चारित्र पन्थ छे दोहिलो र, व्रत छे खाडानी धार। लघु वय छे वत्स तुम तणु र, किम पले पश्चाचार कुमरजी, व्रतनी म करो वात, तु मुज एक अगजात कुमरजी, व्रतनी म करो वात ॥२॥

एकलविहार विचरवु र, रहेवु वन उद्यान। भूमि सथार पोढवु रे, धरवु धर्मनु ध्यान। कुमरजी, व्रत नी० ॥३॥

पाय अलवाणे चालनु रे, करनु देश विदेश। नीरस आहार लेनो सदा रे, परीसह केम सहीश, कुमरजी, व्रतनी० ॥४॥

कुमर कहे माता प्रते रे, ए संसार असार। तन धन यौवन कारिमा रे, जाता न लागे वार, माताजी, अनुमति० ॥५॥

माता कहे आल्हादथी रे, वत्स परणो शुभ नार। जोवन वय सुख भोगवी रे, पछे लेजो संजमभार, कुमरजी, व्रतनी० ॥६॥

मात पिताए आग्रह करी रे, परणावी आठे नार। जलथी कमल जिम भिन्न रहे रे, तिम रहे जम्बूकुमार, कुमरजी व्रतनी० ॥७॥

ढाल तीसरी—

प्रीतमने कहे कामिनी कामिनी, सुणो स्वामी अरदास सुगुणिजन सांभलो। सनेही अमृतस्वाद मूकी करी मूकी करी, कहो कोण पीव छास, सुगु० ॥१॥

सनेही कामकलारस कलजो केलजो, मूक्यो जी वतनो धन्य, सुगु०। सनेही परणीने शु परिहरो परिहरो, हाथ मे ल्यानो सबन्ध, सुगु० ॥२॥

सनेही चारित्र वेलुकवल जिस्यु कवल जिस्यु, तेमां किस्यो छे सवाद, सुगु०। सनेही भोग सामग्री पामी करी पामी करी, भोगवो भोग आल्हाद, सुगुणि० ॥३॥

सनेही भोग ते रोग अनादिनो अनादिनो, पीडे छे आतम अङ्ग, सु० । सनेही ते रोगने शमावरा शमावरा, चारित्र छ रे रसाग, सु० ॥४॥

सनेही क्रिपाकफल अति फूटरा फूटरा, खाता लागे मिष्ट सु० । सनेही विष पसर ज्यार अङ्गमा अङ्गमा, त्यारे होव अनिष्ट, सु० ॥५॥

सनेही दीपग्रही निज हाथमा हाथमा, क्रोण झपाव कूप सु० । सनेही नारी त विषवेलडी वेलडी, विषफल विषय विरूप, सु० ॥६॥

सनेही जो मुजसु तुम स्नेह छे स्नेह छे, तो व्रत ल्यो थइ उजमाल, सु० । सनेही एहवु जाणीने परिहरो परिहरो, ससार मायाजाल, सु० ॥७॥

ढाल चोथी—

एहवे प्रभवो आवियो, पाचसे चोरनी साथ रे । विद्याए ताला उघाडिया, धन लेवाने उमङ्ग रे, नमो नमो श्री जम्बू-स्वामीने ॥१॥

जम्बूए नवपदध्यानथी, थभ्या ते सवि चोर रे । थभ तणी परे थिर रह्या, प्रभवो पाम्यो अचम्ब रे । नमो नमो० ॥२॥

प्रभवो कहे जम्बू प्रते, दो विद्या मुज एह रे। कुमर कहे ए गुरुकने, छे विद्यानु गेह रे। नमो नमो० ॥३॥

पाच से चोर ते बुझवी, बुझव्या माय ने ताय रे। सासु ससरा नारी बूझवी, संजम लेवाने जाय रे, नमो नमो० ॥४॥

पाच से सत्तावीससु, परिवर्यो जम्बूकुमार रे सोहम गणधरने कने, लीये चारित्र उदार रे, नमो० ॥५॥

वीरथी वीसम वर्षे, थया युगप्रधान रे। चौद पूरब अवगाहीने, पाम्या केवलज्ञान र, नमो० ॥६॥

वरस चोसठ पदवी भोगवी, थापी प्रभव स्वामी रे। अष्ट करमनो क्षय करी, थया शिवगति गामी र, नमो नमो० ॥७॥

वरस अढार तेरोत्तरे, रह्या पाटण चोमास रे। चरमकेवली ने गावतां, होय लील विलास रे, नमो नमो० ॥८॥

महिमासागर सद्गुरु, नाम तणे सुपसाय रे। जम्बू स्वामी गुण गाइया, सौभाग्ये अधिक उच्छाह रे, नमो नमो० ॥९॥

आठ मद की सज्झाय

मद आठ महामुनि वारिये, जे दुर्गतिना दातारो रे।
श्री वीर जिणेसर उपदिशे, भाखे सोहम गणधारो रे।
मद आठ० ॥१॥

हांजी जातिनो मद पहेलो कह्यो, पूर्वे हरिकेशीए कीधो रे।
चण्डालतणे कुल उपन्यो, तपथी सवि काज सीधो रे।
मद० ॥२॥

हांजी कुलमद बीजो दाखियो, मरीचिभव कीधो प्राणी रे। कोडाकोडीसागर भव भम्यो, मद म करो एम मन जाणी रे। मद० ॥३॥

हांजी बलमदथी दुःख पामिया, श्रेणिक वसुभूति जीवो रे। जइ भोगव्या दुःख नरकना, मुख पाडता नित रीवो रे। मद० ॥४॥

हांजी सनतकुमार नरेसरु, सुर आगल रूप वखाण्यु रे। रोम रोम काया बिगडी गइ, मद चोथानु ए टाणु रे। मद० ॥५॥

हांजी मुनिवर संयम पालतां, तपनो मद मनमांहि आयो रे। थया कूरगडु ऋषि राजिया, पाम्या तपनो अंतरायो रे। मद० ॥६॥

हांजी देश दशारणनो धणी, राय दशार्णभद्र अभिमानी रे। इन्द्रनी ऋद्धि देखी बूझीयो, संसार तजी थयो ज्ञानी रे। मद० ॥७॥

हांजी स्थूलिभद्रे विद्यानो कर्यो, मद सातमो जे दुःखदायी रे। श्रुत पूरण अर्थ न पामिया, जुओ मानतणी अधिकाइ रे। मद० ॥८॥

राय सुभूम षट्खंडनो धणी, लाभनो मद कीधो अपारो रे। हय गय रथ सवि सायर गयु, गयो सातमी नरक मझारो रे। मद० ॥९॥

इम तन धन जोवन राजनो, म धरो मनमां अहंकारो रे। एह अथिर असत्य सवि कारमु, विणसे क्षणमां बहुवारो रे। मद० ॥१०॥

मद आठ निवारो व्रतधारी, पालो संयम सुखकारो रे। कहे मानविजय ते पामशे, अविचल पदवी नरनारी रे। मद० ॥११॥

बाहुबली की सज्झाय

राजतणा अतिलोभिया, भरत बाहुबली जूझे रे। मुठी उपाडी मारवा, बाहुबली प्रतिबूझे रे ॥१॥

वीरा मोरा गजथकी उतरो, गज चढे केवल न होय रे। ऋषभ जिनेसर मोकली, बाहुबलीनी पास रे। वीरा मोरा गजथकी उतरो ब्राह्मी सुन्दरी इम भाषे रे। वीरा० ॥२॥

लोच करी चारित्र लियो, वली आयो अभिमानो रे। लघु बन्धव वांदु नहीं, काउस्सग्ग रह्या शुभ ध्यानो रे। वीरा० ॥३॥

वरस दिवस काउस्सग्ग रह्या, वेलडीये वींटाणा रे। पंखीये माला घालिया, तापथीते सूकाणा रे। वीरा० ॥४॥

साधवी वचन सुणी करी, चमक्यो चित्त मझारी रे। हय गय रथ सहु परिहर्या, वली आव्यो अहंकारो रे। वीरा० ॥५॥

वैराग्य मन वालियो, मूक्यो निज अभिमान रे। पग उपाड्यो वांदवा, उपन्यु केवलज्ञान रे, वीरा मोरा० ॥६॥

पहोता केवली परखदा, बाहुबली ऋषिरायो रे। अजरामर पदवी लही, समयसुन्दर वन्दे पायो रे। वीरा० ॥७॥

मायासज्झाय

माया कारमी रे, माया म करो चतुर सुजाण।

आंकणी।

माया वाह्या जगत् विलुद्धो, दुखीयो थाय अजाण।
जे नर मायाए मोही रह्यो तेने, स्वप्ने नहीं सुख ठाण।
माया कारमी रे० ॥१॥

नाना मोटा नरने माया, नारीने अधिकेरी।
वली विशेषे अतिघणी व्यापे, घरडाने झाझेरी।
माया कार० ॥२॥

जोगी जती तपसी संन्यासी, नग्न थई परिवरिया।
ऊंधे मस्तक अग्नि धखन्ती, मायाथी न उगरिया।
माया कार० ॥३॥

माया मेली करी बहु मेली, लोमे लक्षण जाय।
भयथी धन धरतीमा गाडे, उपर विषधर थाय। मा० ॥४॥

माया कारण दूर देशातर, अटवी वनमां जाय।
जाझ बेसीने द्वीप द्वीपान्तर, जइ सायर झपलाय। मा० ॥५॥

शिवभूति सरखो सत्यवादी, सत्यघोष कहवाय।
रतन दखी तहनु मन चलियु, मरीने दुर्गति जाय। मा० ॥६॥

लब्धिदत्त मायाए नडियो, पडियो समुद्र मझार।
मुख माखणीयो थइने मरियो, पडियो त नरक दुवार। मा ॥७॥

इद्रे तो सिंहासन थापी, सभूवे माया राखी।
नेमीसर तो माया मेली, मुक्तिमा थया साखा। मा० ॥८॥

मन वचन कायाए माया, मेली वनमा चार।
धन्य धन्य तेह मुनीश्वर जेहना, तीन भुवन गुण गाय।
माया० ॥९॥

एहवु जाणी ने भवि प्राणी, माया मूको अलगी।
समयसुन्दर कह सार छे जगमा, धर्म रंगई वलगी।
माया झगमी रे० ॥१०॥

वयरस्वामी सज्झाय

सांभलजो तुम अद्भुत वातो, वयरस्वामी मुनिवरनी रे ॥सां०॥

षट्महिनाना गुरुझोलीमां, आवे केली करता रे।
तीन वरसना साधवी मुखथी अंग अग्यार भणता रे। सां० ॥१॥

राजसभामां नहीं क्षोभाणा, मानगुरुवडली दखी रे।
गुरुए दीधो ओघो मुहपत्ति, लीधो मन उलसी रे। सां० ॥२॥

गुरु सघात विहार करे मुनि, पाले शुद्ध आचार रे। बाल-
पणाथी महाउपयोगी, सवेगी शिरदार रे। सां० ॥३॥

कोलापाक ने घेवर भिक्षा, दोय ठाम नवि लीधी रे।
गगनगामिनी वैक्रिय लब्धि, देव नेहने दीधी रे।
सांभलजो० ॥४॥

दश पूरव भणीया जे मुनिवर, भद्रगुप्तगुरुपासे रे।
क्षीराश्रवप्रमुख जे लब्धि, परगट जास प्रकाशे रे।
सां० ॥५॥

कोडी सेंकडा धनने संचय, कन्या रुक्मिणी नामे रे।
शेठ धनावह दिये पण न लिए, वधते शुभपरिणामे रे।
सांभ० ॥६॥

दइ उपदेश ने रुक्मिणी नारी, तारी दीक्षा आपी रे। युग-प्रधान जे विचरे जगमां, सुरजतेजप्रतापी रे। सा० ॥७॥

समकित शीयल तुम्ब धरी करमां, मोहसागर कर्यो छोटो रे। ते केम बूडे नारीनदीमां, एतो मुनिवर महोटो रे। सा० ॥८॥

जेणे दुर्भिक्षे संघ लइ ने, मूक्यो नगर सुकाल रे। शासन शोभा उन्नति कारण, पुष्फपम्ब विशाल रे। सा० ॥९॥

बौद्धरायने पण प्रतिबोध्यो, कीधो शासनरागी रे। शासन शोभा जयपताका, अंबर जइने लागी रे। सा० ॥१०॥

विसर्यो शुंठ गांठिओ कान, आवश्यकवला जाण्यो रे। विसरे नही पण एह विसरीयो, आयु अल्प पिछान्यो रे। सा० ॥११॥

लाख सोनैये हांडी चढे जेने, बीजे दिन सुकाल रे। इम सभलावी वज्रसेनने, जाणी अणसण-काल रे। सा० ॥१२॥

रथावर्त गिरि जइ अणसण कीधु, सोहम हरि तिहां आवे रे। प्रदक्षिणा पर्वतने दइने, मुनिवर वन्दे भावे रे। सा० ॥१३॥

धन सिंहगिरि सूरि उत्तम, तेहना ए पटधारी रे। पद्म विजय कहे मुनिपदपङ्कज, नित नमीये नरनारी रे। सा० ॥१४॥

नन्दिषेण मुनिसज्झाय

ढाल पहली—

राजगृही नगरीनो वासी,
श्रेणिकनो सुत सुविलासी हो, मुनिवर वैरागी।
नन्दीषेण देशना सुणी भीनो,
ना ना कहतां व्रत लीनो हो, मुनिवर० ॥१॥
चारित्र नित्य चोखुं पाले,
संजम-रमणीसु महाले हो, मुनिवर०।
एक दिन जिनपाय लागी,
गोचरीनी आज्ञा मागी हो, मुनिवर० ॥२॥
पांगरियो मुनि वेरवा,
क्षुधा वदनी कर्म हरेवा हो, मुनिवर०।
उच नीच मध्यम कुल महोटा,
अटतो सज्झमरग लोटा हो, मुनिवर० ॥३॥
एक उंचो धवल घर देखी,
मुनिवर पेठो शुद्धगवेषी हो, मुनिवर०।
तिहां जइ दीधो धर्मलाभ,
वेश्या कहे अहो अर्थलाभ हो, मुनिवर० ॥४॥

मुनि मन अभिमान आणी,
खड करी नाख्यो तरणु ताणी हो, मुनिवर० ।
सोवन वृष्टि हुइ बार कोडी,
वेश्या वनिता कहे कर जोडी हो, मुनिवर० ॥५॥

ढाल दूसरी

ये तो उभा रहीने अरज, अमारी साभलो साधुजी ।
ये तो म्होटा कुलना जाणी, मूकी थो आमलो साधुजी ॥१॥
य तो लइ जाओ सोवन कोड, गाडा उटे भरी साधुजी,
था रे केसरीय कसवीने कपडे, मोही रही साधु जी ।
थारी मूर्ति मोहनगारी, जगतमा सोही रही सा०,
थारी आखडीयारो नीको, पाणी लागणो सा० ॥२॥
थारो नवलो जोबन वेप, विरहदुखभाजणो सा०,
ए तो जत्र जटित कपाट, कुची मे कर ग्रही सा० ।
मुनि चलवा लागो जाम, के आडी उभी रही सा०,
में तो ओछी स्त्रीनी जात, मति कही पाछली सा०,
थे तो सुगुणा चतुर सुजाण, विचारो आगली । सा०॥३
ये तो [illegible] पण सुदरी । सा०,
ये तो [illegible] वेप, घरेणा जरतरी । सा० ।

मणि मुक्ताफल मुगट, विराजे हमना । मा०,
अभे सजीव सोल शणगार, कं विउरम अङ्गना । सा० ॥४॥

जे होय चतुर सुजाण कं, कदीय न चूकशे मा०,
एहवो अवसर साहिब, कदीय न आवशे सा० ।
इम चिंते चित्त मझार, नन्दीषेण बाहलो मा०,
रह्या गणिकाने धाम क, थइने नाहलो मा० ॥५॥

ढाल तीसरी—

भोगकरम उदय तस आव्यो,
शासन देवीय समझाव्यो, हो मुनिवर वैरागी ।
रह्यो बार वरस तस आवास,
वश मेल्यो एकजपासें, हो मुनिवर० ॥१॥
दश नर प्रतिदिन प्रतिबूझे,
दिन एक मूरख नवि बूझे, हो मुनि० ।
बूझवता हुई बहु वेला,
भोजन नी थइ अवला हो मुनिवर० ॥२॥
कहे वेश्या उठो स्वामी,
एह दशमो न बूझे कामी, हो मुनिवर० ।
वेश्या वनिता कहे धसमसती,
आज दशमा तुम ही ज हसती, हो मुनि० ॥३॥

एह वयण सुणीने चाल्यो,
फरी संजमसु मन वाल्यो, हो मुनि० ।
फरी संजम लियो उल्लासे,
वेष लेइ गयो जिनपासे, हो मुनि० ॥४॥
चारित्र नित चोखु पाली,
देवलोक गयो दइ ताली, हो मुनि० ।
तप जप संयम किरिया साधी,
घणा जीवने प्रतिबोधी, हो मुनिवर० ॥५॥
जयविजयगुरुसीस,
तस हरख नमे निशदीस, हो मुनि० ।
मेरुविजय इम बोले,
एहना गुरुने कुण तोले, हो मुनिवर० ॥६॥

प्रसन्नचन्द्र मुनिसज्झाय

प्रणमु तुमारा पाय प्रसन्नचन्द प्रणमु तुमारा रे पाय । आ० ।
राज छोडी रलीयामणु रे, जाणी अथिर संसार ।
वैरागे मन वालीयु रे, लीधो संजमभार प्रसन्न० ॥१॥
शमसाने काउस्सग्ग रही रे, पग उपर पग चढाय ।
बाहु बेउ उंचा करी रे, सूरजसामी दृष्टि लगाय प्रस० ॥२॥

दुर्मुखदूत वचन सुणी रे, कोप चढ्यो ततकाल ।
मनसु संग्राम मांडीयो रे, जीव पड्यो जंजाल । प्र० ॥३॥

श्रेणिक प्रश्न पूछे तिहां रे, एहनी कुण गति थाय ।
भगवन्त कहे हमणा चवे तो, सातमी नरके जाय । प्र० ॥४॥

क्षण एक अन्तरे पूछियु रे, सर्वार्थसिद्ध विमान ।
वाजी देवनी दुन्दुभिर, मुनि पाम्या केवलज्ञान । प्र० ॥५॥

प्रसन्नचन्द मुनि मुगते गया रे, श्री महावीरना शिष्य ।
रूपविजय कहे धन्य धन्य छे एहने, मैं तो नाया
सुत्र प्रत्यक्ष प्रसन्न० ॥६॥

श्री दशवैकालिक सज्झाय

धम्मो मङ्गल महिमानिलो, धर्मसमो नहीं कोय ।
धर्मे सानिध देवता, धर्म शिवसुख होय । धम्मो० ॥१॥

जीवदया नित पालिये, संजम सत्तरप्रकार ।
बारे भेद तप तपो, धर्मतणो ए सार । धम्मो० ॥२॥

जिम तरुवरने फूलडे, भमरो रस ले जाय ।
तिम संतोषे आतमा, जिम फूल पीडा न थाय । धम्मो० ॥३॥

इण विधि विचरे गोचरी, लेवे शुद्ध आहार ।
ऊंच नीच मध्यम कुले, धन धन ते अणगार । धम्मो० ॥४॥

मुनिवर मधुकर सम कह्या, नहीं निश्रा नहीं दोष।
लाधे भाडो देहने, अणलाधे सन्तोष। धम्मो० ॥५॥
अध्ययन पहिले दुमपुप्फे, मखरा अर्थ विचार।
पुण्यकलशशिष्य जेतसी, धरमे जय जयकार। धम्मो० ॥६॥

पञ्चमी की सज्झाय

ढाल पहली

श्री वासुपूज्यजिनेश्वरवयणथी रे, रूपकुम्भ कञ्चन कुंभ मुनि दोय। रोहिणीमन्दिरसुन्दर आविया रे, नमी भय पूछे दम्पती सोय, चउनाणी वयणे र दम्पती मोहिया रे॥१॥

राजा राणी निज सुत आठनो रे, तप फल निजभव धारी सम्बन्ध। विनय करी पूछे महाराजने रे, चार सुताना भवप्रबन्ध। चउ० ॥२॥

रूपवती शीलवती ने गुणवती रे, सरस्वती ज्ञानकला भण्डार। जन्मथी रोग शोग दीठो नही रे, कुण पुण्ये लीधो एह अवतार। चउ० ॥३॥

ढाल दूसरी

गुरु कह वैताढय गिरिवरू रे पुत्री विद्याधरी चार। निज आयु ज्ञानीने पूछियो रे, करवा सफल अवतार, अवधारो अम वीनती रे॥१॥

गुरु कह ज्ञान उपयोगथी रे, एक दिवसनु आय। व्हेना वचन श्रवण सुण्या रे, मनमा विमासण थाय। अव० ॥२॥

थोडामा कार्य धमना रे, किम करिये मुनिराज। गुरु कह जोग असंख्य छे रे, ज्ञानपचमी तुम काज। अव० ॥३॥

क्षण आराधे भवि अघ टले रे, शुद्ध परिणामे साध्य। कल्याणक नव जिनतणा रे, पचमीदिवसे आराध। अव० ॥४॥

ढाल तीसरी

चैत्रवदि पचमी दिने, सुण प्राणिजी रे।
चविया चद्रप्रभ स्वाम, लहं सुखठाम। सुण प्रा०। आ०।
अजित सभव अनतजी, सुण प्राणिजी रे, पचमी शुदि शिवधाम शुभपरिणाम। सुण० ॥१॥

वैशाखसुदि पचमी दिने, सुण०, सजम लिये कुथुनाथ बहुनर साथ, सुण०। जेठसुदि पचमीदिने, सुण०, सुगति पाम्या धमनाथ, शिवपुरीमाथ, सुण प्राणि० ॥२॥

श्रावण सुदि पचमी दिने सुण०, जन्म्या नेमि सुरग अतिउछरग, सु०। मगसरवदि पचमी दिने, सु०, सुविधि जन्म शुभसग पुण्य अभग। सु० ॥३॥

कातिकवदि पचमी तिथि सु०, सभवकेवलनाण करो बहुमान, सु०। दशक्षेत्रे नेउजिणदना सु०, पचमीदिनना कल्याण सुखना निधान। सुण प्राणिनी रे ॥४॥

ढाल चोथी

हार मार ज्ञानीगुरुना वयण सुणी हितकार जो,
चार विद्याधरी पचमी विधिसु आदरे र लो। आ। ॥१॥

हार मारे शासननदन पचज्ञानमनोहार जो,
टाली र आशातना देववदन सदा रे लो ॥२॥

हार मारे तप पूरणथी उजमणानो भाव जो,
एहव विद्युत् योगे सुरपदवी वर्या रे लो ॥३॥

हार मारे धर्म मनोरथ आलस तजता होय जो,
धन्य ते आतम अवलनी कारज कर्या रे लो ॥४॥

हा र मारे देवथकी तुम कूखे लियो अवतार जो,
साभल रोहिणी ज्ञान आराधन फल घणा र लो ॥५॥

हार मार चारे चतुरा विनय विवक विचार जो,
गुण करता आलखिये तुम पुत्री तणार लो ॥६॥

ढाल पाचमी

ज्ञानीना वयणथी चारो बहनी,
जातिस्मरण पामी रे। ज्ञानी गुणवता।
त्रीजा भवमा धारण कीधी,
सीध्या मनना कामो र। ज्ञानी गुणवता ॥१॥

श्री जिनमदिर पच मनोहर,
पचवर्ण जिनपडिमा रे। ज्ञानी०।
जिनवर आगमना अनुसारे,
करिये उजमणानो महिमा रे। ज्ञानी० ॥२॥
पचमी आराधनथी पचम,
केवलज्ञान ते थाय रे। ज्ञानी०।
निजपलक्ष्मीसूरि अनुभव नाणे,
सघ सफल सुखदाय रे। ज्ञानी० ॥३॥

नागिला की सज्झाय

भवदेव भाइ घरे आविया रे,
प्रतिबोधवा मुनिराज रे।
हाथमा ते दीधु घृतनु पातरु रे,
भाइ मने आघरो वलाव रे,
नवी रे परणी ते गोरी नागिला रे ॥१॥
इम करी गुरुजी पासे आविया रे,
गुरुजी पूछे दीक्षानो काइ भाव रे।
लाजे नाकारो तेणे नवि कर्यो रे,
दीक्षा लीधी भाइनी पास रे, नवी रे० ॥२॥

धार वरस संजममा रह्या रे,
हैये धरता नागिलानु ध्यान रे।
हु मूरख में आ शु कर्यु रे,
नागिला तजी जीवनप्राण रे, नवी रे० ॥३॥

मात पिता एने नही रे,
एकली अबला नार रे।
तास उपर करुणा करी रे,
हवे तेनी करवी संभाल रे, नवी रे० ॥४॥

शशिवयणी मृगलोयणी रे,
चलगती मेली घरनी नार रे।
सोल वरसनी मा सुदरी रे,
सुदरतनु सुकुमार रे, नवी रे० ॥५॥

उमर पाकेल व्रत जे कर रे,
हरखे ग्रही करमाहि रे।
पाम्या ते शुभमति जेहनी रे,
हु तो पडीयो दुख अनाल रे, नवी रे० ॥६॥

भवदव भागे चित्ते आवियो रे,
अणओलखी पूछे घरनी नार रे।
कोइए दीठी ते गोरी नागिला रे,
अमे छीये व्रत छोडणहार रे, नवी रे० ॥७॥

नारी कह सुणो साधुजी रे,
वम्यो न लीए कोइ आहार रे।

हस्ती चढीने खर पर कोण चढे रे,
तमे छो गइ ज्ञानना भडार रे, नवी रे० ॥८॥

एडकीए वम्यो आहार जे करे रे,
ते नवि मानव आचार रे,

जे तमे घर घरणी तज्या रे,
हवे तनी करो शी सभाल रे, नवी रे० ॥९॥

धन्य वाहुवली शालिभद्रजी रे,
धन्य धन्य मेघकुमार रे।

स्त्री तजीने सजम जिणे लियो रे,
धन्य धन्य तेह अणगार रे, नवी रे० ॥१०॥

देवकी सुलसा सुत सागरूर,
नेमतणी सुणी वाणि रे।

वत्तीस वत्तीस प्रिया तणा र,
परिहर्या भोगविलास र, नवी र० ॥११॥

अकुशवश गज आणीयो र,
राजुलमति रहनेम र।

वचन अंकुशे तिहां वारियो रे,
नागिला भवदत तेम रे, नवी र० ॥१२॥

नारी न नरकनी खाण छे रे,
नरकनी देवणहार रे।

ते तमे तजो मुनिराजजी रे,
जिम पामो भवजल पार रे, नवी र० ॥१३॥

नागिलाए नाथने समजावियार,
पछी लीधो संजम भार रे।

कर्म खपावी मुगत गया रे,
हुवा हुवा शिव भरतार रे, नवी रे० ॥१४॥

पाचमे भवे जंबू स्वामी जी रे,
परण्या पदमिणी नार रे।

क्रोड नवाणु कंचन लाविया रे,
कल्पसूत्र माहि अधिकार रे, नवी रे० ॥१५॥

प्रभव साथ चोर पांचसे रे,
पदमणी आठे नार रे।

कर्म खपावी मुगति गया रे,
समय सुंदर सुखकार रे, नवी र० ॥१६॥

सामायिक के बत्तीस दोष की सज्झाय

चोपाई—

शुभ गुरु चरणे नामी सीस, सामायिकना दोष बत्तीस। कहीसु त्या मना दश दोष, दुश्मन देखी धरतो रोष ॥१॥

सामायिक अविवेके कर, अर्थ विचार न हइडे धरे। मन उद्वेग इच्छे यश घणो, न करे विनय वडेरा तणो ॥२॥

भय आणे चिंते व्यापार, फल सशय नियाणा सार। हवे वचनना दोष निवार, कुवचन बोले करे तूकार ॥३॥

लइ कुची जा घर उघाड, मुखे लवी करतो वढवाड। आवो जावो बोले गाल, मोह करी हुलरावे बाल ॥४॥

करे विकथाने हास अपार, ए दश दोष वचनना वार। काया केरा दूषण बार, चपलासन जोवे दिशि चार ॥५॥

सावद्य काम करे सधात, आलस मोडे उचे हाथ। पग लाबे वेसे अविनीत, ओठिगण ले थाभो भीत ॥६॥

मेल उतारे खरज खणाय, पग उपर चढावे पाय। अति उघाडु मेले अग, ढाके तेम वली अग उपाग ॥७॥

निद्राए रस फल निर्गमे, करहा कटक तरुये भमे। ए बत्तीसे दोष निवार, सामायिक करजो नर नार ॥८॥

समता ध्यान घटा उजली, केशरी चोर हुओ कवली। श्रीशुभवीर वचन पालती, स्वर्गे गइ सुलसा रेवती ॥९॥

मन भमरा की सज्झाय

भूल्यो मन भमरा तू क्या भम्यो, भम्यो दिवस ने रात ।
मायानो बांध्यो प्राणियो, भमे परिमल जात ॥ भूल्यो० ॥१॥

कुम्भ काचो रे काया कारमी, तेनो करो रे जतन ।
विणसता वार लागे नहीं, निर्मल राखो र मन्न । भू० ॥२॥

केना छोरु ने केना वाछरु, केना माय ने बाप ।
अन्त समय जासी एकलो, साथ पुण्य ने पाप ॥ भू० ॥३॥

आशा तो डुंगर जेवडी, मरवु पगलार हेठ ।
धन संची संची काइ करो, करो देवनी वेठ ॥ भू० ॥४॥

धन्धो करी धन जोडियो, लाखा उपर क्रोड ।
मरतानी वेला माननी, लीधो कन्दोरो छोड ॥भूल्यो० ॥५॥

मूरख कहे धन माहरो, धोके धान न खाय ।
वस्त्र विना जइ पोढवु, लखपति लाकडा माय ॥ भू० ॥६॥

भवसागर दु खजले भर्यो, तरवो छे रे तेह ।
वचमा भय सबलो थयो, कर्म वायरो ने मेह ॥ भू० ॥७॥

लखपति छत्रपति सब गया, गया लाख वे लाख।
गर्व करी गोखे बेसता, सर्व थया बली राख ॥ भू० ॥८॥

धमण धखन्ती रही गई, बूझ गई लाल अङ्गार ।
एरण को ठपको मटयो, उठ चल्यो र लुहार ॥ भू० ॥९॥

उजड मारग चालता, जावु पले रे पार ।
आगल हाट न वाणीयो, शबल लेजो रे सार ॥ भू० ॥१०॥
परदेशी परदेशमें, कुणसु करो रे सनेह ।
आया कागल उठ चल्यो, न गणे आंधी ने मेह ॥भू० ॥११॥
केइ चाल्या ने चालश, केइ चालणहार ।
कइ बेठा रे बुढा बापडा, जाये नरकमझार ॥भू० ॥१२॥
जिणघर नोबत बाजती, थाता छत्तीस राग ।
खण्डर थइ खाली पडया, बेठण लागा छे काग ॥भू० ॥१३॥
भमरो आव्यो रे कमलमा, लेवा कमलनु नूर ।
कमलनी वाछाए माहे रह्यो, निम आथमते सूर ॥भू० ॥१४॥
सद्गुरु कहे वस्तु वहोरिये, जे कोइ आवे रे साथ ।
आपणो लाभ उगारिने, लेवु साहिब हाथ ॥ भू० ॥१५॥



५ पद—संग्रह

लघुता भावना पद

लघुता मेरे मन मानी, लही गुरुगम ज्ञान निशानी ।
मद आठ जिन्होंने धारे, ते दुर्गति गये विचारे ।
देखो जगत में प्राणी, दुख लहत अधिक अभिमानी ॥
लघुता मेर० ॥१॥
शशी सूरज बड़े कहावे, ते राहु के वश आवे ।
तारागण लघुताधारी, स्वर्भानुभीति निवारी । लघुता० ॥२॥
छोटी अति जोयनगन्धी, लहे पट्रसस्वाद सुगन्धि ।
करटी मोटाई धारे, ते छार शीश निज डारे ॥ लघु० ॥३॥
जब बालचन्द होइ आवे, तब सहु जन दरशण पावे ।
पूनम दिन बड़ा कहावे, तब क्षीणकला होइ जावे । लघु० ॥४॥
गुरुवाई मनमें वेदे, नृप श्रवण नासिका छेदे ।
अङ्गमांहे लघु कहावे, ते कारण चरण पूजावे । लघु० ॥५॥
शिशु राजधाममें जावे, सखि हिल मिल गोद खिलावे ।
बडा होय जाण नवि पावे, जावे तो सीस कटावे । लघु० ॥६॥
अन्तर मदभाव वहावे, तब त्रिभुवननाथ कहावे ।
इम चिदानन्द यह गावे, रहणी विरला कोउ पावे । लघु० ॥७॥

रहेणी कहेणी स्वरूप पद

कथनी कथे सब कोइ, रहणी अति दुर्लभ होइ।
शुक रामको नाम वखाणे, नवि परमारथ तस जाणे।
या विध भणी वेद सुणावे, पण अकल कला नवि पावे। क० ॥१॥
छत्रीस प्रकार रसोइ, मुख गिणता तृप्ति न होइ।
शिशु नाम नहीं तस लेवे, रस स्वादत सुख अति लेवे। क० ॥२॥
बन्दी जन कडखा गावे, सुणी शूरा सीस कटावे।
जब रूण्ड मुण्डता भासे, सहु आगल चारण नाशे। क० ॥३॥
कहणी तो जगत मजूरी, रहणी है बन्दी हजूरी।
कथनी साकर सम मीठी, रहणी अति लागे अनीठी। क० ॥४॥
जब रहणीका घर पावे, तब कथनी गिनती आवे।
चिदानन्द इम जोइ, रहणी की सेज रहे सोइ । कथ० ॥५॥

भिन्न भिन्न मत स्वरूप पद

मारग साचा को न बतावे।

जासु जाय पूछियें ते तो, अपनी अपनी गावे। मारग०।
मतवारा मतवाद वाद धर, थापत निज मत नीका।
स्यादवाद अनुभव विन ताका, कथन लगत मोह फीका।
मारग साचा० ॥१॥

मत वेदांत ब्रह्मपद ध्यावत, निश्चय पख उर धारी ।
मीमांसक तो कर्म वदे ते, उदय भाव अनुसारी ।
मारग साचा० ॥२॥
कहत बौद्ध ते बुद्ध देव मम, क्षणिक रूप दरसावे ।
नैयायिक नयवाद ग्रही ते, करता कोउ ठेरावे ।
मारग साचा० ॥३॥
चारवाक निज मन कल्पना, शून्यवाद कोउ ठाणे ।
तिनमें भये अनेक भेद ते, अपनी अपनी ताणे ।
मारग साचा० ॥४॥
नय सरवंग साधना जामें, ते सरवंग कहावे ।
चिदानंद ऐसा जिन मारग, खोजी होय सो पावे ।
मारग साचा० ॥५॥

जैनस्वरूप पद

(राग धन्याश्री)

परमगुरु जैन कहो क्यु होवे,
गुरुउपदेश विना जन मूढा, दर्शन जैन विगोवे ।
परमगुरु० ॥१॥
कहत कृपानिधि शमरस झीले, कर्म मेल जे धोवे ।
बहुलपापमल अंग न धोवे, शुद्ध रूप निज जोवे ।
परमगुरु० ॥२॥

स्याद्वाद पूरन जो जाणे, नयगर्भित जस वाचा ।
गुण पर्याय द्रव्य जो बूझे, सोइ जैन है साचा । परमगुरु० ॥३॥

क्रियामूढमति जो अज्ञानी, चालत चाल अपूठी ।
जैन दशा उनमें ही नाहीं, कहे सो सब ही झूठी ॥परम०॥४॥

परपरणति अपनी कर माने, किरियागर्वे घहिलो ।
उनकु जैन कहो क्युं कहिये, सो मूरखमें पहिलो ।
परमगुरु० ॥५॥

ज्ञान भावज्ञान सबमांही, शिव साधन सदहिये ।
नाम भेषसें काम न सीझे, भाव उदास रहिये । परमगुरु० ॥६॥

ज्ञान सकलनयसाधन साधो, क्रिया ज्ञानकी दासी ।
क्रिया करत धरत है ममता, याही गले में फांसी ।
परमगुरु० ॥७॥

क्रिया विना ज्ञान नहीं कबहु, क्रिया ज्ञान विना नाहीं ।
क्रिया ज्ञान दोउ मिलत रहत है,
ज्यां जलरस जलमांहि । परमगुरु० ॥८॥

क्रिया-मगनता बाहिर दीसत, ज्ञानशक्ति जस भांजे ।
सद्गुरु शीख सुने नहीं कबहु, सो जन जनतें लाजे ।
परमगुरु० ॥९॥

तत्त्वबुद्धि जिनकी परिणति है, सकलसूत्रकी कुंची ।
जग जसवाद वदे उन ही को, जैन दशा जस उंची ।
परमगुरु० ॥१०॥

चेतन उपदेश पद

(राग धन्याश्री)

चेतन जो तू ज्ञान अभ्यासी, आप ही बांधे आप ही छोडे,
निजमति शक्ति विकासी । चेतन० ॥१॥
जो तू आप स्वभावे खेले, आशा छोडी उदासी ।
सुर-नर-किन्नर-नायकसंपत्ति, तो तुज घरकी दासी ।
चेतन० ॥२॥
मोहचोर जनगुण धन लूटे, देत आस गल फासी ।
आशा छोड उदास रहे जो, सो उत्तम सन्यासी । चेतन० ॥३॥
जोग लई पर आश धरत है, याही जगमें हासी ।
तू जाने मैं गुणकुं सचु, गुण तो जाव नाशी । चेतन० ॥४॥
पुद्गल की तू आश धरत है, सो तो सब ही विनाशी ।
तू तो भिन्न रूप है उन से, चिदानंद अविनाशी । चेतन० ॥५॥
धन खरचे नर बहुत गुमाने, करवत लेवे काशी ।
तो भी दुःख को अंत न आवे, जो आशा नहीं घासी । चेतन०॥६॥
सुख जल विषमविषय तृष्णा, होत मूढमति प्यासी ।
विभ्रम-भूमि भई पर आसी, तू तो सहज विलासी ।
चेतन० ॥७॥
याको पिता मोह दुःख भ्राता, होत विषयरति मासी ।
भव सुत भरता अविरत मानी, मिथ्यामति है हासी ।
चेतन० ॥८॥

आशा छोड रह जो जोगी, सो होवे शिववासी ।
उनको सुजस वखाने ज्ञाता, अतरदृष्टि प्रकासी । चेतन० ॥९॥

उपशम पर पद

(राग धन्याश्री)

जब लगे उपशम नाही रति, तब लगे जोग धर क्या होवे, नाम धरावे जति । जब लगे० ॥१॥

कपट करे तू बहुविध भाते, क्रोधे जले छति । ताको फल तू क्या पावेगो, ग्यान बिना नाही वति । जब लगे० ॥२॥

भूख तरस और धूप सहतु है, कह तू ब्रह्मव्रती । कपट केलवे माया मड, मनमें धर रती । जब लगे० ॥३॥

भस्म लगावत ठाडो रहवत, कहत है हू वसती । जत्र मत्र जडी बूटी भेषज, लोभवश मूढमति । जब लगे० ॥४॥

बडे बडे बहु पूरवधारी, जिनमे शक्ति हता । सो भी उपशम छोडी विचार, पाये नरक गति । जब लगे० ॥५॥

कोउ गृहस्थ कोउ वैरागी, जोगी जगत जति, अध्यातम भावे उदासी रहेगो, पावेगो तबही मुगति । जब लगे० ॥६॥

श्री नयविजय विबुधवर राजे, जाने जगको रति ।
श्री जसविजय उवज्झायपसावे, हमप्रभु सुख सतति ।
जबलगे० ॥७॥

शरीररथपर पद

(राग आशावरी)

पांचो घोडे एक रथ जूता, साहिब उसका भीतर सूता।
खेडू उसका मदमतवारा, घोडेकु दोरावनहारा।पाचो घोडे० ॥१॥

घोडे छूटे ओर ओर चाहे, रथकु फिरि फिरि उनर नाहे।
विषम पन्थ चिहु ओर अंधियारा, तो भी न जागे साहिब प्यारा।
पाचो घो० ॥२॥

खेडू रथकु दूर दोरावे, वेखवर साहिब दुख पावे। रथ
जङ्गलमा जाय अमूझे, साहिब सोचा कछु न बूझे। पाचो
घोडे० ॥३॥

चोर ठगोरे वहा मली आये, दोनुकु मद प्याला पाये।
रथ जङ्गलमें जीरण कीना, मालधनीका उदारी लीना।
पाचो० ॥४॥

धनी जग्या तब खेडू धाध्या, रामी पराना ले सिर सांध्या। चोर भगे रथ मारग लाया, अपना राज विनय जिउ
पाया। पाचो घोडे० ॥५॥

कायामन्दिर पर पद

(राग ठुमरी)

मंदिर एक बनाया हमने। मंदिर० ॥१॥

जिस मंदिरकूं दश दरवाजा, एक सुन्दरी माया रे। नानो पखी जाके अन्दर, राज कर चित्त लाया र। मन्दिर एक० ॥१॥

हाड मास जाके नहीं दीसे, रूप रङ्ग नहीं जाया र। पङ्ख न दीसे कैसे पिछानु, पदरस भोगी भाया र। मन्दिर एक० ॥२॥

जातो आतो नहीं कोइ दखे, नहीं कोइ रूप बताव रे। सब जग खाया तो पण भूखो, तृप्ति कबहीं न पावे र। मन्दिर एक० ॥३॥

जालम पखी तालम मंदिर, पाठी कोन बताने रे। उस पखी को जो कोइ जाने, सो ज्ञानानन्दनिधि पावे र। मंदिर एक० ॥४॥

उपदेश पद

(काम छे दुष्ट विकारी० यह राग)

मस्त भयो तन धनमें। मुसाफिर मस्त भयो तन धन में। उठ जाना एक छिनमें। मुसाफर०। आ० ॥

इस तन डेरा छोड चलेगा, हंसा परभववनमें। मुसा० ।
मट्टीका मठ फुक दियेगा, मनकी रहगी मनमें ॥ मु० ॥१॥
अक्कड फक्कड मूछ मरोडत, त्राम पडावत जनमें। मु० ।
पर्णकुटी जालवता आखर, गिर पडेगी पवनमें । मु० ॥२॥
तन धन वैभव सुपना जैसा, सध्या रंग गगन में। मु० ।
पलकी खबर नहीं प्राणीने, राख रक होय छिन में ॥ मु० ॥३॥
क्या अभिमान करे मन मर्कट, साकलचन्द स्वजन में।
तन धन अर्पण कर परमारथ, मन धर प्रभु के भजन में ॥
मुसाफर० ॥४॥

समय की दुर्लभता पर पद

(राग-नाथ कैसे गज को बन्ध०)

कदी नहीं समय गयो फरि मलशे,
भव भ्रमण क्षय थइ टलशे, कदी नहीं० आ० ॥
आ काया छे काचनो कूपो, तटक दइने तटक ।
पाणीना परपोटा सरखी, फटक दइने फटक । कदी० ॥१॥
क्रूर कुपाय कूरताधारी, पाप कूपमें पटके ।
आ भवसागर पार उतरवा, अधवच जाता अटके ॥
कदी नहीं० ॥२॥

मारु तारु करी शु मोह पामे, क्षणमा मरी जाशु मटके।
चर्म सुख शु चतुर बनीने, चतुरा केर चटक॥
कदी नहीं० ॥३॥
आ मानवतन चिंतामणि सम, त कयम व्यर्थ गुमावे।
काल अचानक आवी लेशे, तो पछी नहीं काइ फावे॥
कदी नहीं० ॥४॥
समकित सुन्दर धारी धरामा, धर्मनु साधन करजे।
जिनवर नाम जपी ममतामा, महन गुणे तू ठरजे॥
कदी नहीं० ॥५॥
करी निर्जरा तपथी सारी, कर्म जालने हरने।
आश्रव दूर करी अंतरथी, शिवपद सहने वरजे॥
कदी नहीं० ॥६॥

चेतन उपदेश पद

(गाफिल तू शोच दिल में)

चेतन तू चेत जलदी, कर ले सुधार अपना।
दिखता नहीं है तुज को, इस जींदगी का घटना॥
चेतन तू० ॥१॥
माता पिता वो भाइ, निजस्वाथ के हैं सारे।
छिनमें पिछोड तुजको, होत हैं सर्व न्यारे। चेतन० ॥२॥

लक्ष्मी है वीजचपला, यौवन भी दिन चारा।
क्षणनाशी जिंदगानी, कर देह का सुधारा। चेतन० ॥३॥
सुंदर महल गाडी, गाडी तुरग हाथी।
आखिर ने छोड जाना, नहीं होय कोई साथी। चेतन० ॥४॥
मोटर घोडकी गाडी, लाडी बहोत प्यारी।
सब शौक की ये चीजें, छिनमें विनाशहारी। चे० ॥५॥
बलवन्त चक्रवर्ती, राने प्रसिद्ध नामी।
सब राज पाट छोडी, परलोक पथ गामी। चे० ॥६॥
दुनिया का मोह छोडो, लेवो प्रभु का शरणा।
विनशे ज्यु कर्म फंदा, पावो सौभाग्य झरणा।
चेतन तू चेत० ॥७॥

उपदेश पद

(देशी भर्तृहरि की)

सार नहीं है संसारमां, करो मनमा विचार जी।
नेत्र उघाडी जोइये, करिये आतमसुधार जी।
सार नहीं है० ॥१॥
जाग जाग भवि प्राणिया, आयु झटपट जाय जी।
चखत गये फरी नावशे, कारज कइय न थाय जी।
सार नहीं है० ॥२॥

दश दृष्टान्ते दोहिलो, पामी नर अवतार जी ।
दश गुरु जोग पामी ने, करिव जन्मसुधार जी ।
गार नहीं है० ॥३॥

मारु मारु करी जीव तूं, फर्यो सघले ठाम जी ।
आश फली नहीं क्याहश, पाम्यो दुखनो ठाम जी ।
मार नहीं है० ॥४॥

मात पिता सुत बांधवा, चढती समें आवे पास जी ।
पडती समें कोइ नवि रहे, दखो स्वार्थ विलास जी ।
सार नहीं है० ॥५॥

रावण सरखो रे राजवी, लंकापति जे कहाय जी ।
तीन जगत में गाजतो, मन अभिमान धराय जी ।
गार नहीं है० ॥६॥

अन्त समयें गयो एकलो, नहीं गयु कोइ तस साथ जी ।
एम जाणी धर्म सेवीने, रहशे परभव साथ जी ।
सार नहीं है० ॥७॥

मोहनिद्राथी जागीने, करो धर्मसु प्रेम जी ।
विजयसौभाग्यनी वाणीने, धारो मन धरि प्रेम जी ।
सार नहीं है० ॥८॥

आत्म उपदेश पद

(अवधू ऐसा ज्ञान विचारी–यह देशी)

अवधू आतमरूप पिछानो, जामें तीनजगतसुख मानो ।
अवधू आतम० ॥
पुद्गल के संग पडके चेतन, दुख अनन्ते पाया ।
तृष्णा पिशाचिन के वश पडके, वार बार अथडाया ।
अवधू आतम० ॥१॥
सुमति सुहागण छोडके प्यार, कुमतिसे प्रेम लगाया ।
दास घना कर अपना तुजको, बहुत ही नाच नचाया ।
अवधू आतम० ॥२॥
परवशता दुःख है अतिभारी, चेतन उसको निवारो ।
दीपकपरवश देखो पतङ्गा, छिनमें प्राण निडारो । अ० ॥३॥
आशापाशमें जकडा चेतन, भवदिशामें फिरायो ।
काजसिद्धि कछु नाहीं पावत, निष्फल जन्म गुमायो ।
अवधू आतम० ॥४॥
शुद्धस्वरूपी तू है सदा का, गुण अनन्ते धारी ।
पर परभावदशा को धरके, करि निज ऋद्धि गुवारी । अ० ॥५॥
बाह्य वस्तु सब नेह निवारी, हो निजभावविलासी ।
सौभाग्यविजय कहे सुनो मेरे मन्तो, छिनमें शिवपुरवासी ।
अवधू आतम० ॥६॥

आशात्याग पर पद

(देशी-मान मायाना करनारा रे०)

दुखकारी सतत दुखकारी रे, चित्त ! आशा तजो दुखकारी, सर्वज्ञानतणी हरनारी । चित्त० ॥

आशावश परघरमा रहीने,
काम कर्यु बहुवारा ।
मान रहित त्या भोजन कीधु,
काक परे शरु धारा रे । चित्त आशा० ॥१॥

द्रव्यनी आशा दिलमाहि धारी,
नित्य सुणी शठवाणी ।
जी जी करीने आजीजी कीधी,
अन्ते हुई मानहाणी रे । चित्त आशा० ॥२॥

श्रीमन्तपासे नित्य रहीने,
सेवा करी कर जोडी ।
शेठ कहीं कंठ सुकायो,
एक कोडी रे । चित्त आशा० ॥३॥

स्वामी विसारी,

जास आगल देखो वानर ज्यु नाचे,
आशातणे परभावे रे। चित्त आशा० ॥४॥

बाहिरमाया छण्डी ने केई,
योगीतणा व्रत धारा।
शङ्कर! शङ्कर! शब्द को ध्याया,
आशा नहीं पण टारा रे। चित्त आशा० ॥५॥

कलमा कुराननी भणीने सारी,
साइ बन्या केइ भारी।
अल्ला अल्ला करी काल गुमायो,
आशा नहीं पण वारी र। चित्त आशा० ॥६॥

वेद पुराण ने आगम जाणी,
त्यागी बन्या जग नामी।
ते पण आश तजी न मनथी,
अन्ते रही तस खामी रे। चित्त आशा० ॥७॥

आशा तजे जे सर्वप्रकारे,
ईश सदा मन धारा।
पूज्य थइ ते जगमाह गाजे,
... अपारा रे। चित्त आशा० ॥

गुरु उपदेश पद

सद्गुरु ने मोए भाग पिलाई, मोरी अखियोंमें आगई
लाली, सद्गुरु० ॥

भाव की भाग मरम की मिरचां,
शीयल की गाफी बनाइ । सद्गुरु ने० ॥१॥
क्रिया की कुण्डी ज्ञान का घोटा,
घुटनवाला मेरा साइ । सद्गुरु ने० ॥२॥
ऐसी भांग पीवत सुघर नर,
अजर अमर होइ जाइ । सद्गुरु० ॥३॥
सद्गुरु कहत मेल मन ममता,
मोक्ष महा निधि पाई । सद्गुरु ने० ॥४॥

प्राणिप्रार्थना

गौ—रोगनिकन्दनकरनेहारा दूध अनोपम मैं देती,
बछड बछडी सतति मेरी जिसपर निर्भर है खेती ।
मरने पर भी चमडा मेरा तुम चरणोंका है त्राता,
फिर मुझ गोजातिका रक्षण क्या नहीं करते हे भ्राता ! ॥१॥
व्रजवासी वह कानकनैया था प्यारा हम पालनहार,
प्राणासे भी गौका त्राता था दिलीपक्षत्रिय सरदार ।

उनको पुरखा कहनेवाले वृथा तुम्हारा दोर दमाम,
क्षय जाता है वंश हमारा तुम करते एशोआराम ॥२॥

बकरी—नदीनालोंका पानी पीकर छूटी हम चरती जंगल,
दूध बाल बच्चे देकर हम सबका करती हैं मंगल।
फिर भी प्यारे पुत्र हमारे हाथ कसाइया के जाते,
तनिक लोभ के खातिर दयो रुक मौतका दुख पाते ॥३॥

बकरा—माता है जब जगदम्बा तब हम भी इसके पूत हुए,
मामा हैं सबका यह तब हम सबकभी भानज हुए।
ये कैसे सारंग हमरी लोगो! तुम कुछ गौर करो,
वामपन्थियोंकी अमगास तुम हमको क्यों ख्वार करो
॥४॥

मुर्गा—कुक्कुट नाम जगतमें मेरा कालज्ञानी कहलाता हूं,
अंधेरी बादलियों में भी ठीक समय बतलाता हूं।
कुदरतकी मैं घडी बना हूं मुझ जीवनकी कदर करो,
पैसकी बरबादी जिनसे उन घडियां को दूर करो ॥५॥

सबसाथ—सतजुगमें राजा ये रक्षक अब ये भक्षक हुए क्रूर,
इनसे नहीं जीवनकी आशा ये तो हैं हम्हीं पर शूर।
तुम अर्जी हम पशुपक्षीकी सुनकर हे लक्ष्मी के पूत!,
दया धर्मका ज्ञान जगतको दो ज्यों भागे जमदूत
॥६॥

रावण के प्रति सीता का वाक्य

ए रावण तू धमकी दिखाता किस
मुझे मरने का खौफ खतर ही नहीं।
मुझे मारेगा क्या अपनी मौत मना,
तुझ होने की अपन खबर ही नहीं ॥अां०॥

क्या तू माने की लंका का मान करे,
मेरे आगे यह मिट्टी का घर ही नहीं।
मेरे मन का सुमरु हिलेगा नहीं,
मेरे मन में किसी का भी डर ही नहीं ॥अर०॥१॥

तूने महल अठारा जो रानी करी,
हाय उन पे भी तुझ को सबर ही नहीं।
परतिरिया पे तूने जो ध्यान दिया,
क्या निगोड़े नरक का खबर ही नहीं। अर० ॥२॥

आप इंद्र नरेंद्र जो मिलके सभी,
क्या मजाल जो शीलको मेर हर।
तेरी हस्ती है क्या शिर राम पिया,
मेरी नजरों में कोई नजर हो नहीं। अरे० ॥३॥

क्यों ना जीत स्वयवर तू लाया मुझे,
मेरी चाह थी मनमें जो तेर वसी।
था तू कौन शहर मुझे दे तो बता,
क्या स्वयवर की पहोची खबर ही नहीं। अरे० ॥४॥

हुवा सो तो हुआ अब मान कहा,
मुझे रामप जलदीसे दे तू पठा।
कहे न्यामत नगर न तू देखेगा यह,
तेरे सर की कसम तेरा सिर ही नहीं॥
अरे रावण तू० ॥५॥



है। जल यहां का मीठा और तंदुरुस्ती को बढ़ानेवाला है। गांव के आसपास कूंए, वाव, रहटों की बहुतायत होने से यहां जल की कमी किसी समय नहीं मालूम होती।

यहां पर गांव में जैनों ओसवालों के दो सौ घर हैं। वे सब सुप्रिय और समानधर्मी हैं। सब मूर्तिपूजक सुद्रम-नातन चार थुई माननेवाले जैन हैं। उन का रहन सहन रीत रसम बिलकुल सादा है। मनुष्यों की वेश-भूषा भी ज्यादह-तर स्वदेशी सादामय है। फैशन को वे अपने पास तक नहीं फटकने देते। बिलकुल प्राचीन पद्धति को मान देने में ही वे अपनी इज्जत समझते हैं। धंधा रोजगार अधिकांश में यहां पर ही लेन देन (धीर धार) का है, परन्तु अभी अभी उनमें से कुछ भाग परदेश में मद्रास तक पहुंच गया है और अच्छा द्रव्योपार्जन कर रहा है। बाललग्न, वृद्धविवाह और कन्याविक्रय का प्रचार यहां बहुत ही कम नजर आता है जिस से इन लोगों की शारीरिक संपत्ति सदा उत्तम बनी रहती है। हर प्रकार से इन का जीवन सदाचारी और निर्दोष है।

यहां पर दो जिन मंदिर हैं। एक पुराना ऋषभदेव भगवान का और दूसरा पार्श्वनाथ का, जो नवीन है। दो जैन श्वेताम्बर धर्मशालायें हैं जिनमें एक हाल ही में बनी है। पुराना एक उपाश्रय भी है जो दोनों जैनमंदिरों के बीच में आया हुआ है। यहां पहले अच्छे अच्छे प्रतिष्ठित तपागच्छ के यति हो

गये है। प० यति श्री भक्तिसोमजी भी जो अभी थोड़े ही समय पर स्वर्गवासी हो गये हैं अच्छे तपस्वी यति थे। इस समय यहा भक्तिसोमजी के शिष्य सुमतिसोमजी यति रहते हैं।

२ पार्श्वनाथ का मदिर

यों तो गोल म भगवान् ऋषभदेव का मदिर भी बडा है परन्तु पार्श्वनाथ का मदिर जो 'नया मन्दिर' के नाम से प्रसिद्ध है बडा आलीशान है। द्वार पर झरोखा, भीतर मण्डप, दूसरे खण्ड पर चौमुखजी और चारों तरफ विशाल जगती की वजह से मन्दिर की शोभा अधिक बढ गयी है।

इस मदिर की नींव विक्रमसवत् १९५३ के साल में पड़ी थी और सवत् १९७५ में यह सपूर्ण भी हो गया था, परन्तु प्रतिष्ठा जल्दी कराने का विचार होते हुए भी अनुकूल सयोग न मिलने से बातें करते करते १५ वर्ष व्यतीत हो गये। सच कहा है—

"वृक्ष फलति कालेन, काले धान्य च जायते" अर्थात् 'समय आने पर वृक्ष फलता है और समय पर ही धान्य होता है'। आखिर गोल के मदिर की प्रतिष्ठा का समय भी आ पहुचा। भाडुआ महावीरजी यात्रा जाते हुए पन्यास श्री
[illegible] पहुचे और उनसे तैयार

मंदिर की प्रतिष्ठा करा देने की श्रावकों को प्रेरणा दी। प्रतिष्ठा कराना निश्चित हुआ और इस कार्य के लिये मुहूर्त और विज्ञप्ति करने को मुनि महाराज श्रीकल्याणविजयजी सौभाग्यविजयजी के पास लुणावे जाने के लिये पंच मुकर्रर हुए।

३ लुणावा के लिये पंचों का प्रयाण

सं० १९९० का महाराज साहब का वर्षा चौमासा लुणावा (मारवाड) में था, जो गोलसे करीब पच्चीस कोस दूर था। महाराज अभी वहीं विराजते थे। पंच गोलसे रवाने हो कर मिगसर सुदि १३ को लुणावा पहुंचे और सब वृत्तान्त निवेदन पूर्वक विनति की कि 'आप हमें मंदिरजी की प्रतिष्ठा का मुहूर्त निश्चित कर फरमावें और गोल पधारने की विनति स्वीकार कर उधर विहार करने की कृपा करें।' महाराज साहब ने कहा–'क्या यह निश्चय कर लिया है कि प्रतिष्ठा अवश्य ही करायेंगे ?' पंचों ने उत्तर दिया–'अब हमारा दृढ निश्चय है कि प्रतिष्ठा अवश्य करानी।'

इस के बाद महाराजश्रीने पंचाङ्ग देखकर सं० १९९१ के द्वितीय वैशाख शुदि ५ का शुभ मुहूर्त बताया।

इस के बाद पंचों ने अर्ज की कि 'गुरुदेव! हमलोगों की इच्छा अंजनशलाका कराने की है सो आज्ञा फरमाइये और

किन किन भगवान की किस प्रमाण की मूर्तिया की हमारे जरूरत है सो भी बतावें ता कि उन के बनाने का ऑर्डर दे दिया जाय !'

इस पर महाराजश्रीने कहा-'आप लोगों की भावना अच्छी है परन्तु मेरी रायमें तो प्राचीन मूर्तियों को कहीं से प्राप्त कर प्रतिष्ठा कराना ही अच्छा है। क्या कि नवीन मूर्तियों की अपेक्षा प्राचीन मूर्तिया कई कारणा से अच्छी हैं।'

उत्तर में पचों ने कहा-'हम को कुल ११ मूर्तियों की जरूरत है जो मनपसद मिलनी कठिन है, इसलिये हमारी इच्छा तो नवीन बिंब मगवा कर अजनशलाका कराने की ही है फिर तो जैसी आप की आज्ञा।'

महाराज ने कहा-'ठीक है, एक वार आप मूर्तिया की तलाश में कहीं बाहर तो जाय। इस पर भी पता न लगेगा तो फिर देखा जायगा।'

पचों ने महाराज साहब की सलाह मजूर की और गोल की तरफ जल्दी विहार करने की प्रार्थना की।

महाराज ने फर्माया-'आगामी माघ शुदि ५ से यहां पर उपधान होने वाले हैं और यह काम भी हमारे आधार पर उठाया गया है इसवास्ते उपधान की समाप्ति तक उधर विहार नहीं हो सकेगा। इस कार्य को समाप्त होते करीब आधा

चैत्र यहां पूरा हो जायगा, फिर यहां से गोल की तरफ विहार करेंगे।'

मिगसिर सुदि १५ पूर्णिमा के प्रभात समय में पंच वापस गोल के लिये रवाने हुए और पौष वदि ६, के दिन मुनिमहाराज भी कुछ समय के लिये लुणावा से वाली की तरफ विहार कर गये। वाली में करीब १७ वर्ष से जैनसंघ में बड़ा भारी क्लेश चल रहा था सो महाराज साहब के पुण्य प्रभाव से तीन ही दिन में उस का अंत आ गया और संप हो गया। वहां से आप खुडाला, माडेराव, दूनाना, वलाना होते हुए तखतगढ पधारे।

४ अंजनशलाका का निश्चय

जो कि मुनिमहाराजने पंचों को प्राचीन मूर्तियां की तलाश करने के लिये कहा था परंतु गोल के श्रीसंघने तो दृढनिश्चय कर लिया था कि गोल में अंजनशलाका ही करायेंगे। महाराज तखतगढ पधारे उस वक्त फिर गोल के पंच सूत्रधार सोमपुरा थानजी कनीरजी हरजीवाले को साथ में लेकर तखतगढ गये और मूर्तियों के नाम और परिमाण देने की प्रार्थना की। महाराज साहबने इस वक्त भी प्राचीन मूर्तियाकी खोज में जाने को कहा परन्तु आये हुए सज्जनोंने कहा कि हमारे गांववालों का निश्चय अंजनशलाका कराने का ही है

इसवास्ते आप आज्ञा फरमावें। तब महाराजश्रीने धारणागति-यन्त्रानुसार गोल के लिये मूलनायक पार्श्वनाथ भगवान् तथा अन्य मूर्तियो के नामों का लिस्ट करके दिया। वहासे दो जने गजधर सोमपुरा के साथ जयपुर मूर्तियों का ओर्डर देने गये और दो जने गाव चादराईवाले मिस्त्री दानाजी लोहार को साथ ले सुमेरपुर दंड कलशों का सामान लेने गये।

महाराज साहब तखतगढ में कुछ समय तक ठहर कर फिर वहा से विहार कर पौष शुदि ४ लुणावे पधारे।

५ महाराज साहबका लुणावा से गोल के लिये विहार

चैत्रवदि में उपधान की माला के उत्सव पर फिर गोल के पञ्च लुणावे गये और वहां से जल्दी विहार कर पञ्चा के साथ पधारने की प्रार्थना की, जिसके उत्तर में महाराजश्री ने फरमाया कि 'हमारे साथ किसी के रहने की जरूरत नहीं है। हम चैत्रवदि अमावस्या तक यहा से विहार नहीं करेंगे। चैत्रशुदि १ के दिन यहा से विहार होगा और चैत्रशुदि १० को गोल पहुंचेंगे और उसी दिन नोकारसियों के चढावे बोले जायगे।'

शांतिपूर्वक उपधान की समाप्ति चैत्रवदि में हो गयी। चैत्रशुदि १ के दिन दोनों मुनिमहाराजों ने लुणावा से विहार किया और बीसलपुर, सुमेरपुर, वाकली, पावटा, अगवरी, आहोर, लेटा, जालोर और थिरोपुरा इन गावों में एक एक

दिन की स्थिरता थी। चैत्रसुदि ९ मी से गोल में महाराज साहब की अगवानी की तैयारियां हो रही थीं। चैत्रसुदि १० के प्रात समय महाराज साहब ने पिजोपुरा से गोल के लिये विहार किया।

जालोर से पिंजोपुरा तक जालोर का श्रावकसमुदाय और पिजोपुरा से केसवणा तक पिंजोपुरा तथा केसवणा के श्रावक तो साथ में थे ही परन्तु केसवणा के नजदीक पहुचते पहुचते गोल के भी बहुत से श्रावक सामने आ मिले थे। केसवणा के मन्दिरजी में दर्शन कर श्रावकों को माङ्गलिक सुना महाराज ने आगे विहार किया। अब तक सकडों मनुष्यों का मेला जम चुका था और केसवणा तथा गोल के बीच भाविक मनुष्यों का खासा तांता सा लग गया था।

लगभग आठ बजे मुनिमहाराज गोल पहुंचे। जैनसंघ तो क्या सारा गांव ही महाराजसाहबों के दर्शनार्थ बाहर निकल आया था। बड़े ठाठ और उत्सवपूर्वक नगरप्रवेश हुआ। नवीनधर्मशाला में मुकाम किया और माङ्गलिक सुन कर सभा विसर्जन हुई।

६ मुहूर्त विषयक शंका–निराकरण

जब गोल के पंच लुणावा से मुहूर्त पूछ कर अपने स्थान गोल आये और आगामी द्वितीयवैशाखशुक्ल ५ मी का मुहूर्त

जाहिर किया तो सारा गात्र आनंदित हुआ, परन्तु यह धार्मिक कार्य भी कतिपय ईर्षालुओं को पसंद नहीं आया। गोल के चोमासी प० भक्तिसोमजी प्रतिष्ठा कराने का निश्चय हुआ उस समय पालिताणे में थे, पत्रों ने चिट्ठी देकर उन को भी गोल बुलाया। परन्तु विघ्नसंतोषी ईर्षालु लोगोंने उन को भी बहकाया कि द्वितीय वैशाखसुदि ५ का मुहूर्त अच्छा नहीं है। यतिजी सरलस्वभावी थे, उन में स्वयं सच झूठ की परीक्षा करने का सामर्थ्य नहीं था अतएव लोगों की बातें सुन कर शंकाकुल हो गये, मुहूर्तविषयक अपना अभिप्राय उन्होंने गोल के श्रावकों को भी दर्शाया, परन्तु श्रावक महाराज पर बड़े श्रद्धालु और विश्वासी थे, उन्होंने उत्तर दिया 'मुनिमहाराज कल्याणविजयजीने अगर काली अमावस्या का दिन भी बताया होता तो हमको मंजूर था।' श्रावकों की यह दृढता देख बातें बनानेवाले चुप हो जाते थे।

महाराज गोल पहुंचे उसी दिन दो पहर को प० भक्तिसोमजी को अपने पास बुलवाया और पूछा कि क्या मुहूर्त के विषय में आप को कुछ शंका है?।

भक्तिसोमजी—हां मेरे विचार में वैशाख शुदि ३ अथवा ६ के दिन ठीक लग्न है।

महाराज—शुदि ५ में क्या कमी है और ३ तथा ६ में विशेषता सो बताइये।

भक्तिसोमजी-आप की आज्ञा हो तो प० गौरीशङ्करजी को बुलवाऊं ?

महाराज—खुशी से बुलवाइये और किसी अन्य विद्वान् पर श्रद्धा हो तो आप उन को भी बुला सकते हैं। इस पर पडित गौरीशङ्करजी आसानी बुलाये गए जो १० मिनट में ही आ गए। जोशीजी कुछ ज्योतिष की पुस्तकें भी साथ ले आये थे।

महाराजश्रीने पूछा-कहिये पंडितजी ! प्रतिष्ठासम्बन्धी मुहूर्त के विषय में आप का क्या मत है ?।

पडितजी—पचमी से षष्ठी का दिन मुझे ठीक जचता है, क्योंकि उस दिन 'रवियोग' है और वास्तुचक्र (कलश चक्र) भी मिलता है।

महाराज—प्रतिष्ठा के मुहूर्तमें रवियोग अवश्य होना ही चाहिये ऐसा कोई नियम नहीं है। कलशचक्र के सबन्धमें भी एकान्त नहीं है कि उसके सिवा प्रतिष्ठा हो ही न सके। कलशचक्र एक नक्षत्रयोग है, और केवल नक्षत्रबल पर ही प्रवेशादिकार्य करते समय इस का होना जरूरी माना गया है। जहां पञ्चाङ्गशुद्धि की गवेषणा की जाती है, वहां कलशचक्र पर आधार नहीं रहता। इसी कारण प्राचीन ज्योतिषशास्त्रोंमें कलशचक्र की चर्चा ही नहीं है।

पंडितजी—'अच्छा, इस में क्या लिखा है पढ़िये तो' यह कहते हुए उन्होंने पुस्तकमें से नोट किये हुए एक दो श्लोक महाराज के हाथ में दिये।

महाराज—इस में पंचम रवियोगात्मक उपग्रह का फल लिखा है और यह ठीक भी है, परंतु यह दोष सर्वत्र वर्जना ही चाहिये ऐसा एकान्त नियम नहीं है।

पंडितजी—आप इस का परिहार बतायगे तो मेरी शंका दूर हो जायगी। इस पर महाराजने आरंभसिद्धिवार्तिक और मुहूर्तचिन्तामणि की पीयूषधारा टीका में से श्लोक बता कर कहा देखो इस में स्पष्ट लिखा है कि 'उपग्रह' का दूषण 'कुरु' और 'बाल्हीक' देश में ही माना है (उपग्रह स्यात्कुरुबाल्हिकेषु) अन्यत्र उपग्रह शुभ है (अन्यत्र शुभमन्)

ऊपर का खुलासा सुन कर पंडितजी बोले-अब मेरे मन में कोई शंका नहीं रही। अब मैं निस्संकोचभाव से स्वीकार करता हूँ कि पंचमी का दिन श्रेष्ठ है। उस में दोष की बुद्धि जो शंका थी वह निकल गयी।

इस प्रकार पं भक्तिसोमजी और पंडित गौरीशंकरजी जो कि मुहूर्त विषयमें शंकाशील थे, दो ही घटा में निश्शंक हो गये, इस घटना से श्रावकसंघ भी आश्चर्यचकित हुआ कि दो ही घडी में महाराजने क्या जादू कर दिया कि मुहूर्त के सब-

न्नम विरुद्ध बातें करने वाले भी सहमत और अनुकूल हो गये।

७ अंजनशलाका कौन करा सकता है?

मुहूर्तकी ही तरह ईर्षालु लोगोंने यह भी शंका खडी कर रक्खी थी कि 'अंजनशलाका आचार्य ही कर सकते हैं, तो मुनि कल्याणविजयजी यह कार्य कैसे करेंगे।' गोल के आगेवानों से इस बात का कोई जिकर करता तो वे तो यही उत्तर देते कि 'यह बात महाराज को पूछो, हम को तो इस में कुछ शंका ही नहीं है, क्योंकि उनको करने का अधिकार होगा तभी वे अंजनशलाका का कार्य करना स्वीकार करते हैं'। ईर्षालु लोग इस विषय में तरह तरह की गप्पें हांकते थे, परन्तु पूज्य मुनिमहाराज के सामने आकर पूछने की किसी की हिम्मत नहीं होती थी। और तो क्या, सुनने मुजब तपगच्छ के प्रसिद्ध आचार्य श्रीविजयनेमिसूरिजी तक यह कहते थे कि आचार्य के सिवा दूसरा अंजनशलाका नहीं कर सकता, परन्तु मुनिराज की विद्वत्ता और बहुश्रुतता सभी को मालूम थी, इस से उन को पूछने का किसी को साहस नहीं होता था।

गुरां साहब प. भक्तिसोमजी के दिल में भी यह शंका हो रही थी कि महाराज स्वयं आचार्य न होते हुए अंजनशलाका करने की जवाबदारी अपने ऊपर कैसे लेते हैं, परंतु

उनका भी महाराज के सामने पूछने का साहस नहीं होता था, परन्तु इस लोकचर्चा में महाराज भी अनजान नहीं थे, इस सबन्ध में आप कहा करते थे कि 'क्या ही अच्छा हो कि लोग हम से रूबरू मिल कर इस विषय की शंका दूर कर दें।' परतु जब इस विषय में आप को कोई पूछने वाला नहीं मिला तब आपने स्वय प भक्तिसोमजी के पास यह चर्चा छेडी कि क्या अजनशलाका करने के अधिकारी के विषयमें भी आप को कुछ शका है ? । इस पर यतिजीने कहा—हा लोगों की बातें सुनने से मैं इस विषयमें संशयग्रस्त हू और आप से पूछना चाहता था परतु पूछने का साहस नहीं हुआ, आज आपही ने प्रसग छेडा है तब मैं भी आप से इस विषय का खुलासा चाहता हू कि जो यह बात कही जाती है कि आचार्य के बिना अजनशलाका हो नहीं सकती सो इस में कुछ शास्त्र का आधार भी है या केवल दन्तकथा मात्र है ? । इस प्रश्न के उत्तरमें आपने फरमाया कि इस कथन में कुछ भी सत्यता नहीं है कि 'आचार्य के सिवा दूसरा कोई अजनशलाका कर नहीं सकता।' प्रमाण देते हुए आपने कहा—आचारदिनकर ग्रन्थान्तर्गत अजनशलाका-प्रतिष्ठाविधि में १ आचार्य, २ उपाध्याय, ३ साधु, ४ जैन ब्राह्मण और ५ क्षुल्लक ये पाच अजनशलाका-प्रतिष्ठा करने के अधिकारी बताये है।'

१ आचार्य पाठकैश्चैव, साधुभिर्ज्ञानसत्क्रियै ।
जैनविप्रै क्षुल्लकैश्च, प्रतिष्ठा क्रियतेऽर्हत ॥' (आचारदिनकर)

आगे आपने फरमाया कि 'आचार्य बिना प्रतिष्ठा नहीं हो सकती' यह मान्यता खरतरगच्छवालों की होना संभव है, क्योंकि तपागच्छीय उपाध्याय धर्मसागरजीने 'औष्ट्रिकमतोत्सूत्रदीपिका' नामक अपने ग्रन्थमें खरतरगच्छ की मान्यताओं का खण्डन करते हुए लिखा है कि 'आचार्य बिना प्रतिष्ठा का निषेध करना न्यूनप्ररूपणात्मक मिथ्यात्व है। इस के समर्थन में जो कहते हैं ' यह कथन प्रतिष्ठाकल्पादिग्रन्थों से विरुद्ध है। क्योंकि वहां उपाध्याय आदिको भी प्रतिष्ठा-अञ्जनशलाका करने की आज्ञा दी गई है, और शत्रुञ्जय माहात्म्यमें सामान्य साधु भी प्रतिष्ठा-अञ्जनशलाका कर सकता है ऐसा प्रतिपादन है।'[1]

८ अञ्जनशलाका ही प्रतिष्ठा है

आज काल मारवाड में एक रूढि सी हो गई है कि पुरानी मूर्तियां मन्दिरों में स्थापन करने के विधिविधान को तो प्रतिष्ठा कहते हैं और नवीन मूर्तियों पर संस्कार कर पूजनीय बनाने के विधान को 'अञ्जनशलाका।' परन्तु असल

१ 'आचार्यं विना प्रतिष्ठानिषेधः प्रतिष्ठाकल्पादिना विरुद्धः। तत्रोपाध्यायादीनामप्यनुज्ञानात्। शत्रुञ्जयमाहात्म्ये सामान्यसाधुरपि प्रतिष्ठाकर्तेति।'

(औष्ट्रिकमतोत्सूत्रदीपिका पत्र १)

बात तो यह है कि जिससे नयी मूर्तियाँ पूजनीय बनती हैं उसी विधान का नाम 'प्रतिष्ठा' है, और प्राचीन मूर्तियों को मन्दिर में प्रवेश और स्थापन करने के विधान का नाम 'बिम्बप्रवेशविधि', यही कारण है कि नवीनबिंबों को अञ्जन शलाकापूर्वक पूजनीय करने के विधान करने वाले ग्रन्थों का नाम 'प्रतिष्ठाकल्प' पड़ा और प्राचीनबिंबों को स्थापन करने सम्बन्धी विधि के ग्रन्थ 'बिंबप्रवेशविधि' इस नाम से प्रसिद्ध हुए हैं।

९ कार्यारम्भ—नोकारसियों के चढ़ावे

लोगों के मन की शङ्काओं का समाधान करने के बाद महाराजसाहब ने संघ को धर्मशाला में इकट्ठा होने की सूचना की और संघ इकट्ठा हुआ, तब आपने फर्माया कि 'आज का दिन श्रेष्ठ है, इस वास्ते काम की शुरुआत आज ही हो जानी चाहिए। गोधूलिक का समय अच्छा है, उस समय जाजम बिछा कर चढ़ावा बोलना शुरू करना चाहिये।' महाराजसाहब की आज्ञा संघ ने मस्तक पर चढ़ाई और कहे हुए समय में जाजम का मुहूर्त किया और अञ्जनशलाका के दस दिन और शान्तिस्नात्र का एक दिन मिलकर कुल ११ दिन की ग्यारह नोकारसियों के चढ़ावे बोले गये जो नीचे लिखे जाते हैं।

३००१) अक्षर रुपया तीन हजार एक का चढ़ावा सं० १९९१ द्वितीय वैशाख वदि ११ की नोकारसी का

मुहता छोगालालजी मुलतानमलजी कपूरचन्दजी के बेटों पोता की तरफ से हुआ।

२२०१) अक्षरे रुपया बाइस सौ एक का चढावा द्वितीय वैशाख वदि १२ की नोकारसी का मा० साहब चन्दजी कुनणमलजी की तरफ से हुआ।

२२०१) अक्षरे रुपया बाइस सौ एक का चढावा द्वितीय वैशाख वदि १३ की नोकारसी का मा० चुनीलाल जी कस्तूरजी की तरफ से हुआ।

२५०१) अक्षर रुपया पचीस सौ एक का चढावा द्वि० वै० वदि १४ की नोकारसी का मुहता चुनीलालजी ओकचन्दजी फुसाजी क बेटों पोतों की तरफ से हुआ।

२५०१) अक्षर रुपया पचीस सौ एक का चढावा द्वि० वै० वदि ०)) की नोकारसी का मुहता जेसाजी धुडानी की तरफ से हुआ।

२४०१) अक्षरे रुपया चोइस सौ एक का चढावा द्वि० वै० शुदि १ की नोकारसी का सा० गणेशमलजी हरकचन्दजी भीमराज सुरतानी क बेटों पोतों की तरफ से हुआ।

२३०१) अक्षरे रुपया तेईस सौ एक का चढ़ावा द्वि० वै० शुदि १ की नोकारसी का मा० राऊजी माणकजी की तरफ से हुआ।

३५०१) अक्षर रुपया पेंतीस सौ एक का चढ़ावा द्वि० वै० शुदि २ की नोकारसी का मा० भेराजी राजमल गणेशमल की तरफ से हुआ।

४००१) अक्षरे रुपया चार हजार एक का चढ़ावा द्वि० वै० शुदि ४ की नोकारसी का मुहता फोजमलजी हजारी मलजी की तरफ से हुआ।

१३००१) अक्षरे रुपया तेरह हजार एक का चढ़ावा द्वि० वै० शुदि ५ अञ्जनशलाका की नोकारसी का सा० दीपचन्दजी सागरमल सदाजी की तरफ से हुआ।

५००१) अक्षर रुपया पाच हजार एक का चढ़ावा द्वि० व० शुदि ६ की नोकारसी का मुहता भलेचन्दजी पुखराजजी की तरफ से हुआ।

ऊपर मुजब ग्यारह नोकारसिया के चढ़ावा की कुल रकम ४२६११) अक्षरे बयालीस हजार छः सौ और ग्यारह रुपया हो गई जिससे सकल संघ को अतीव हर्ष प्राप्त हुआ, इतना

चढाना एक ही आजम पर होना यह उक्त महाराजश्रीका अतिशय और उस दिन के पुण्यार्कयोग का प्रबल प्रभाव समझा गया।

१० कुंकुम पत्रिका

नौकारसियें निश्चित हो जाने के बाद महाराजसाहब के द्वारा क्रियाविधान के दिन मुकर्रर होकर आपही के तत्त्वावधान में श्री सकल जैन संघ को निमन्त्रित करने के लिये कुंकुम पत्रिका का मसौदा तैयार हो गया जो अक्षरशः नीचे मुजब है।

॥ श्रीजिनाय नमः ॥

॥ अनन्तलब्धिनिधानाय श्रीगौतमस्वामिने नमः ॥



॥ परमसुविहितशिरोमणितपागच्छाचार्य श्री १००८ श्री विजयसिद्धिसूरी-श्वरपरमगुरुभ्यो नमः ॥







श्रीपार्श्वनाथजिन अंजनशलाका-प्रतिष्ठामहोत्सव श्री गोलनगरे





श्रीगोलनाम्नि नगरे, जयति जिनो नाभिराजकुलतिलकः ।
यो मङ्गलमयमूर्ति-र्वृषभ इति प्रोच्यते विबुधैः ॥१॥

चैत्ये नवे युगलभूमिवर द्वितीय,
ऽपूर्वोत्सवेन विधिना च प्रतिष्ठ्यमान ।
नानाभिधानविदितोर्जितसत्प्रभाव ,
पार्श्वो ददातु भविनां हृदयप्सितानि ॥२॥
आनन्दाद्वयपूर्णमङ्गलघट मार्तण्डमुख्यैर्ग्रहै ,
समैव्य दिगधीशदेवनिकरैराराधिताङ्घ्रिद्वयम् ।
सघोष्ठागसमुद्रशीतकिरण मत्यप्रतिष्ठास्पद,
लोकालोकविद सुशान्तिनिलय वन्दे जिनाधीश्वरम् ॥३॥
गच्छे श्रीविजयादिसिद्धिसुगुरो प्राप्त प्रतिष्ठा परा,
सद्वारित्रिसमाजलब्धसुयशा वैदुष्यमुख्यैर्गुणै ।
कल्याणो विजयान्तशब्दविदित सौभाग्यनामत्यमू,
भूयास्ता मुनिसत्तमौ सकुशलौ भव्यात्मचेतोमुद ॥४॥

गोलनगर रलियामणो, नदी सुखडी तीर ।
विविधवृक्ष सोह जिहा, अमृतमीठा नीर ॥१॥
पार्श्वनाथ आदि बहु, जिनवरबिंब सनूर ।
अजनशलाका कारण, प्रगुणित गुण भरपूर ॥२॥
तत्कारण उत्सव तणी, रचना माधव मास ।
अवधारी अम वीनति, सघ पधारो खास ॥३॥

स्वस्ति श्री पार्श्वजिन प्रणम्य तत्र श्री नगर महा-शुभस्थान विराजमान पचपरमेष्ठिमहामन्त्रस्मारक देवगुरुभक्तिकारक सम्यक्त्वमूलद्वादशव्रतधारी जिनशासनशोभाकारी चतुरसुजान परमबुद्धिनिधान इत्यादि अनेकशुभोपमालकृत परम पूज्य श्रीसकलसघसमस्त योग्य,

एतान् श्रीगोलनगरस लि० सघसमस्त का श्री जयजिनेन्द्र वाचना जी।

यहा पर श्री देवगुरु के प्रतापसे आनन्द मङ्गल वर्त रहा है, आप साहिबों का सदा आनन्द मङ्गल चाहते हैं।

विशेष नम्र विनति यह है कि हमारे यहा पर श्रीदेवगुरु और आप श्री सघ के प्रताप से द्विभूमिक शिखरबन्ध जिन-मदिर बन कर तैयार हुआ है जिस में विराजमान करने के लिये श्रीपार्श्वनाथ आदि अनेक जिनबिंबों की अजनशलाका प्रतिष्ठा और भगवत्स्थापना का शुभ मुहूर्त मुनिमहाराज श्री १००८

श्रीकल्याणविजयजी के सदुपदेश से विक्रमसंवत् १९९१ (मारवाड की गणना मुजब १९९०) के द्वितीयवैशाख शुदि ५ वार शुक्र ता० १८ मइ ईसवी सन् १९३४ के दिन करना निश्चित किया है। यह अंजनशलाका-प्रतिष्ठा परमपूज्य प्रातः स्मरणीय सुविहितसूरिशिरोमणि तपागच्छाचार्य श्री१००८ श्रीविजयसिद्धिसूरीश्वरजी महाराज की आज्ञानुसार उन्हीं के सूरिमंत्रोपमंत्रितवासक्षेप से पुरातत्त्ववेत्ता मुनिश्रीकल्याणविजयजी तथा मुनि सौभाग्यविजयजी के शुभहस्त से होगी और इसका क्रियाविधान महाराज साहिब की आज्ञानुसार गुरा साहिब श्रीभक्तिसोमजी करावेंगे।

इस महोत्सवसंबन्धी शुभकार्य करने के लिये नीचे मुजब दिन मुकरर किये गये हैं—

(१) वैशाख वदि ११ गुरु-जलयात्रा का वरघोडा, वेदिकापूजन, मंडपमें प्रतिमास्थापन, तथा कुंभस्थापन होगा और भंदा मुहता छोगालाल मुलतानमल धींगडमल बेटा पोता कपुरचंदजी की तरफ से नवपदजी की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(२) वदि १२ गुरु-नद्यावर्त तथा अष्टमंगल पूजन-स्थापन होगा और सा० माहेचंद, कुनणमल, रिखबदास, हमीरमल मुनीलाल गेवरचंद, रूपराज जिनेराज, बेटा पोता ताराचंदजी की तरफ से नंदीश्वरद्वीप की पूजा तथा नोकारसी होगी

(३) वदि १३ शुक्र-दश दिक्पाल तथा नवग्रह का पूजन स्थापन होगा और लुणिया मुहता जुहारमल, चूनीलाल, धर्मचद, नीरमचद, नेणमल, गेवरचद, रिखबचद, बेटा पोता पीथाजी की तरफ से अष्टप्रकारी पूजा तथा नोकारसी होगी।

(४) वदि १४ शनि-सिद्धचक्र का पूजन होगा और कागरसा सा० चूनीलाल, अखेराज, गणेशमल, बेटा पोता फूमाजी की तरफ से नवपदजी की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(५) वदि ३० रवि-बीसस्थानक का पूजन होगा और बदा मुहता जसराज, जीतमल, बेटा पोता धूडाजी की तरफ से बीसस्थानक की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(६) वैशाख सुदि १ सोम-च्यवनकल्याणकमहोत्सव होगा और भणशाली मुहता गणेशमल, हरखचद, भीमराज, जोडतमल, गेवरचद, मीठालाल, रूपराज, भूरमल, बेटा पोता सुरताजी की तरफ से बारह व्रत की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(७) सुदि २ मगल-जन्मकल्याणकमहोत्सव होगा और बाफणा सा० रामाजी, कालुराम माणकजी की तरफ से ज्ञानावरणीय कर्म की पूजा तथा नोकारसी होगी।

(८) सुदि ३ बुध-प्रतिमा, दड, कलश आदि के अष्टादश अभिषेक होंगे और भणशाली मुहता भेराजी, राजमल,

हरखचंद, मागीलाल बेटा पोता रिमानजी की तरफ से निनाणु प्रकार की पूजा तथा नोकारसी होगी ।

(९) शुदि ४ गुरु—दीक्षा कल्याणकमहोत्सव तथा अधिवासना विधान होगा और बदा मुहता फोजमल, जुहारमल, हजारीमल, कुनणमल, दवराज, शुकराज, नथमल, रिखबचंद, हस्तीमल, बटा पोता केरींगजी की तरफ से अंतरायकर्म की पूजा तथा नोकारसी होगी ।

(१०) शुदि ५ शुक्र—केवलज्ञानकल्याणकविधिपूर्वक शुभ-लग्न—नवांशक में जिनबिंबों की अंजनशलाका प्रतिष्ठा होगी सिद्धिकल्याणकविधि होगी और शुभलग्न—नवांशक में श्री पार्श्वनाथ आदि ७ जिन भगवान नवीनप्रासाद में तथा पद्मप्रभ आदि २ जिन भगवान प्राचीनचैत्य में तख्तनशीन किये जायगे और अधिष्ठायक यक्ष यक्षिणी यथास्थान प्रतिष्ठित किये जायगे, दोनों जिनमंदिरो पर सुवर्णकलश ध्वजा दंड आरोपण होंगे और भणशाली सा० दीपचंद, सागरमल, हस्तीमल, चम्तीचंद बेटा पोता सदार्जी की तरफ से सतरह भेदी पूजा तथा बडी नोकारसी होगी ।

(११) शुदि ६ शनि—प्रात समय द्वारोद्घाटन विधि होगी और भणशाली मुहता जोधाजी, भलेचंद, पुखराज बेटा पोता पुलपाजी की तरफ से बृहत्स्नात्र पूजा और नोकारसी होगी ।

होनेवाले महोत्सव की रूपरेखा

मनोहर और विशाल प्रतिष्ठामंडप में महातीर्थ श्रीशत्रुंजय और गिरनारगिरि की सुंदर रचना के उपरांत समवसरण की रचना होगी, पूजा पढाने के लिये प्रसिद्ध गवैये और भक्तिभावना के लिये जैनगायनमंडली आयगी, उत्सव के दिनों में हमेशा नयी नयी अंगिया और रोशनी होगी, सोना चांदी के रथ, पालखी, हाथी, घोडे और अंग्रेजी बेंड आदि सामग्री के साथ नित्य वरघोडे निकलेंगे, टकोरखाना और किटमन लाइट आदि साधन भी महोत्सव की शोभा में वृद्धि करेंगे।

इस महामांगलिक धार्मिक कार्यप्रसंग पर आप श्रीसंघ अपने अपने मित्रमंडल और कुटुंब परिवार सहित पधारने की अवश्य कृपा करेंगे, क्योंकि श्रीसंघ के पधारने से श्री जिनशासन की विशेष उन्नति होगी, यही अर्ज।

वीर संवत् २४६०, विक्रम संवत् १९९० का प्रथम वैशाख वदि ११, ता १०-४ ईसवीसन् १९३४

श्रीसकलसंघ-गोल की तरफ से मा॰ दीपचंद मदाजी का जयजिनेंद्र वाचना जी।

नोट—रेल्मार्ग से गोल आने वालों को बिसनगढ और जाकरारोड उतरना चाहिये, दोनों स्थानों से गोल ८ कोस के फासले पर है। मोटर, बैलगाडी, ऊंट विगेरह वाहन मिलते हैं। एरनपुरा रोड से आने वाले मोटर से आ सकते हैं।

११ पंदरह सौ कुंकुमपत्रियाँ लिखीं

अहमदाबाद से कुंकुमपत्रिया समितिने रेल्वे पार्सल कर पहले ही भेज दी थी, इस कारण गोल के सबने धर्मशालामें एकत्र हो प्रथम वैशाख वदि ११ के दिन कुंकुमपत्रिया लिखना शुरू किया और गावों नगरों और व्यक्तियों के नाम से करीब १५०० कुंकुमपत्रिया लिखीं और आदमियों की मारफत तथा डाकद्वारा स्थानस्थान पहुंचायी गयीं।

१२ कामों का बटवारा

या तो गांव के ८ पंच इस प्रतिष्ठासंबन्धी काम के लिये मुकरर थे ही तथापि सुगमता के लीये भिन्न भिन्न समितियों में इस काम का बटवारा कर दिया गया था।

(१) सामान-समिति—

कुंकुमपत्री का मसोदा पूर्ण होने पर सब इकट्ठा कर वह सुनाया गया और सब को पसंद आने से उस की पक्की प्रेस कॉपी की गयी।

अंजनशलाकामहोत्सव के विधिविधान में, शान्तिस्नात्र में और प्रतिष्ठामंडप के लिये जिन जिन चीज सामानों की ... आजमसाहबने उन के लिस्ट

चलेवाली सामानसमिति के सुपुर्द किये। कुकुमपत्री छपवाना और मंदिरजी के कलशों पर सोना चढ़वाना आदि काम भी इसी समिति के हवाले किये गये।

चैत्र सुदि १५ मी के दिन यह ४ मेम्बरों की समिति अहमदाबाद के लिये रवाना हुई और १० दिन के अंदर अपना कार्य समाप्त कर वापस आ गयी।

(२) प्रतिष्ठामंडप-समिति—

प्रतिष्ठामंडप के काम पर देख माल रखने और उस के उपयुक्त सामान जुड़ाने के लिये भी एक ४ मेम्बरों की समिति कायम की गयी थी।

वल्ली, वांस, पाटिये आदि लकड़ी का सामान, टीन के पतर, पट्टियाँ, कील आदि लोह का सामान और रंगीन तथा सादा कपड़ा, रंग-रोगान मंगवा कर हाजिर करना और मंडप बनाने वाले कारीगर मजदूरों पर निगरानी रखना आदि तमाम काम इस समिति के हवाले किये हुए थे।

(३) खाद्यसामग्री-समिति—

१ नोकारसियों के लिये जरूरी स्वदेशी चीनी-खाड, गुड़, ताजा तैयार किया हुआ स्वदेशी मैदा, चावल, दाल, चणा,

चरला, अमचूर, कोकम आदि खाद्यसामग्री एकत्र करने के लिये दो मेम्बरों की एक समिति नियत की थी जिसने बरेली से देशी चीनी, भटिण्डा से ताजा मेदा, ब्यावर से गुड और अन्यान्यस्थानों से अन्य चीजें एकत्र कीं।

(४) भोजनमण्डप-समिति—

भोजनमण्डप (परठा) के लिये गांव से सटा हुआ एक रहट का जाव (अरहट की भूमि) पसंद किया गया था, क्योंकि वह नजदीक भी था और जल तथा छाया का भी वहां सुख था।

इस काम के लिये ४ सभ्यों की एक समिति मुकरर थी जिसने सब से पहले रहट पर जल की कुण्डी (टांकी) बंधा कर वहां से रसोईघर तक एक बन्द नीक पक्की बंधा दी। नीक के मुहाने पर एक बडा टांका (होद) बंधा लिया ताकि नीक द्वारा लाया गया जल सीधा टांका में ही गिरे। टांका के पास कोठियां रख कर छान कर कोठिओं में भरने और कोठिओं से बाल्टियों द्वारा मिट्टी के मटके भर कर परठे में जगह जगह रखने और उनमें से बाल्टियों में ले गिलासों से सर्वत्र पहुंचाने की व्यवस्था ध्यान में रख कर उपर्युक्त जल की व्यवस्था की गयी।

जानेवाली सामानसमिति के सुपुर्द किये । कुंकुमपत्री छप वाना और मंदिरजी के कलशों पर सोना चढ़वाना आदि काम भी इसी समिति के हवाले किये गये ।

चैत्र शुदि १५ मा के दिन यह ४ सभ्यों की समिति अहमदाबाद के लिये रवाना हुई और १० दिन के अंदर अपना कार्य समाप्त कर वापस आ गयी ।

(२) प्रतिष्ठामंडप-समिति—

प्रतिष्ठामंडप के काम पर देख भाल रखने और उस के उपयुक्त सामान जुड़ाने के लिये भी एक ४ सभ्यों की समिति कायम की गयी थी ।

कणी, वास, पाटिये आदि लकड़ी का सामान, टीन के पतरे, पट्टियां, कील आदि लोह का सामान और रंगीन तथा सादा कपड़ा, रंग-रोगान मंगवा कर हाजिर करना और मंडप बनाने वाले कारीगर मजदूरों पर निगरानी रखना आदि तमाम काम इस समिति के हवाले किये हुए थे ।

(३) खाद्यसामग्री-समिति—

नोकारसियों के लिये जरूरी स्वदेशी चीनी-खांड, गुड़, ताजा तैयार किया हुआ स्वदेशी मैदा, चावल, दाल, चणा,

चवला, अमचूर, कोकम आदि खाद्यसामग्री एकत्र करने के लिये दो मेम्बरों की एक समिति नियत की थी जिसने बरेली से देशी चीनी, भटिण्डा से ताजा मेदा, ब्यावर से गुड और अन्यान्यस्थानों से अन्य चीजें एकत्र की।

(४) भोजनमण्डप-समिति—

भोजनमण्डप (परठा) के लिये गाव से सटा हुआ एक रहट का जाव (अरहट की भूमि) पसंद किया गया था, क्योंकि वह नजदीक भी था और जल तथा छाया का भी वहां सुख था।

इस काम के लिये ४ मेम्बरों की एक समिति मुकरर थी जिसने सब से पहले रहट पर जल की कुण्डी (टाकी) बंधा कर वहां से रसोइघर तक एक बन्द नीक पकी बंधा दी। नीक के मुहाने पर एक बडा टाका (होद) बंधा लिया ताकि नीक द्वारा लाया गया जल सीधा टाका में ही गिरे। टाका के पास कोठिया रख कर छान कर कोठिओं में भरने और कोठिओं से बाल्टियों द्वारा मिट्टी के मटके भर कर परठे में जगह जगह रखने और उनमें से बाल्टियों में ले गिलासों से सर्वत्र पहुचाने की व्यवस्था ध्यान में रख कर उपर्युक्त जल की [illegible] गयी।

जल के टाके (होद) के पास कुछ फासले पर रसोई के लिये छोटी बड़ी करीब २० भट्टियां खोदी कर उन पर चांदनी बंधाई गयी। इसी रसोई स्थान के निकट एक बड़ा होल बना दिया था जहां पर रसोई के बर्तन, थालियां, रसोई का अन्यान्य सामान और तैयार हुई रसोई लापसी, सीरा वगैरह रखने के लिये बड़े २ कटाव रक्खे गये थे।

इस होल के पिछले भाग में एक बड़ा नौहरा खोलाया गया था जिसमें घी, गुड़, चावल मेदा, चीनी, गेहूं का दलिया वगैरह सामान रखा गया था। जहां जल का टांका बांधा गया था वहां एक बड़ा भारी बड़ का दरख्त था जिसकी छाया टांके के ऊपर और आस पास दूर दूर तक पहुंचती थी, परन्तु यह छाया भी सब के लिये पर्याप्त नहीं थी इस कारण उसके सामने करीब ३०००० तीस हजार घनफुट जमीन पर माइ थाना, चादनियों और खादियों से छाया की गयी थी। इसके उपरान्त इस जगह से कुछ ही दूर उसी खेत में अन्य वर्ण के लोगों के जीमने बैठने के लिये जमीन ठीक करायी गयी थी।

(५) घृत-समिति—

ओर्डर से अगर बगैर ओर्डर से आने वाले घी के व्यापारियों से परीक्षापूर्वक घी खरीदने, उसको गर्म कर छानने और डिब्बों में बन्द कर गोदाम में रखने का कार्य इस घृतसमिति

क सुपुर्द था। इसके ४ सभ्य थ और घृतसम्बन्धी कुल कार्य इनके स्वाधीन किया गया था। इस समिति ने करीब ७०० मन (बङ्गाली ८० रुपया भर क पक्के मन के हिसाब स २११ मन स कुछ अधिक घृत खरीदा और गर्म कर छान कर पीपों म भर रसोइ के गोदाम में रख दिया।

(६) मसाला-समिति—

प्रतिष्ठा के मौके पर शाक तरकारियों में डालने क लिये मिर्च, हल्दी, धनिया, जीरा, नमक आदि जरूरी मसाले कुटवा पिसवा कर तैयार करने के लिये भी दो सभ्यों की एक समिति नियत की गयी थी, जिसने पक्की १० मन मिर्च और इसके अनुसार ही जरूरी मसाला कुटवा पिसवा के तैयार करवाया।

(७) घास चारा-समिति—

प्रतिष्ठा पर आने वाली बैलगाडियों के बैलों, घोड़ों, ऊंटों और हाथियों क लिये जरूरी घास चारा इकट्ठा करने के लिये भी दो सभ्यों की एक समिति नियत की गयी थी। कुछ तो घास पञ्चों ने पहले खरीद लिया था तो भी वह कम मालूम होने से फिर घास खरीद कर करीब ५०० सौ गाड़ियां घास और १००० ग्वारतरी (गुवार की भूसी) और इससे

भी अधिक प्रमाण में गहू का पुलाव (खाक्ला) खरीद कर एकत्र किया था।

(८) वरघोडासाज-समिति—

वरघोड का साज-सामग्री इकट्ठी करने के लिये भी ४ सभ्यों की एक समिति नियत की गयी थी। इस समिति ने उदयपुर जाकर पण्डित सुखदेवप्रसाद जी के पास उदयपुर के हाथियों की मागनी की, परन्तु गैररियासत का मामला बता कर पण्डित साहब ने हाथियों के भेजने में कठिनायी बतायी, इससे समिति के सभ्यों ने एक हाथी घानेराव ठिकान से और एक हाथी खेरवा ठिरान से लाना वहां जाकर तय किया। उसी दौर में जोधपुर जाकर वहा का बेंड बाजा मगवाना निश्चित किया। इसके अतिरिक्त आहोर से सोना चादी के रथ पालकी आदि और अन्य स्थानों से अन्यान्य-सामान लाना निश्चित कर दिया।

(९) मन्दिर कमठा-समिति—

उस समय दोनों मन्दिर जी के ऊपर काम और जरूरी पूरा करने के लिए कमठा चल रहा था। करीब २५ ... १ और ५० मजदूर हमेशा काम कर रहे थे, इन सब निगरानी रखने, जरूरी सामान तैयार रखने, हाजरी पास

देने लेने और पगार चुकाने का कार्य इस समिति के सुपुर्द था।

(१०) प्रकीर्णप्रबन्धक—

ऊपर लिखे मुजब भिन्न भिन्न कार्य भिन्न भिन्न समितियों में बांट दिये गये थे फिर भी छोटे बडे अनेक कार्य थे, जैसे पुलिस पार्टी का इन्तजाम, चौकी पहरे का बन्दोबस्त, स्वयंसेवक मण्डलों के बुलाने का प्रबन्ध, इलेक्टरी और गॅस की दीवा बत्तियों के मंगवाने का बन्दोबस्त, नगर में योग्य-स्थानों में और प्रवेशमार्गों पर दरवाजे खड़े करवाना आदि। ये सब कार्य पञ्चोंने और अन्यान्य सज्जनों ने किये।

१३ प्रतिष्ठामण्डप

सब समितियों में भोजनमण्डप-समिति और प्रतिष्ठा-मण्डप-समिति का कार्य सबसे अधिक जवाबदारी का था। सारे उत्सव का मुख ये दो ही कार्य थे जो उक्त समितियों के सुपुर्द थे। भोजनमण्डप-समिति के कार्य की रूपरेखा ऊपर दी जा चुकी है। अब हम प्रतिष्ठामण्डप का दिग्दर्शन करावेंगे।

प्रतिष्ठामण्डपसम्बन्धी सबसे टेढ़ा मामला उसके योग्य जमीन की पसन्दगी का था। गाव वालों के इसमें तीन मत

थे। अधिक भाग की इच्छा प्राचीन मन्दिर के पास गुरा साहब भक्तिसोमजी क नौहर में यह मण्डप बनवाने की थी। कितनेक श्रावक कहते थे कि यहा जमीन कम है, भोजन मण्डप क निकट उत्तरी दरवाजे के बाहर मण्डप बनवाना अच्छा है, तब कतिपय सज्जनों की इच्छा महन्त साहब के मठ में मण्डप बनवाने की थी। आखिर यह सवाल महाराज साहब पर छोडा गया। आपने तीनों स्थानो को नजर में निकाला और मठ क बाहर का बाड़ा और उसक सामने वाली जमीन पसन्द की। यहा क मठपति महन्त श्री अजितभारतीजी बडे ही गुणी और मिलनसार सज्जन ह। आप शैवधम क आचार्य होते हुए भी जैनधम क प्रशसक और सघ क प्रति सद्भाव रखने वाले विद्वान् सन्यासी है। प्रतिष्ठा कराना निश्चित हुआ तभी से आपने यहा क सघ को अपनी तरफ से सभी तरह की मदद दने की सहानुभूति दर्शित की थी। महाराज साहब की पसन्दगी की जमीन पर प्रतिष्ठा मण्डप बनवाने के लिये आप की तरफ स तुरन्त आज्ञा मिल गयी। पूर्व तरफ की वाड की भीत तुडवा कर जमीन बाहर क मैदान क साथ मिला दी गयी। वहा से कूडा कर्कट दूर करवा दिया गया। ऊपर ऊपर की मुर्दा धूली खुदवा कर बाहर फेंकवा दी गयी और उस जमीन पर सकडो गाडी ताजी शुद्ध मिट्टी और नदी की बालू डलवा कर मण्डप भूमि का तल भाग ऊचा लिया गया।

महाराज साहब की सलाह मुजब मण्डप का प्लान बनाया गया था और उसी मुजब शुभमुहूर्त्त में मण्डप स्तम्भारोपण का कार्य आगे चलाया गया, और करीब एक महीने के अन्दर देवविमान तुल्य सुन्दर मण्डप बन कर तैयार हो गया।

मण्डप के नीचे करीब ३२६८ बत्तीस सौ अडसठ घनफुट जमीन थी। मण्डप तीन भागों में बटा हुआ था। उनमें पिछले भाग में बायी तरफ शत्रुंजय तीर्थ, दाहिनी तरफ गिरनार और मध्यभाग में तीन गढयुक्त समवसरण की रचना की गयी थी। ये तीर्थ इतने तादृश बने थे कि मानों साक्षात् अपने मूलरूप में ही आकर खडे हो गए हों। एक एक टोंक, एक एक देवल और एक एक गढ किले का आकार इस ढङ्ग से बना था कि जानकार प्रेक्षक देखते ही कह देते थे कि यह शत्रुंजय है और यह गिरनार।

पहाडों पर चढने के मार्ग, वृक्षलताओं के दृश्य, जंगली जानवरों के हूबहू चेहरे, बहते हुए झरनों और नदियों के दृश्य, जलकुंड और चलते हुए फुवारे देखने वालों को आश्चर्य चकित और आनंद मग्न बना देते थे।

मंडप के मध्यभाग में करीब ६६५ घनफुट भूमिभाग पर नवीन मूर्तियां स्थापित करने और उन का विधि विधान करने के लिये वेदिकायें बनी थीं। यह मध्यवेदिकामण्डप

मिहरावदार १२ दरवाजा स सुशोभित था। इस के चारो ओर ७–७ फूट चौडी परिक्रमा रक्खी गयी थी।

वदिका मडप और पच पोलिया के नीच मिहासन पर प्रतिष्ठित प्रतिमा स्थापन करने का स्थान और पचपोलिया क सामन बाहर के भाग म करीब १४२६ घनफूट जमीन पर आलीशान मभामण्डप बना था। जहा पर गवैये पूना पढाते, गायनमडली गाती नाचती और दर्शकगण जिनभक्तिरसामृत का पान करते थ।

मडप के तीनो भागो म कुल मिलाकर २३ बगडीदार मिहराब वाले दरवाजे थ और ८ माद। मारा मडप ऊपर से साद और नीचे मे विविध रगदार वस्त्रो मे सजाया गया था।

छोट बड काच के तख्ता, हाडिया, गोला, झुमर, मीनाकारी पट्टियों और रगीन पुष्पमालाओ मे मडप देवविमान की तरह जगमगा रहा था। भीतर जात ही प्रेक्षको की आखे चौंधिया जाता और चित्त प्रसन्न हो जाते थ।

प्रतिष्ठामडप के सामने एक छायादार मदान लगा हुआ था, जहा बड, नीम, इमली आदि के बड बड वृक्ष लहरा रह थे मानो कुदरत ने ही यात्रियों क लिय घनी छाया कर रक्खी थी। करीब १०००० दस हजार मनुष्य इस छाया मे सुखपूर्वक बैठ सकते थे। मैदान क पूर्व भाग में एक मीठे

थानों की रात थी और उत्तरभाग में गोल का प्रसिद्ध मठ, उसका बाग और कुआ। इन सब कारणों से प्रतिष्ठामण्डप और उसके आस पास का दृश्य अतिशय मनोहर लगता था और दिन रात वहा मनुष्यों की भीड़ लगी रहती थी।

१४ समितियों की पुनर्नियुक्ति

भिन्न भिन्न कार्य भिन्न भिन्न समितियों के सुपुर्द करने की बात हम ऊपर लिख आए हैं। उन कामों में से बहुत से काम प्रतिष्ठा के पहले करने के थे, अत एव वे कार्य प्रतिष्ठा के पहले ही समाप्त करके समितियें निवृत्त हो चुकी थीं। इधर महोत्सव निकट आने पर बहुत से अन्य कार्य उपस्थित हुए थे, इसलिए उन निवृत्त समितियों के सभ्यों से नयी समितिया नियुक्त की गयीं।

(१) मुकाम-डेरा-समिति—

इस समिति में ४ सभ्य थे। आगन्तुक महमानो के ठहरने के लिये महाजनो और अन्य लोगों के मकानात खोल वाना, उनको झडवा बुहरवा के ठीक करना और आने वाले महमानों का वहा मुकाम करवाना इत्यादि इस समिति का कार्य था।

(२) मार्गसफाई-समिति—

इस समिति में दो सभ्य थे। गाव भरके मार्गों को ठीक ठाक कराना, मार्ग मे पडे हुए पत्थर, लकडी, सामान को उठवा कर मार्ग खुला करवाना, पडे हुए कूडे कक्कट दूर फेंकवा कर मार्ग की सफाइ करवाना और उत्सव दर्मियान दोना टाइम वहा पानी छिडकवाना इस समिति का कार्य था।

(३) जलप्रबन्ध-समिति—

इस समिति मे ४ सभ्य थे। जहा जहा महमान ठहरे हो उन तमाम घरों मे जल भराना, मार्ग में जगह जगह छाया करवाके जल के प्याउ बिठवाना, जल की कहीं कमी तो नहीं है इत्यादि बातों पर ध्यान रखना इस समिति का मुख्य कार्य था।

(४) मगलघर-समिति—

इस समिति मे ४ सभ्य थे। प्रतिष्ठा के विधि विधान में उपयोगी फल, मेवा, पूजासामग्री आदि चीजो को सभाल कर मङ्गलघर में रखना और जरूरी समय पर निकाल कर देना, औषधिया मगवा कर एकत्र करना और समय पर हाजर करना इस समिति का कर्तव्य था।

(५) पास प्रदान-समिति—

इस समिति में दो सभ्य थे। ठंडाई के मसाले, गर्म चाह घृत, दूध, गुड, शक्कर, आटा, दाल, चावल, मसाला आदि कुल भोजन सामग्री और पास, गुवारसरी, पुलाव आदि चारे का पास काट देना इस समिति का काम था।

(६) सीधासामान-समिति—

इस समिति में भी दो सभ्य थे। आटा, दाल, घी, गुड, शक्कर, ठंडे और गर्म मसाले आदि कुल मोदीखाने का सामान इस समिति के हवाले था।

सेवासमितियों, पूजा-भक्तिसमितियों और गुजराती महमानों को ही नहीं बल्कि सर्वसंघ को ही आम तौर से अर्ज कर दी गई थी कि जिनको सार्वजनिक भोजन पसंद न हो वे महाशय यथेष्ट सीधा मंगवा लिया करें। यद्यपि इस समिति का काम चीठ्ठीमुजब सीधा देने का था, तथापि इसको हिदायत की गई थी कि जैन यात्रिक के लिए वह चिठ्ठी पास के ऊपर ही निर्भर न रहे, इस कारण से बगैर पास के भी जैन यात्रिक को उसकी इच्छामुजब यह सीधा तोल देती थी।

(७) चारादान-समिति—

इस समिति में दो सभ्य थे। इस समिति का कार्य घास

की गड्डी पर निगरानी रखना और पास लेकर आने वालों को नोकरों द्वारा घास चारा दिलवाना था।

हाथी, घोडे, बैल, ऊट, वगैरह को इस समिति के द्वारा ही घास चारा प्राप्त होता था।

(८) रसोईघरनिरीक्षण-समिति—

इस समिति मे पाच सभ्य थे। रसोई घर की निगरानी, रसोई के लिये जरूरी सामान और वरतन हाजर रखना, बची खुची रसोई को ठिकाने लगाना, रसोई के लिए ईधन, मजदूर हाजर करना इत्यादि काम इस समिति के सुपुर्द था।

(९) बिंबनिर्मापक समिति—

इस समिति मे दो सभ्य थे। जयपुर जाकर नये जिन-बिंब बनवाने का आर्डर देना, बिम्बो की तैयारी के लिये ताकीद देना और तैयार होने पर बिम्ब लेने जाना इस समिति का कार्य था। इस समिति की मार्फत करीब २५००) पचीस सौ रुपयों के जिनबिम्ब नये बनवाये गये थे।

(१०) पूजाभक्ति-समिति—

इस समिति में ४ सभ्य थे। उत्सव के दर्मियान पूजा पढाने की तैयारी करना, स्नात्रिया को तैयार करना आदि काम इस समिति के सुपुर्द था।

१० बिम्बों का आगमन

गोलनगर के दोनों जिन मन्दिरों के लिए कुल ११ जिन बिम्बों और ४ यक्ष यक्षिणियों की मूर्तियों की जरूरत थी और प्रारम्भ में इनके लिये ही कारीगरों को खास ओर्डर दिये थे। परन्तु बाद में दूसरे भी अनेक गाव नगरों के जैनसघों की जिनबिम्बों के लिए माग होने के कारण अधिक बिम्बों के लिए ओर्डर दिये गये थे। बिम्ब तैयार होने की खबर मिलते ही बिम्बनिर्मापक समिति के दो सभ्य उन्हें लेने के लिए जयपुर गये और बिम्बों को रेल्वे पार्सलों में ले आए। कुछ बिम्बों का पालिस होना बाकी होने से दो दिन के बाद उन्हें कारीगर खुद पहुचाने आये थे।

आर्डर के बिम्बों के उपरान्त भी जयपुर मे कुछ बिम्ब आये थे जो सभी खरीद लिये गये और भिन्न भिन्न गावों के सघो की प्रार्थना से उनके गाव के नाम के अनुकूल लेख और लाछन खुदवा कर प्रतिष्ठा में रख दिए गये थे। जयपुर के अतिरिक्त सीरोही, मेहसाना, मिनोर (गुजरात), अजमेर, बालेसर आदि दूसरे भी अनेक स्थानों से जैनबिम्ब प्रतिष्ठा अजनशलाका के लिये आए थे। सिरोही से २५, मेहसाना से १३ पाषाण के बिम्ब आए थे। मिनोर से आये हुए बिम्बों में एक बिम्ब स्फटिकरत्न का था। इसके सिवा चादी की अनेक चौवीसिया, पञ्चतीर्थिया, एकतीर्थिया, सिद्धचक्र, अष्टमङ्गल

और सर्वधातु के छोटे बड़ अनेक जिन बिम्ब मानिक श्रावकसर्वों की तरफ में नजदीक दूर से आये थे। पाषाण और धातु के मिलकर २०० दो सौ के ऊपर बिम्बसंख्या हो चली थी।

जयपुर से आए हुए सभी बिम्ब प्राचीन शैली के और पक्के श्वेत पाषाण क होने से दखत ही दर्शकों के चित्त प्रसन्न हो जाते थे।

१६ स्वयसेवक मण्डल

प्रतिष्ठामहोत्सव पर एकत्र होने वाले सघ की भक्ति, वरघोडा की व्यवस्था और अन्य कामो की उचित व्यवस्था के लिये स्वयसेवकमडलो को बुलाने का महाराज साहबने उपदश द कर योग्य सेवामडलो को आमत्रित करवाया था जिस स निम्न लिखित ३ सेवामडलोने आ कर कुल व्यवस्था अपने ऊपर ले ली थी।

(१) श्री आदिजिन सेवा मडल-तखतगढ

सेवा मडलो में प्रमुख उपर्युक्त तख्तगढ का मडल था। इस में मपार्दी के ८० स्वयसेवक (वालटियर्स) थे। दो सक्रेटरी, केप्टन, खजानची आदि अधिकारी भी मण्डल क साथ ही थे। ये सभी अपना अपना खास ड्रेस पहिने और सजे हुए थे।

इस मडल के लिये गोल के श्रीसघने २५ बैलगाडियाँ दो दिन पहले ही तखतगढ भेज दी थीं, इस से मडल द्वितीय वैशाख शुदि १० के प्रभात समय में ही गोल आ गया और सघ के आग्रह से मयवर्दी और गाने के जुलूस के आकार मे नगर में चक्कर लगाया, जिस से नगरनिवासियो पर अपूर्व प्रभाव पडा और सामान्य जनता तो इस मडल को पुलिस से भी अधिक समझने लगी।

(२) दूसरा मडल जालोर का "श्री ओसवाल नवयुवक सेवामडल" था। इस मडल में कुल २५ स्वयसेवक थे।

यह मडल वैशाख शुदि १३ को गोल आया और इसने भी प्रथमागत तखतगढ के मडल के साथ हिलमिल कर सघ की सेवा बजाई।

(३) तीसरा मडल गोल का "श्रीपार्श्वनाथ सेवा मडल" था। यह मडल यद्यपि नया था फिर भी पूर्वोक्त मण्डलों के साथ मिल कर इसने भी अपनी सेवा अर्पण की।

१७ मडलो की कार्यव्यवस्था

इन मडलोंने उत्सव पर जो सराहनीय कार्यव्यवस्था द्वारा सघसेवा की है उसका सपूर्ण वर्णन करना इस लेखिनी की शक्ति के बाहर की बात है।

मडल के सभी सभासद प्रातःकाल ४॥ साढे चार बजे उठ जाते और जरूरी कामों से निवृत्त हो ५॥ साढे पाच से छ बजे तक प्रतिष्ठामण्डप, दोनों मदिर और भोजनमडप निगरह में चौकी पहरे की ड्यूटी भरने लगते थे, नौ बजने पर उन की जगह नये वालेंटियर आते और वे अपने अपने कैम्पों में जाते। जलपान करके फिर वे अपनी अपनी ड्यूटी पर चले आते थे। इस प्रकार बारी बारी से सभी वालंटियरों को जुदे जुदे स्थानों पर पहरा भरना पड़ता और यह क्रम हमेशा रात के ११ बजे तक रहता।

प्रातःकाल ७ से ९ तक और दो पहर का २॥ से ४॥ तक वरघोड के चढावे बोले जाते थे, यह भी सब कार्य सेवा मडल के अधिकार में था। चढावे पूरे होते ही प्रतिष्ठामडप के मैदान में दोनों समय वरघोड चढते और नगर के मुख्य मार्गों में चक्कर काट कर फिर प्रतिष्ठामडप के निकट आकर विसर्जन होते।

वरघोड विसर्जन होते ही खास खास स्थानों के पहरेदार वालंटियरों को छोड शेष सभी स्वयसेवक भोजनमडप में जाते और भोजन की पांत शुरू कराते। सब कामों में सेवामडली के लिए यह काम एक कसौटी रूप था। एक साथ हजारों मनुष्यों की पांत कर जीमने बैठाना और उन को थालियां, गिलास, जीमन, शाक तर्कारियां, चावल, दाल और पानी

आदि सब सामान पहुंचाना और वह भी बगैर विलंब के, इन मैत्रीमंडलों के सिवा अन्य किसी से नहीं बन सकता। महोत्सव के आखिरी दिनों में जब कि महमानों की संख्या १५००० से २०००० तक पहुंच चुकी थी, इन मंडलों ने जो तत्परता पूर्वक सेवा उठायी, इतनी विशाल जनसंख्या होने पर भी किसी चीज की कमी न आने दी, यह एक चिरस्मरणीय प्रसंग है और विविध प्रान्तों के श्रीसंघ जो वहां पधारे हुए थे इस प्रसंग को कभी नहीं भूलेंगे।

१८ वरघोडा (जुलूस)

हम ऊपर उल्लेख कर चुके हैं कि दोनों समय वरघोडे निकलते और उन की व्यवस्था स्वयंसेवक करते, परंतु इतने ही से वरघोडों की वास्तविकता का अंदाजा नहीं हो सकता, इस लिये यहां वरघोडे के संबन्ध में कुछ लिखेंगे।

वरघोडा निकलने के समय जनसमुदाय इतना इकट्ठा हो जाता कि देखने वालों को पता तक नहीं चलता कि इस भीड का कहीं छोर भी है या नहीं, इतने पर भी मैत्रीमंडलों की व्यवस्था इतनी उत्तम थी कि किसी को कुछ तकलीफ नहीं होने पाती।

वरघोडे में सब से आगे नगारा निशान चलता और अपनी प्रचंड ध्वनि से भीड को हटाता हुआ मार्ग करता जाता।

निशानडंक के पीछे चलती हुई विविधवेश-भूषाभूषित घोडस्वारों की टुकडी प्रेक्षकों का ध्यान अपनी तरफ खींचती।

घोडस्वारों के पीछे रथ, रकले, सहनगाडी, सोनाचांदी का रथ आदि की कतार चलती हुई वरघोड की भव्यता प्रदर्शित करती।

रथगाडियों की कतार के पीछे ढोल, थाली, तुरही, आदि देशी बाजा चलता और अपनी ध्वनि में प्रेक्षकों के हृदयों को हर्षमग्न बनाता।

देशी बाजे के पीछे अंग्रेजी बेंड बाजे वालों की टुकडी मयवर्दी के चलती।

इस के बाद दोनों हाथी अपने अपने साज शणगार के साथ १०-१०-१२-१२ सवारियां लिये मंदगति से चलते हुए वरघोड की शोभा को बढाते थे।

इस के बाद भगवान की पालकी और पुरुषवर्ग ताल, ढोलक के साथ भक्तिमय गाने गाता चलता था।

पुरुषों के बाद सोना चांदी के मेरु, कल्पवृक्ष, पारणा, सुपन आदि विविध साज उपाडे हुए मधुर गीत गाता स्त्री मंडल चलता। इस मंडल के चारों तरफ स्वयंसेवक रस्सियों का कोर्डन बना कर बड़ी मुस्तेदी के साथ चलते थे।

स्त्रीमंडल के पीछे सामान्य जन गण चलता था।

इस प्रकार की व्यवस्था के साथ वरघोड़ा निकलता तब दर्शकगण की इतनी भीड़ होती थी कि इधर से उधर जाना मुश्किल हो जाता, फिर भी स्वयंसेवकों की तत्परता से उस में किसी तरह का कष्ट या नुकसान नहीं होने पाता था।

१९ पुलिसपार्टी का इन्तजाम

यद्यपि सभी स्थानों में सेवामंडल अपनी तत्परता से चौकी पहर भरते रहते थे, फिर भी शहर और खास करके रात्रि के समय पुलिस भी अपनी ड्युटी बजाती रहती, पुलिस सुपरिन्टेंडेंट, पुलिस सबइन्सपेक्टर और कान्स्टेबल मिल कर करीब ३५ पुलिसमैन तो स्टेट के और उतने ही चौकी पहरदार ठिकाने गोल के तथा १०—१२ खानगी आदमी मिल कर ७०—८० आदमी दिन रात चौकी पहरे का काम करते थे। इस के अतिरिक्त गोल के चारों और मार्गों में भी चौकियां बिठा दी थीं, जिस से दिन-रात किसी भी समय कहीं भी आने जाने वालों को चोर लुटेरों का भय न हो। इतना होने पर भी पुलिस के सवार दिन रात गांव में और जंगलों में गस्त लगाते रहते थे। इस उत्तम प्रबन्ध का ही परिणाम था कि सैकड़ों गांवों के हजारों मनुष्यों के इकट्ठे होने पर भी कहीं भी लूट खोस या चोरी का नाम तक सुनने में नहीं आया।

२० जागीरदारा की सहानुभूति

पुलिसपाटा के उपरांत उत्सव के दिनो में आस पास के जागीरदार साहबों की भी पूरी सहायता और सहानुभूति थी, वे अपनी अपनी हदम तो चौकी पहर का इन्तजाम करत ही थे, परतु अनेक ठाकुर साहब तो गोल के श्रीसघ के आमत्रण को मान दे उत्सव में भाग लेने गोल भी पधार गये थे, जिन में कई ताजिमी ठिकाणो के मोनानवीस थे, इन में नाकोरा ठाकुर साहब की महरबानी विशेष उल्लखनीय है, आप अपने ठिकाने के करीब सब घोड लेकर गोल पधार थे और इन्ही घोडो से प्रतिष्ठा के वरघोड की शोभा अधिक बढ़ती थी।

२१ स्वदशी-दवाखाना

उत्सव की तैयारी मुजब पहले हो आगाही मिल चुकी थी कि गोल में एक बडा भारी मेला होनेवाला है। इस मेले में पधारने वाले महमानो म से किन्ही को कुछ भी शारीरिक तकलीफ हो जाय तो उन की सेवा चिकित्सा के लिये गोल म एक छोटासा स्वदशी दवाखाना भी खोल दिया था, जिस म जरूरी दवाइया तैयार रक्खी थी। इस दवाखाने म डाक्टर श्रीयुत लाभशकरजी आचार्य बुलाये गये थे जो 'आयुर्वेदिक' और 'एलोपेथिक' इन दोनो पद्धतियो के एक अनुभवी चिकित्सक है।

दवगुरू की कृपा और श्रीपार्श्वनाथ भगवान् के अतिशय से उत्सव के दिनों में ऋतु इतनी अनुकूल और सुखदायक रही कि उक्त दवाखाने का शोभा बढाने के अतिरिक्त कोइ उपयोग नहीं हुआ। यद्यपि दवाखाना जाहिर रास्ते पर था और उस के द्वार पर "स्वदशी-औषधालय" इस प्रकारका बोर्ड लगा दिया था तथापि उत्सव के दर्मियान किसी का माथा तक नहीं दुखा और दवाखाने की जरूरत ही नहीं पडी।

२२ ऋतु की अनुकूलता

गर्मी का समय मारवाड के लिये अतिशय प्रतिकूल ऋतु है। इस मौसम म सख्त ताप और प्रचण्ड आंधियों से मनुष्य प्राय बेचैन रहा करते है, और इस वर्ष तो वर्तमान पत्रों में कइ भविष्यवाणियाँ भी छप चुकी थी कि द्वितीयवैशाखशुदि ६ के दिन बडा भारी भूकम्प और आंधियाँ आने के योग है। इन उडती बातो से मनुष्य और भी चौकन्ने हो गये थ कि प्रतिष्ठा के दिनों में क्या होगा और क्या नहीं। द्वितीय वैशाखशुदि ७-और ८ मी के दो दिन हवा इतने जोरों की चली कि लोग और भी सशक हो गये, आ आ कर महाराज से पूछते—'गुरुमहाराज! अगर इसी प्रकार हवा चलती रही तो सघ कैसे इकट्ठा हो सकेगा?' भोले भाविक मनुष्यों की इस बचैनी पर महाराज साहब फरमाते—'गभराओ मत, गुरुदव की कृपा से सब ठीक होगा।' और सचमुच सब ठीक

ही हुआ, नवमी से हवा कम होने लगी और दशमी तक बहुत ही कम हो गयी। एकादशी के प्रभातसमय में हवा उस प्रमाण पर आ गयी जितना कि उस ऋतु के लिए जरूरी थी। इस हवा के चलने से ऋतु में खासा परिवर्तन हो गया। पहले लू और सख्त ताप से जो घबराहट होती थी वह बिल्कुल मिट गयी। वातावरण इतना ठंडा हो गया कि रात के समय अक्सर ओढ़ कर सोना पडता था और यह ऋतु की अनुकूलता प्रतिष्ठामहोत्सव समाप्त हुआ और सब अपने अपने स्थान पहुंचा तब तक रही।

२३ कार्यों का प्रोग्राम

यद्यपि उत्सव में होनेवाले कार्यों का प्रोग्राम पहले ही निश्चित कर के कुंकुमपत्री में छपवा दिया था और हमेशा उसी मुजब कार्य होते रहते थे, फिर भी उन कार्यों के निमित्त जो जो चीज सामग्री जरूरी होती उन की सूचियां बना कर पहले ही दिन महाराज साहब अधिकारी समितियों को सुपुर्द कर देते थे, जिस से योग्य सामग्री पहले ही तैयार करके रख दी जाती थी। इन्द्र इन्द्राणियों का प्रोग्राम भी इन्हीं सूचियों में लिख दिया जाता था।

नवीन बिम्बों पर वैशाखशुदि १ के दिन से संस्कार होने लगे थे परंतु कुछ मूर्तियां शुदि २ के शाम को आयी थीं इस

रगण लेख लांछन खुदवाने के बाद व शुदि ३ के दिन विधि में शामिल की गया और उसी दिन प्रथम च्यवन और जन्म कल्याणक के संस्कार करके फिर सब पर तीसरे दिन का विधान किया गया था। इस के सिवा सभी कार्य कुंकुमपत्री में लिखे मुजब ही किये गये थ।

२४ क्रिया-विधान

प्रतिष्ठा-अंजनशलाका संबन्धी जो जो क्रिया-विधान साधु से हो सकता था वह तो महाराज श्रीकल्याणविजयजी तथा मुनिश्रीसौभाग्यविजयजी के ही हाथ स होता था, परन्तु जो कार्य गृहस्थोचित होते व शेठ नगीनभाइ और उन के सहकारियों के हाथ से होते थ।

यद्यपि कुंकुमपत्री में महाराज साहब के हाथ नीचे क्रियाकारक के तौर पर गुरु साहब श्रीभक्तिसोमजी का नाम छपवाया था, परंतु प० भक्तिसोमजी कई महीनों से बीमार होने स क्रियाविधान करने के लिये छाणी (वडोदा) से शेठ नगीनभाइ को बुलाने का प्रबन्ध महाराजसाहब ने पहले ही कर लिया था और नगीनभाइ द्वितीयवैशाखशुदि ११ के रोज अपनी सहकारीमंडली के साथ वहा पधार गये थे। चैत्यवंदन, मंत्रन्यास, मुद्रा, जिनाह्वान, वासक्षेप, नेत्रोन्मीलन आदि जो जो कर्तव्य गुरुमहाराज के करने योग्य होते वे सब

महाराजसाहब स्वय कर लेते थे और नलिवेप, नैवद्य ढौकन, पुष्पाञ्जलि, अगचर्चा, पूजा आदि जो जो कृत्य श्रावक के करने योग्य होते वे सभी शेठ नगीनभाइ और उन के सहकारी करते थे। गुरु और श्राद्ध दोना क्रियारसिक अपने अपने कार्यो मे कुशल होने मे विधि विधान बहुत ही शान्ति और निर्वि घ्नतापूर्वक हुआ करता था।

७५ पूजा-भक्ति

द्वितीय वैशाखवदि ११ के दिन शुभमुहूर्त में प्रतिष्ठामडप म सिंहासन स्थापित किया गया था और उस में पूर्वप्रतिष्ठित जिनप्रतिमा पधरा कर उसी दिन से कुकुमपत्री म लिखे मुजब भिन्न भिन्न पूजायें पढा कर भगवान की भक्ति की जाने लगी थी।

यों तो गोल में तथा बाहर स आये हुए सघ में पूजा पढाने वाले बहुतसे गवैये थे, तथापि पूजाभक्ति को अधिक रोनक बनाने के लिये पूजा पढाने के लिये पालिताणा के प्रसिद्ध गवैये श्रीयुत नन्दलालजी बुलाये गये थे। इन गवैयाजी को जिन्होंने पूजा पढाते सुना है वे ही इन के गाने की खूबियाँ जानते है। इस रसात्मक विषय का कलम से लिखना असभव है। जब ये हारमोनियम के साथ पूजाओ की ढाल गाने लगते थे हजारों आदमियों की सभा स्तब्ध सी हो कर चुपचाप सुनने

लगती थी। अच्छे अच्छे गाने वाले भी इन के सामने गाने का साहस नहीं करने पाते थे, फिर भी ये स्वयं अन्य गवैयों को भी गाने के लिये समय देते थे।

पूजा हारमोनियम, दुकड, खजरी, ढोलक, ताल आदि सब साज के साथ पढ़ाई जाती थी।

२६ रोशनी

यों तो रात्रि के समय सारे नगर में गैस की बिजली बत्तियां लगतीं और सर्वत्र चकाचौंध प्रकाश हो जाता था, परंतु प्रतिष्ठामण्डप की रोशनी की तो छटा ही और होती थी।

बाहर का मैदान और सभामण्डप तो बिजली लाइटों से चकाचौंध हो जाता था और मध्यमण्डप रंगबेरंगी काच की हांडियों और झुमर में जो बत्तियां लगतीं उन से देदीप्यमान हो जाता। वेदिकाओं की मिनाकारी-जडित मण्डपिकाओं पर जो सेकडा बीजली के ग्लोब लगते उन के प्रकाश से तो मानों सूर्योदयका सा दृश्य उपस्थित हो जाता था। बीजली की बत्तियों के उज्ज्वल प्रकाश में हांडी, झुमरों के तैल के दीपक चन्द्रयुक्त आकाश में तारों के से शोभते थे। उन के प्रतिबिम्ब जो काच के तख्तों पर पडते उन से लोगों को भ्रान्तिसी हो जाति कि असली दीपक कौन हैं और

विम्ब कौन ?, इस दृश्य को देख कर दर्शक स्वर्गविमानों की कल्पना करते और उन के अस्तित्व का अनुमान लगाने लगते थे।

२७ भावना-बैठक

दिन के समय जिस प्रकार पूजाभक्ति का ठाठ जमता उसी प्रकार रात्रि के समय करीब पहर रात तक सभामण्डप में भावना की बैठक होती थी। इसके लिए पालिताणा से श्रीजिनदत्तसूरि-ब्रह्मचर्याश्रम की संगीतमण्डली बुलाई गयी थी, जो सर्वस्मान के साथ द्वितीय वैशाखवदि ११ को ही यहां पहुंच गयी थी। मंडली में ८ तो समवयस्क (समान अवस्था के) विद्यार्थी थे और बाकी मैनजर, मास्टर, बजैये वगैरह, कुल १२ आदमी थे। यों तो मंडली वाले दिन के समय भी पूजा में अक्सर आया करते थे, परन्तु रात्रि के समय जहाँ के लोग उनके साथ जब वे सभामंडप में आते लोग नृत्य (नाच) देखने और संगीत सुनने के लिए अधीर हो जाते और सभामंडप के उपरान्त बाहर का मैदान भी दर्शकों से ठसाठस भर जाता।

करीब २॥-३ घंटा तक मण्डली अपनी कला के साथ भक्तिभाव करती। रासक्रीडा, डंडीखेल, थालीभ्रमण, रस्सी गुंथन आदि अपनी कुशलतासूचक कलाओं के प्रदर्शन के साथ

यह जो नाचती, गाती और संवाद करती उस से सभा चित्र लिखित सी हो जाती और वहा से उठने का मन नहीं करती।

द्वितीय-वैशाखवदि १४ के दिन श्रीपार्श्वनाथ विद्याभवन -तीखी (मारवाड) की संगीतमण्डली भी वहा आ पहुची और तीन दिन तक अपने नृत्य, गान और विविधकलाप्रदर्शन पूर्वक भगवान् की भक्ति करती रही।

तीखीमडली तीन दिन के उपरान्त दूसरे गाव चली गयी थी परन्तु पालीताणामण्डली तो आखिर तक वहा रह कर भगवान् की भक्तिद्वारा मनुष्यो का मनोरंजन करती रही।

२८ श्रीपूज्यधरणीन्द्रसूरिजी का आगमन

उत्सव के दिनों में जयपुर की खरतरगच्छीयगादी के युवाचार्य श्री धरणीन्द्रसूरिजी गोल से ४-५-कोश पर ही थे, परन्तु इस बात की महाराजसाहब को या गोल के श्रीसंघ को खबर नहीं थी, इस कारण उन्हें आमन्त्रण नहीं दिया जा सका, सूरिजी बाकरा से रवतडा पधारे और वहा से उन के कोटवा-लजी और एक अन्य यतिजी महाराजसाहब के पास आये और श्रीपूज्यजी [illegible] ार और उन की गोल पधारने की इच्छा [illegible] ज साहबने उसी समय गाव के-
४ पचो [illegible] श्री पूज्यजी को कुंकुमपत्री देने

उपदेश किया, पंचों ने महाराज का उपदेश शिरोधार्य किया और दूसरे दिन प्रभातसमय कुंकुमपत्री लिख कर कोटवालजी को दे दी, शाम को श्रीधरणीन्द्रसूरिजी भी सह परिवार गोल पधार गये और श्रावक सघने सत्कारपूर्वक नगर में ले जा कर तपागच्छ के उपाश्रय में मुकाम करवाया।

श्रीपूज्य महोदय नवयुवान होते हुए भी शिक्षित और शान्तप्रकृति के सज्जन हैं। आप प्रतिष्ठा-सबन्धी क्रियाविधान देखने और भगवद्भक्ति में भाग लेने को प्रतिष्ठामडप में पधारा करते थे।

२९ महारात्रि के चढावे

मारवाड में विवाह या प्रतिष्ठा के लग्न दिन से पूर्वदिन की रात 'महारात' (महारात्रि) कहलाती है, क्योंकि प्रकृत उत्सव की अन्तिम रात्रि होने से उस में अधिक धामधूम और जागरण होने की वजह से वह लबी चौडी हो जाती है।

प्रस्तुत अजनशलाका-महोत्सव की महारात भी उत्कृष्ट धूम धाम और विविधप्रकार के चढाव बोलने के कारण सच मुच 'महारात' हो गयी। दोनो मंदिरों में मूर्तिया विराजमान करने, ध्वज दड कलश चढाने, तोरण बांदने आदि के कुल चढावे इसी रात्रि में बोले गये। इस रातमें भाग्यशालि श्रावको

चढावे बोल कर अपनी लक्ष्मी का जो सदुपयोग किया उस का विवरण नीचे मुजब है।

(१) श्रीपार्श्वनाथजी के मंदिर के चढावा के आदेश—

(१००१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर ऊपर ध्वजा चढाने का आदेश मुहता नेणमल, मिश्रीमल, गणेशमल, मुहता कपूरजी के बेटों पोतोंने लिया।

(२००१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर के शिखर पर सुवर्ण-कलश (इंडा) चढाने का आदेश सा० गोमाजी, चूनीलाल, वनराज, मोनमल, दानमल, सा० आशाजी के बेटों पोतों ने लिया।

(३००१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर के मंडप पर कलश (इंडा) चढाने का आदेश मुहता भीमाजी, खेतमल, जावंतराज, कमलचंद, मुहता देवाजी के बेटों पोतों ने लिया।

(४००१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर के दूसरे मंडप पर कलश (इंडा) चढाने का आदेश मुहता हरकचंद, इंदरमल, चुनीलाल, मुहता भूताजी के बेटों पोतों ने लिया।

१००१) रुपया म पार्श्वनाथजी क मदिर ऊपर चोमुखजी की दहरी पर कलश (इडा) चढ़ाने का आदेश भणशाली मुहता जुहारमल, पीरचद, पुखराज, मु० करताजी के बटों पोतोंने लिया।

१२०१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मदिर पर दड चढाने का आदश वृद्धि० सा० भीमराज, रिखबदास, सा० जुहारमलजी के बेटा पोतानि लिया।

३४५१) रुपया में पार्श्वनाथजी क मदिर म मूलनायकजी श्री पार्श्वनाथ भगवान् विराजमान करने का आदश मुहता मेघराज, मगाजी, जनाजी, हजारीमल, माणेकचद, मिश्रीमल, कुदनमल, घेवरचद, गाधी मुहता मोतीनी के बटो पोतों ने लिया।

१३०१) रुपया में पार्श्वनाथजी की दाहिनी (जीमणी) तरफ श्री शान्तिनाथ भगवान विराजमान करने का आदश वृद्धि० सा० जवानमल, अखयराज, भूरमल, सुखराज मा० तरानी क बटों पोतो ने लिया।

११२५) रुपया में पार्श्वनाथजी की बायी (डावी) तरफ चद्रप्रभस्वामी विराजमान करने का आदेश मुहता भलाजी, पुखराज, मुहता गुलबाजी क बेटा पोता ने लिया।

८५१) रुपया म चौमुखजी में पहला बिंब स्थापित करने रा आदेश मुहता हीराजी, मिरमल, रिखबदास, सुखराज, आदानमल मिश्रीमल, फूलचंद, पारसमल, मुहता जमाजी के बेटां पोतां ने लिया ।

७५१) रुपया में चौमुखजी में दूसरा बिंब स्थापित करने रा आदेश लूणिया मुहता भूताजी दानाजी ने लिया ।

६५१) रुपया म चौमुखजी में तीसरा बिंब स्थापित करने का आदेश खजाणी सा० उमाजी प्रेमचंद हुनरमल सूनाणी प्रतापजी के बेटां पोतां ने लिया ।

५५१) रुपया में चौमुखजी में चतुर बिंब स्थापन करने रा आदेश जीरावला सा० तिलोकचंद, मिश्रीमल, दगीचंद सा० किसनाजी के बेटों पोतोंने लिया ।

८२५) रुपया में गभारे के अंदर खत्तक (आले) में बिम्ब स्थापन करने का आदेश मुहता अनाजी, मेघाजी, दगाजी, गणेशमल, हरखचंद, मिश्रीमल, सुखराज, सिरदारमल, बस्तीचंद साकलचंद, मुहता हिन्दुजी के बेटों पोतोंने लिया।

६५१) रुपया में गभारे के अंदर दूसरे खत्तक (आले) में बिम्ब स्थापन करने का आदेश मा० मगाजी, सेदाजी,

साम्लचद सा० अगराजी के बेटा पोता ने लिया।

१२५) रुपया में श्री पार्श्वनाथजी के मदिर म अधिष्ठायक श्रीपार्श्वयक्ष स्थापन करने का आदेश सा० वीरमजी दानाजी ने लिया।

१०१) रुपया म पार्श्वनाथजी के मदिर म अधिष्ठायिका श्री पद्मावती देवी स्थापन करने का आदश सा० भगाजी लखमाजी ने लिया।

१५०१) रुपया में पार्श्वनाथजी के मदिर तोरण वांदने का आदश श्रीसाधुनिवासी लूणिया मुहता पेलाजी, नेणमल मुहता वजींगजी के बेटा पोता ने लिया।

२५२।।) रुपया में पार्श्वनाथजी के मंदिर का द्वार खोलने का आदश मुहता पूनमचद, भीमराज, सुखराज, केवल-चद, मुहता रेखचदजी क बेटा पोतों ने लिया।

(२) श्री ऋषभदवजी के मदिर के चढावों के आदेश–

३२०१) रुपया में श्रीऋषभदवजी के मदिर पर ध्वजा चढाने का आदश सा० दीपचद, नेणमल, भूरमल, सुजा-णी मूलाजी क बेटा पोता ने लिया।

। में (दडा) चढाने का आदेश सोलकी प्रागजी,

जीतमल, सुरतानमल, पुखराज, पारसमल, सरूपजी क बेटों पोतों ने लिया ।

३६०१) रुपया में मण्डप पर कलश (इडा) चढाने का आदेश सा० गणेशमल, हरखचद, भीमराज, जोरावमल, घेवरचद, मीठालाल, भणशाली सुरताजी के बेटों पोतों ने लिया।

१२०१) रुपया में दड चढाने का आदश मुहता मिश्रीमल, शिवराज, फूलचद, नेणमल, मदा मुहता मेघाजी क बेटों पोतोंने लिया ।

८०१) रुपया में श्रीऋषभदवजी की दाहिनी (जीमणी) तरफ जिनबिम्ब स्थापन करने का आदश सा० हिम्मतमल, हजारीमल, मानमल, लक्ष्मीचद, घेवरचद, सा० रायचदजी के बेटों पोतोंने लिया।

९५१) रुपया में श्रीऋषभदवजी की बायी (डाबी) तरफ जिनबिम्ब स्थापन करने का आदश मुहता तिलोकचद, लखमीचद, मुहता जुहारमलजी के बेटों पोतो ने लिया।

८२५) एक अधिक जिनबिम्ब स्थापन करने का आदेश श्री खतडानिवासी मा० मरूपजी, रिखबदास, सा० [illegible] के बेटों पोतों ने लिया।

११५१) रुपया में श्रीऋषभदेवजी के मंदिर तोरण बांधने का आदेश श्री साधु निवासी मुहता नीठाजी, सोनमल, सागरमल, मुहता परखाजी के बेटा पोतों ने लिया।

२०१) रुपया में श्री ऋषभदेवजी के मंदिर में श्री गोमुख यक्ष स्थापन करने का आदेश लूणिया मुहता श्रीकमजी, चूनीलाल, भानमल, जवानमल, दीपचंद, मुहता मूलाजी के बेटों पोतों ने लिया।

१७१) रुपया में श्रीऋषभदेवजी के मंदिर में श्री चक्रेश्वरी देवी स्थापन करने का आदेश सा० छोगाजी वच्छाजी ने लिया।

ऊपर के दोनों मंदिरों संबन्धी कुल चढ़ावे द्वितीय वैशाखशुदि ४ की रात में बोले गये थे, और उसी समय सैकड़ों गाम नगरों के श्रीसंघ की सभा में इन चढ़ावों के आदेश अंतिम बोली बोलने वालों को दिये गये थे।

वह समय ही अपूर्वउत्साहजनक था। भाग्यशाली श्रावक अपनी लक्ष्मी का सदुपयोग करने के लिये एक एक से आगे बढ़ते थे और जब किसी भी चढ़ावे का आदेश उन को मिलता तब वे इतने आनंदित होते थे मानो उन्हें किसी अपूर्व पदार्थ की प्राप्ति हुई हो।

रात को क़रीब तीन बजे के समय महारात्री की यह संघसभा विसर्जन हुई थी और गोल श्रीसंघ के आगेवान उसी समय से द्वितीय दिन के कार्यों में प्रवृत्त हुए थे।

३० पंचमी का मंगल-प्रभात

संवत् १९९१ के द्वितीयवैशाखशुक्लपंचमी का प्रभात अपूर्व मंगलसमय था। जैन संघ के ही नहीं मनुष्यमात्र के मुख पर उस समय एक प्रकार की प्रसन्नता छायी हुई थी। जिन जिन भाग्यवानों ने रात्रि के समय चढ़ावे बोले थे वे सब स्नानमज्जनपूर्वक शुद्धवस्त्र पहन कर तैयार हो रहे थे।

महाराजसाहब भी आज बहुत जल्दी से अपने आवश्यक कार्यों से निवृत्त हो कर प्रतिष्ठामंडप में पधार गये थे। जिन बिम्बों के अधिवासनापर्यंत के संस्कार पहले हो चुके थे, आज अंजनशलाकाद्वारा नेत्रोन्मीलन कर केवलज्ञान और निर्वाणकल्याणक की विधि करना शेष था। इन कामों के उपयुक्त सब सामग्री पहले ही से तैयार करा रक्खी थी। शेष विधान पूरा करने के उपरान्त अंजनशलाका का लग्न और नवांश आते ही मुनिमहाराज श्रीकल्याणविजयजीने सुवर्णशलाका से श्रीपार्श्वनाथ भगवान् की अंजनशलाका की। बाद में शेष सभी जिनबिम्बों के भी अंजन कर नेत्रोन्मीलन किया। यह कार्य बड़ी शान्ति और शुभ निमित्तों में हुआ।

महाराजसाहब को इस विधान के मन्त्रादि कण्ठस्थ थे, इस कारण कार्य शीघ्रतासे समाप्त हो गया। तुरन्त ही निर्वाणक ल्याणक की विधि करके आपने मंगलगाथापाठ किया और बाद में स्थापनीय-बिम्बों को पालकियों में विराजमान कर मंदिर की तरफ रवाना किया।

३१ बिम्ब-प्रवेश और स्थापन

बिम्बस्थापन के, ध्वजा दंड कलश चढ़ाने के और तोरण बांधने आदि के चढ़ाव जिन्होंने बोले थे, उन्हें पहले ही हिदायत कर दी थी कि वे सूर्योदय होते ही तैयार रहें। चढ़ावा बोलने वाले समय पर आ पहुंचे थे। शेष संघ और सामान्य जनसमुदाय इस मंगल कार्य के दर्शन के लिये पहले ही उत्कण्ठित हो रहा था। प्रतिष्ठामण्डप और मंदिरों तक इतनी भीड़ जमा थी कि तिल रखने की जगह नहीं, तथापि स्वयंसेवकों की कुशलता से मुश्किल चलने का रास्ता हो जाता था।

प्रतिष्ठामंडप से स्थापनीय बिम्बों के लिये महाराज साहब के साथ वरघोडा मंदिरजी पहुंचा। यहां से मुनिमहाराज श्री कल्याणविजयजी श्रीपार्श्वनाथजी के मंदिर में पधारे और मुनि श्रीसौभाग्यविजयजी ऋषभदेवजी के मंदिर में। बिम्बों का सामेला रवाना होने के बाद तोरण बांधा गया और द्वार

पर पुराणे की विधि के बाद बिम्ब मंडप में ले जाये गये। स्थापना की जगह पर सब कुछ कार्य पहले ठीक कर दिया गया था और तात्कालिक विधि उस वक्त कर करना के शुभ -लग्न-नवांशक का समय आते ही दोनों मंदिरों में चढार बोल कर आदेश लेने वालों के हाथों से जिनबिम्ब विराजमान कराये गये, ध्वजा, दंड, कलश चढाये गये। यक्ष यक्षिणी स्थापित कराये गये। स्थापित जिनबिम्बादि पर मुनिमहाराज श्रीकल्याणविजयजी तथा सौभाग्यविजयजी के शुभ हस्तों से वासक्षेप हुआ। याचकों को विपुल दान दिया गया, तब गगनभेदी जयनाद करती हुई लोगों की भीड वहां से कुछ हटने लगी।

३२ याचकदान

प्रतिष्ठा जैसे उत्सवों में 'याचकदान' भी अपना खास स्थान रखता है।

जब से अंजनशलाका-महोत्सव शुरू हुआ तभी से याचकदान भी जारी था। मंगलकलशस्थापना पर, ग्रहदिक्पालादिपूजन पर, अभिषेक पर, दीक्षामहोत्सव विधि आदि के प्रसंगों पर याचकदान करने की प्रवृत्ति परम्परा से चली आती है। इन प्रसंगों पर तो भोजक, ब्राह्मण और पूजक आदि को दान दिया जाता ही है, पर इस का खास प्रसंग तो प्रतिष्ठा

है, उस समय उपर्युक्त जातियों के अतिरिक्त शिल्पि वा भी पारितोषिक दान (इनाम) दिया जाता है। अंजनशलाका जैसे महोत्सवों में इस प्रसंग पर सैकड़ों रुपया का दान देना पडता है, गोलनगर में भी श्रीपार्श्वनाथ भगवान् की प्रतिष्ठा और स्थापना के समय वैसा ही हुआ, सब याचक दान से संतुष्ट किये गये।

इस के बाद सब से मार्के का दान मुडका दान है। अर्थात् प्रतिष्ठा होने के बाद प्रतियाचक कुछ दान दिया जाता है जो 'मुडका' कहलाता है। खास तो मुडका दान देने की रीति सेवकों के लिए ही प्रचलित है, परन्तु आज कल यति लोग भी मुडका लेते हैं और उन के मुडके की रकम सेवकों के मुडके की रकम से दुगुनी होती है। अर्थात् सेवकों को प्रतिमनुष्य एक रुपया दिया जाता है तो यतियों को दो, सेवकों को दो तो यतियों को चार। मारवाड में याचकों में सब से अधिक संख्या सेवकों की, उन के बाद यतियों की, फिर श्रीमाली ब्राह्मण, भट्ट ब्राह्मण, भोजक, रावल आदि जातियों के नम्बर होते हैं।

गोल के महोत्सव पर सेवकों की संख्या ५०० पांच सौ के लगभग थी। यतियों की १०० एक सौ की। श्रीमाली, भट्ट, रावल, भोजक आदि मंगतों की संख्या सौ के अंदर थी। गोल के संघने सेवकों को प्रति मनुष्य २ रुपया मुडका

दिया यतियों को प्रतिमनुष्य—६-६रुपये दिये। ब्राह्मण, रावल आदि को प्रतिमनुष्य १-१ रुपया दिया और भोजकों को एक मुस्त दान दिया।

इन याचकों के उपरान्त मारवाड में हिडोला, नानकशाही, जोगड आदि अनेकप्रकार के मनुष्य आते हैं जो कुछ न कुछ ले ही जाते हैं।

गोल के श्रीसंघने प्रतिष्ठामहोत्सव पर कुल ३०००) तीन हजार से अधिक रुपया का याचक दान दिया।

३३ इन्द्र महाराज का आगमन

दश दिन पूरी शान्ति में बीते, न ज्यादा हवा चली, न गर्मी पडी और न वृष्टि हुई। इस पर लोग कहने लगे—'सब कुछ ठीक रहा, पर इस मौके पर इन्द्र महाराज का पधारना जरूरी था।' अर्थात मारवाडवासियों की कुछ ऐसी मान्यता है कि प्रतिष्ठा-अञ्जनशलाका के प्रसंग पर थोडी बहुत वृष्टि होना शुभ शकुन है। ऐसा होने से प्रतिष्ठा विधिपूर्वक हुई यह समझा जाता है।

द्वितीयवैशाखशुदि ५ मी को रात्रि के करीब दश बजे थे। प्रतिष्ठामण्डप के सभामण्डप में गायन मण्डली नाचगान कर [illegible] हजारों मनुष्यों की सभा [illegible]

एकतान से देख-सुन रही थी। हजारों की मानवसंख्या होने पर भी सिवा गाने के और कोई आवाज वहां नहीं थी। ठीक उसी समय पश्चिम दिशा में एकायक मेघगर्जना सुनाई दी। थोडी सी आंधी के साथ बादलों की घटा भी ऊपर चढती हुई देखने में आयी और बिजली ने भी अपनी चमक से लोगों को चमका दिया। शान्त सभा एकदम क्षुब्ध हो गयी। उत्पातों की भविष्य वाणी के स्मरण से लोगों में भगदड मच गयी। परन्तु कुदरत की भी बलिहारी है! लोग सभा से पूरे उठने भी न पाये थे कि विषाद की घटा दो दो चार चार छींटे डालती हुई ऊपर होकर चली गयी। यद्यपि वहां से दश पंदरह कोश पर इस मेघराज ने काफी जल वर्षाया और वायु देव ने भी अपना अच्छा बल आजमाया, परन्तु गोलनगर में रहने मात्र को छींटे डालने के उपरान्त कुछ भी उत्पात नहीं किया और आंधी तो आकाश में ही देखी गयी सो सही, जमीन पर उसकी खबर तक नहीं पडी। यह गडबड करीब ८-१० मिनटों में ही बन्द हो गयी और लोगों ने कहा कि 'लो इन्द्र महाराज भी पधार गये।'

३४ प्रतिष्ठा के दिन की जनसंख्या

दश दिनों से गोलनगर में हजारों मनुष्यों का खासा मेला लगा हुआ था और वह दिन दिन वृद्धिगत होता जाता

था। यह वृद्धि पञ्चमी के दिन अन्तिम सीमा को पहुच गयी थी, क्योंकि महोत्सव का आखिरी दिन यही था। द्वितीय वैशाखशुदि ४ के शामको गोल में कम से कम २०००० बीस हजार मनुष्यों की सख्या थी और यह सख्या प्राय जैन महमानों की थी। नगर भर के घर, मकान, चोकी, चबूतरा सब मनुष्यों स ठमाठम भरे हुए थे। इनके उपरान्त सेवक, भोजक, जति आदि याचकों ने अपने डेरे सूकडी नदी के तट पर और उसके भीतर जमाये थे। सैंकडो व्यापारी अपनी अपनी दूकानें चौक मैदानों में लगा कर जमे हुये थे। पचमी क दिन चतुर्थी की जनसख्या में पर्याप्त (काफी) वृद्धि हुई। इसमें मुख्य सख्या अन्य वर्ण के मनुष्यों की थी और वह बारह तेरह हजार से कम न होगी। जैनों की सख्या म आज दो तीन हजार की और वृद्धि हुई होगी। जैन और जैनेतर मिलकर आज की जनसख्या ३५००० पतीस हजार क आस पास थी। आज गोलनगर में तो क्या उस के बाहर भाग में भी मनुष्यो की इतनी भीड थी कि चलने को मार्ग नहीं मिलता। यद्यपि इस मनुष्य सघ की सख्या निश्चित रूप से नहीं की गयी थी, तथापि उस दिन क भोजन के उठाव के ऊपर जनसख्या कूती गई थी जो पैंतीस हजार के लगभग होना पाया गया था। उस दिन गोल की पन्द्रह १५ (जालोर को १८।।।) तुलसी की लापसी पकायी गयी थी। महाजनो का खुराक ...गा से कम होता है और वे १ कलसी

जैनो की थी। अन्य वर्ण क लोग आज नहुत कम रह गए थ। टीप्रा मण्डने के नाद शाम को जीम कर यह मेला भी विमर्जन होने लगा और रात पडते पडते नहुत लोग निखर गये, दूसर दिन मुश्किल से वाहर क पन्द्रह सौ मनुष्य वहा रह होगे।

३६ सेवा का सम्मान

सेवा करना एक अति कठिन कार्य है, परन्तु सेवा का सम्मान करना भी कम कठिन नहीं। प्राय दखा जाता है कि जन तक मनुष्यो को गर्ज होती है तब तक व सहायता करने वालों की खुशामद किया करत हैं, परन्तु काम निकलने के बाद व अपने सहायको को भूल जाते हे, आनन्द का विषय है कि गोल क श्रीसघ क सनन्ध में ऐमा नही हुआ। प्रतिष्ठा के काम में जिन जिन की महायता मिली थी गोल क श्रीसघ ने उन सबकी उचित कदर की। दृष्टान्त क तौर पर हम स्वय सेवक मण्डलो के सम्मान का यहा उल्लेख करेंगे।

श्री आदिजिन-सवामण्डल-तखतगढ और श्री ओमवाल नवयुवक सेवामण्डल जालोर ने गोल के श्री सघ को होने वाली अपूर्व यश प्राप्ति में अपनी अपूर्व सेवा द्वारा जो सहायता प्रदान की थी वह श्रीसघ के ध्यान क वाहर नहीं थी।

सेवामण्डलो की इस सेवा के सम्मानार्थ गोल के श्रीसघ ने वैशाख शुदि ७ के दोपहर को तीन बने प्रतिष्ठा-मण्डप के

सभामण्डप में श्री सकलजैनसंघ की सभा होने सम्बन्धी नोटिस निकाल दिये थ जिस से समय होते ही सभामण्डप सभासदों से भर गया था। पूर्वोक्त दोनों सेवामण्डल भी अपनी अपनी वर्दी पहने हुए सभा में हाजर थे। गोल का श्रीसंघ भी समय होते ही वहां उपस्थित हो गया था।

सभा का प्रमुखपद खरतरगच्छ के आचार्य श्रीमान् धरणीन्द्रसूरिजी को दिया गया। मंगलाचरणादि होने के बाद श्री गोल क संघ की तरफ से जालोर-दरबारस्कूल के तत्कालीन हेडमास्टर साहब मुहता किसनराजजी ने सभा बुलाने का उद्देश प्रकट किया।

श्री जालोरवासी रानूणा कानमलजी रामलालजी ने प्रतिष्ठासम्बन्धी कार्य का दिग्दर्शन कराने के साथ अन्य स्थानो में होने वाली प्रतिष्ठा-अंजनशलाकाओं से इस अंजनशलाका की विशिष्टता समझाइ और ऐसे भारी कार्य की इस प्रकार निर्विघ्न समाप्ति होने में महाराज साहबका पुण्यप्रभाव और स्वयंसेवकों की अपूर्व संघसेवा को कारण बताया।

इसके बाद गोल के संघ की तरफ से मुहता भेरुमलजी वकील जालोरवालेन अभिनन्दन पत्र (मानपत्र) सभा में पढ कर दोनों मण्डलों को अर्पण किये और प्रसंगोचित व्याख्यान दिया। पाठकगण के अवलोकनार्थ हम उनमें से एक अभिनन्दनपत्र को नीचे उध्धृत करते हैं।

"अभिनन्दन पत्र"

श्री आदिजिन सेवामंडल-खरतरगढ़-मारवाड़

भाइयो !

आप सज्जनों ने हमारे यहां अंजनशलाका के शुभ प्रसंग पर पधार कर रात-दिन तन-मन से जो सची सेवा की है उसकी प्रशंसा करना हमारी शक्ति के बाहर है। हमारे पास एक भी ऐसा शब्द नहीं है कि जिससे हम आपके इस कार्य की किंचिन्मात्र भी प्रशंसा कर सकें, हजारों मनुष्यों के रोजाना खान-पान और नरघोड़ आदि की प्रशंसनीय व्यवस्था करके आपने हमारे ही नहीं बल्कि सैकड़ों गांवों के जैनसंघ के हृदयपट पर अपूर्व प्रभाव डाला है।

आपकी इस निःस्वार्थ संघसेवा और कार्यक्षमता का हम हार्दिक सम्मान करते हैं, और शासनदेव से प्रार्थना करते हैं कि आपका सेवामण्डल इसी प्रकार के सेवाभार में यशस्वी बने।

यद्यपि आपकी इस संघसेवा का बदला देना हमारी शक्ति के बाहर है फिर भी हमारा संघ आपके कार्य से खुश होकर सुवर्ण चांदी के 'सम्मान पदक' और 'अभिनन्दन पत्र' अर्पण करता है जिन्हें आप स्वीकार कर हमें आभारी करेंगे।

ता २०–५–३४ ई० आपका शुभचिंतक
दा० दीपचद मुलानी जैन मघ–गोल
,, दानमल मायनजी दा॥ रखनचद साहेबजी
,, भेरा कमनाजी मुता मेघराज मोतीचदजी।
,, ताराचदरा छे,

अभिनन्दन पत्र की नकल उम पर हस्ताक्षर करने वाले गोल क पचो के नाम के साथ ऊपर मुजब है। जालोर क ओसवाल नवयुवक सेवामडल का दिया हुआ अभिनन्दन पत्र भी अक्षरश ऊपर मुजब ही है।

अभिनन्दन पत्र अर्पण करने के बाद भी कई सज्जनो ने प्रासगिक विवेचन किये। और मुनिमहाराज श्रीकल्याण-विजयजी का–

'सेवाधर्म परमगहनो योगिनामप्यगम्य.'

इस पोइट पर सारगभित व्याख्यान हुआ। अन्त में प्रमुख महोदय ने बडा ही आकर्षक और रोचक व्याख्यान और इस अजनशलाका जैसे महान कार्य को निर्विघ्नतापूर्वक पार पहुचाने के बदले में पूज्य मुनिमहाराज साहबो को वधाइ दी और इस प्रकार के धर्मकार्य में लक्ष्मी का व्यय करके धर्म और सघभक्ति का लाभ उठाने वाले गोलनगर के जैन-सघ को हार्दिक धन्यवाद दिया।

अत में दोनो सेवा मडलों ने अपने करतब के प्रयोगों स सभाजनों का मनोरजन किया और जयध्वनि क साथ सभा विसर्जन हुई।

३७ आय-व्यय

मारवाड की प्रतिष्ठा-अजनशलाकाओं में आय-व्यय अर्थात् उपज और खर्च भी अपना खास स्थान रखते है। अन्य दशा में जैन प्रतिष्ठाओं में न ज्यादा खर्च होता है, न पैदायश, परन्तु छोटी मारवाड क लिये य दोनों बातें बड महत्त्व की होती है। यहा क जैनो क लिये मदिर की प्रतिष्ठा कराना बड से बडा कार्य होता है। वे अपनी शक्ति भर खर्च करके प्रतिष्ठा-महोत्सव करते हैं। इस प्रसग पर उन्हें कम खर्च करने क लिए कहा भी जाय तो नहीं मानते। कहते हैं, खर्च नही करेंगे तो उपज कैसे होगी?। कुछ अश में यह बात है भी सही। प्रतिष्ठा पर जैसा खर्च किया जाता है वैसी ही उपज भी होती है।

प्रतिष्ठा-अजनशलाकाओं म उपज के ४ चार मद होते हैं-१ नोकारसिया क चढावे, २ वरघोडे के चढावे, ३ ध्वजा, दड, कलश, बिम्बस्थापन आदि क चढावे और ४ टीका अथवा भडार माडना।

इसी प्रकार प्रतिष्ठाओं में खर्च के भी अनेक मद होते हैं जैसे १ भोजन, २ सामग्री जुडाना, ३ पूजापा, ४ प्रतिष्ठा मडप, ५ भोजनमडप, ६ कीर्तिदान आदि। इन सब में भोजन खर्च सब से आगे निकलता है। शेष उक्त और अनुक्त अनेक कामो में हजारों रुपया खर्च होता है।

पिछले पचास वर्ष के अदर होने वाली मारवाड की अजनशलाकाओं में गोल की अजनशलाका जैसे अपना अग्र स्थान रखती है वैसे ही इस के आय व्यय भी अपना खास स्थान रखते हैं। गोल की अजनशलाका में कुल उपज चारों मदों से नीचे लिखे मुजब हुई।

४२६११) बयालीस हजार छ सौ ग्यारह रुपया चैत्रशुदि १० के दिन बोले गये ११ नौकारसियों के चढावों के हुए।

२१९४५) इक्कीस हजार नौ सौ पैंतालीस रुपया ग्यारह दिन के वरघोडा (जुलूसों) में बोले गये चढावा के हुए।

३६१८७) छत्तीस हजार एक सौ सत्तासी रुपया वैशाख शुदि ४ को रातसमय में बोले गये ध्वजा, दड, कलश, बिम्बस्थापनादि के चढावा के हुए।

... हजार रुपया टीका के मद।

कुल जोड (१०९७४३) एक लाख नौ हजार सात सौ तयालीस रुपया।

गोल की अजनशलाका में भोजन, साधनसामग्री भेंट और दान आदि भिन्न भिन्न विषय में कुल ५०००० पचास हजार रुपया के लगभग खर्च हुआ।

३८ उत्सव की परिसमाप्ति

उत्सव के और पर्व के दिन आते मालूम होते हैं जाते मालूम नहीं होते। अजनशलाका-महोत्सव जब तक दूर था लोग दिन गिनते और तरह तरह के मनोरथ मसूबे बाधते थे परंतु उत्सव आया और गया इस का मानों पता ही न लगा।

लगभग तमाम अन्य वर्ण के लोग और तीन चार हजार के आसरे जैन महमान तो पचमी के शाम को ही रवाने हो गये थे। शेष सबजन वैशाख-शुक्लपष्ठी के शाम को जीम कर रवाने होने लगे व सो सारी रात आयी वहा तक जाते ही रहे। इस दिन रात तक लगभग सारा जैन सघ विदा हो चुका था, फक्त दोनो सेवामडल, गायनमडली, खास खास महमान और गोलवालों के सगे सबन्धी विगैरह मिल कर करीब १५०० पदरह सौ मनुष्य पीछे रहने पाये होंगे।

पचमी के शाम से सप्तमी के शाम तक गोल की चारो

तरफ के तमाम मार्ग चलते रहे। चोकी पहर का बदोबस्त होने से लोग दिन और रात चलते ही रहते थे। सप्तमी को नगर मे मनुष्य बहुत कम दिखते थे। यद्यपि तब तक बाहर के बहुत आदमी थे और नगर मनुष्यो से भरा हुआ था तथापि ३००००-३५००० हजार मनुष्य का मेला देखे हुए मनुष्यो को सप्तमी का दिन जन शून्यसा दिखता था और अष्टमी के रोज तो वहा और भी अधिक निजनता मालूम होती थी।

इस प्रकार गोल का चिरस्मरणीय अजनशलाका-महोत्सव बडी सजधज के साथ आया और शान शौकत के साथ बीता, परतु हजारो मुखों में ये शब्द छोडता गया 'धन्य अजनशलाका! धन्य गोल!'।

३९ परिशिष्ट

श्री गोलनगर अजनशलाका उत्सव पर गायनमडली के गाए हुए गायन

१ गायन

(राग-केशरीया थासु)

भयो ओच्छव भारी, पार्श्वप्रतिष्ठा गोलनयर मे ॥ आकणी ॥
सुखडी सरिता सुदरतट पर, श्री गोलनगर उद्दाम।
जैन जगत ज्योति झलकावत, अजनशलाका शुभ काम रे भयो०॥

पार्श्वप्रभु श्री तख्त विराजित, अवरजिन शुभ साथ ।
दीपचद शेठ श्री सघनायक, करे गोलसघ साथ रे ॥ भयो०॥२॥
मुनिप्रवर श्रीकल्याणविजयजी सौभाग्यविजयजी सगे ।
गुरु साहेब श्री भक्तिसोमजी, करे क्रिया शुभरगे रे ॥ भयो०॥३॥
रग वेरगी धजा पावटा, मडप रचना भारी ।
विविधवाजित्रमधुरध्वनि से, सोहत प्रभु अस्वारी रे ॥भयो०॥४॥
ब्रह्मचर्याश्रम-सगीतमडल, सिद्धक्षेत्रथी आवे ।
गीत-नृत्य-वाजित्रलयोथी, 'नाभर' प्रभुगुण गावे रे ॥भयो०॥५॥

२ गायन

(राग—हीरा वडयाना पाणी०)

धन्य ओच्छव आजे, प्रभुजी विराजे, आनद मगल आज, ।
प्रभु पार्श्व विराजे, शिवसुखकाजे, आनद-मगल आज, ॥आ०॥
सरिता सुखडी तीर मनोहर, गोलनगर सुस्थान ।
जैनप्रभाकर पार्श्वप्रभुजी, कीधी करुणा महान रे ॥धन्य० ।१।
नायक सघतणा दीपचदजी, शेठ शूरा गुणवान ।
नि स्वार्थ भाव प्रभभक्ति थी, कार्य बनावे सुजान रे ॥ धन्य०।२।
मुनिप्रवर श्री कल्याणविजयजी, सौभाग्यविजयजी साथ ।
गुरु साहेब श्री भक्तिसोमजी, करे क्रिया भलिभात रे ।धन्य०।३।

शोभा मंडपनी भासे भलेरी, कहता न आवे पार।
नौतम अनुपम रचना रुपाली, जन-मन-रंजनहार रे ॥धन्य०।४।
भविकजन नर नारी करा, हैय हरख न माय।
थाय कृतार्थ प्रीतथी पधारी, निरखीने जिनराय रे ॥धन्य०।५।
धन्य भूमि मरुधर केरी, धन्य नगर ते वास।
धन्य सुमन जन वासी अहीं, ज्यां पार्श्वप्रभुना वास रे ॥ धन्य०।६।
श्री सिद्धक्षेत्र सुतीर्थभूमिना, ब्रह्मचर्याश्रम-बाल।
प्रीत प्रभुगुणगाय सदा ने, इच्छे सकल जयकार रे। धन्य०।७।

३ गायन

(राग-प्रभु भजन कर प्रभु भजन०)

गोलनगर धन्य गोल नगर ॥आ०॥
शोहामणु पुर शोभे मनोहर,
रम्य रसाल भूमि मरुधर ॥ गोल० ॥१॥
पुनीत सरिता सुखडी केरा,
वह सदाए ज्यां निर्मल जल ॥ गोल० ॥२॥
पार्श्वप्रभुजीना दरबार दीप,
ज्योति जेनी जगमगे झलहल ॥ गोल० ॥३॥
श्रीदीपचंदजीसम श्रीमतो,
नामी स्वार्थ वगर ॥ गोल० ॥४॥

मुनिप्रवर श्री कल्याणविजयजी,
सौभाग्यविजयजी श्रेष्ठ छत्तर ॥ गोल० ॥५॥
गुरा साहेब भक्तिसोमसमा ज्या,
मुनिगुणज्ञ शोह शुभ कर ॥ गोल० ॥६॥
धन्य दिवस शुभ आनदकारी,
पार्श्वप्रतिष्ठा सुकार्य मगल ॥ गोल० ॥७॥
शोभा अनुपम उर हरखावे,
आनद आनद छाया मङ्गल ॥ गोल० ॥८॥
श्रीसिद्धक्षेत्रब्रह्मचर्याश्रम,-
केरा शिशु गुण गावे जिनवर ॥ गोल० ॥९॥

८ श्री गोलनगरमण्डनपार्श्वनाथस्तवन

(राग–समुद्र के लाल०)

पासप्रभु की मोहनी सूरत,
देखत दिल को मोह लिया ॥आ०॥
गोलनगर में आप बिराजो,
तवीसमा जिनचंद ।
दर्शन तेरा आज ही पाया,
मिट गया कर्म का फंद ॥पासप्रभु० ॥१॥

गी रनी क्या आनदकारी,
इत तरी हैं अतिप्यारी।
आलम सारी तुम गुण गावे,
वत वदत सीस नमावे ॥ पास० ॥२॥
ासे एकाणु द्वितीय वैशाखे,
गुरुपचमी सच सघ की साखे।
नूतनमदिर तख्त विराजे,
जयजयनाद से मंदिर गाजे ॥ पास० ॥३॥
विश्वपति प्रभु मोहनगारा,
गोलप्रजा के हो सुखकारा।
आश पूरो सब सकट चूरो,
दिन दिन सपत् हो भरपूरो ॥ पास० ॥४॥
वामाराणी के नदन प्यार,
प्रभावती के आप दुलार।
सौभाग्यविजय की अर्ज सुणीजो,
दास की खबरा नित नित लीजो ॥
पासप्रभु मो० ॥५॥

५ लावणी

आनन्द छे आज ... र्णा माहि,
शोभा छे अप ... ी काइ

मणिमय मण्डप रचियो छे अति उत्साह,
वार वार जोवाने मन ललचावे ॥आनन्द छे०॥१॥
वाजित्र बहु विध विध परकारना वागे,
वळी श्रवण कानने अति मधुरा लागे।
हस्ती घोडा रथ मनुष्यनो नहीं पार
वळी जमवा माटे उत्तम भोजन सार ॥आनन्द० ॥२॥
इन्द्रापुरी सम गोलनगर तो शोभे,
जोवाने माटे दरमभा पण थोभे।
मुनि कल्याणविजयजी महाराज भले पधार्या,
मुनि सौभाग्यविजयजी महाराज हमोने भाव्या ॥आनन्द०३॥
संवत् उगणीस नेउआ (१९९) मास वैशाख,
शुक्लपक्षने उत्तम शुक्रवार।
प्रभु पारसनाथ शुभपंचमीदिने पधराशे,
ए शुभ दिवसे आनन्द अति वरताशे ॥आनन्द० ॥४॥
गुण गाय भोजक कर जोडी बहुभावे,
प्रभु पार्श्वनाथना दर्शनथी दुख जावे ॥
आनन्द छे जाने गोलनगरनी माहि,
शोभा छे अपरपार मणा नथी काइ ॥५॥

॥ इति समाप्त ॥

परिशिष्ट ?

पोषधविधि ।

दिवस-पोषध

१ पोषध

"पोष दधाति इति पोषध " अर्थात् धर्म की पुष्टि करे उसे 'पोषध' कहते है। पोषध जैन-श्रावक के पालने योग्य बारह व्रतों में से 'ग्यारहवा' व्रत है। सामान्यतया यह अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्वदिनो में और विशेषप्रसगो में किसी भी दिन किया जाता है।

मुख्यवृत्त्या पोषध आठ पहर का करना चाहिये, परंतु जिनकी भावना आठ पहरका करने की नहीं होती वे दिन को अथवा रात्रि को चार पहर का भी पोषध करते है।

पोषध के मुख्य भेद चार होते हे—१ आहारपोषध, २ शरीरसत्कारपोषध, ३ ब्रह्मचर्यपोषध और ४ अव्यापारपोषध।

१—उपवास आदि तप करना उसका नाम 'आहारपोषध।'

२—स्नान—विलेपनादि शरीरविभूषा का त्याग करना सो
... ।'

३-विषयवासना का त्याग कर ब्रह्मचर्य पालन करना उसे 'ब्रह्मचर्यपोषध' कहते हैं।

४-सासारिकप्रवृत्तियों का त्याग कर धर्मध्यानमें प्रवृत्ति करना उसका नाम 'अव्यापारपोषध।'

उक्त चारों भेदों को देश और सर्वसे गिनने से आठ भेद होते हैं और उनके सयोगी भेद ८० होते हैं, परन्तु पूर्वाचार्यों की परंपरानुसार आज कल केवल आहारपोषध देश और सर्व भेद से किया जाता है, शेष तीन प्रकार के पोषध सर्व से किये जाते हैं, देश से नहीं। आहारपोषध में सर्व प्रकार के आहारों का त्याग कर 'चउविहार' उपवास करना उसको 'सर्व से आहारपोषध' और तिविहार उपवास, आ बिल, नीवि, एकाशन करना उसको 'देश से आहारपोषध' कहते हैं।

२ पोषध लेने का समय

मुख्यवृत्त्या रात्रिप्रतिक्रमण करने के पहले पोषध लेना चाहिये, फिर रात्रिप्रतिक्रमण कर के प्रतिलेखना करनी चाहिये, परन्तु आजकल पहले रात्रिप्रतिक्रमण कर लेते हैं, फिर शरीर चिन्ता आदि से निवृत्त हो जिनमंदिर का योग हो तो जिनपूजा कर के बाद में पोषध ग्रहण करते हैं। कुछ भी हो परंतु जहां तक हो सके पोषध जल्दी लेना चाहिये, समय हो तो पूजा

कर प्रतिक्रमण लेना अच्छा है, परन्तु पूजा के आग्रह में पोषध लेने में अधिक विलंब करना भी अच्छा नहीं है।

३ पोषधलेने की विधि

प्रथम खमासमण देकर 'इच्छाकारेण संदिसह भगवन् इरियावहियं पडिक्कमामि' 'इच्छं' कह कर 'इरियावही' 'तस्स उत्तरी' 'अन्नत्थ' बोलकर एक 'लोगस्स' अथवा चार नवकार का काउस्सग्ग कर, पार कर ऊपर प्रकट लोगस्स बोले, फिर खमा०, इच्छा० 'पोसहमुहपत्ति पडिलेहुं' इच्छं कह कर

१-यह इच्छं 'इच्छामि' क्रियापद का रूप है इसका अर्थ 'चाहता हूँ' यह होता है। यह पद आदेशस्वीकारात्मक होने से गुरु का आदेश प्राप्त होने पर बोलना चाहिये, परन्तु गुरु के अभाव में स्थापनाचार्य को गुरु मान कर उनके आगे क्रिया करते समय भी प्रत्येक आदेश के अन्त में यह पद अवश्य बोलना चाहिये।

२-जहां जहां 'लोगस्स' का काउस्सग्ग लिखा हो वहां 'लोगस्स' ही गिनना चाहिये, परन्तु जिसको लोगस्स याद न हो वह एक लोगस्स के बदले में चार नवकार गिने।

३-जहां केवल इरियावही करने का लिखा हो वहां भी इसी प्रकार खमासमणपूर्वक आदेश मांग कर इरियावही, तस्स उत्तरी, अन्नत्थ आदि सूत्र बोलकर एक लोगस्स का काउस्सग्ग करना चाहिये और ऊपर प्रकट लोगस्स कहना चाहिये।

४-जहां जहां खमा०' लिखा हो वहां 'इच्छामि खमास

मुहपत्ति की पडिलेहणा कर खमा० इच्छा० 'पोसह संदिसाहु' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'पोसह ठाउं' 'इच्छं' कह के दोनों हाथ जोड एक नवकार पढ़कर खडा हो "इच्छकारि भगवन्! पसाय करी पोसहदंडक उचरावोजी' इस प्रकार बोलकर गुरु मुख से पोसह उच्चरे, गुरु का योग न हो तो स्वयं अपने मुखसे नीचे का पाठ पढ़कर पोषध उच्चरे–

"करेमि भन्ते पोसहं, आहारपोसहं देसओ सव्वओ, सरीर सक्कारपोसहं सव्वओ, बम्भचेरपोसहं सव्वओ, अव्वावार-पोसहं सव्वओ। चउव्विहं पोसहं ठामि। जावदिवसं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं–मणेणं वायाए काएणं, न करेमि

मणेणं वदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि इस प्रकार यह संपूर्ण सूत्र बोलना।

१–जहां इच्छा० लिखा है वहां "इच्छाकारेण संदिसह भगवन्" इतना वाक्य बोलना चाहिये।

२–गुरु के अभाव में पोषध लिया हुआ कोई जानकार श्रावक वहां हाजर हो तो उसके मुखसे भी पोषध लिया जा सकता है।

३–आठ पहर का पोषध उच्चरते समय 'जावदिवस' के स्थान में "जाव अहोरत्तं" और रात्रि के चार पहर का पोषध उच्चरते समय 'जाव सेसदिवसं रत्तं' ऐसा पाठ बोलना चाहिये। यदि चार पहरका और आठ पहर का साथ उच्चरना हो तो जाव दिवस अहोरत्तं ऐसे बोलना चाहिये। प्रातःकाल चार पहर का पोषध उच्चरनेवाला

न कारवेमि, तस्स भन्ते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।"

खमा० इच्छा० 'सामायिकमुहपत्ति पडिलेहुं ?' 'इच्छं' कह बैठकर मुहपत्ति पडिलेहण कर और खमा० इच्छा० 'सामायिक संदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'सामायिक ठाउं' 'इच्छं' कह एक नवकार गिन "इच्छकारि भगवन् पसाय करी सामायिक दंडक उच्चरावोजी" यह बोल कर गुरुमुखसे अथवा स्वयं नीचे का पाठ बोलकर सामायिक व्रत उच्चरे–

"करेमि भन्ते सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि, जाव पोसहं पज्जुवासामि, दुविहं तिविहेणं–मणेणं वायाए काएणं न करेमि न कारवेमि, तस्स भन्ते पडिक्कमामि निन्दामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ।"

बाद में खमा० इच्छा० 'बेसणे संदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'बेसणे ठाउं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'सज्झाय संदि-

यदि रातपोषध भी करना चाहे तो दिन के रहते हुए फिर पोषध उच्चरे और पाठ "जाव अहोरत्तं" बोले ।

*–पोषध के बिना सामायिक करना हो उसकी भी यही विधि है । इरियावही करके सीधा सामायिक मुहपत्ति पडिलेहण करे और तीन नवकार गिनने पर्यन्त तमाम विधि यहां लिखे मुजब करे सिर्फ 'जावपोसहं' के स्थान 'जाव नियमं–पज्जु' पाठ बोले ।

साहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० सज्झाय करु 'इच्छं' कहकर तीन नवकार गिनना। फिर खमा० इच्छा० 'बहुवेल सदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'बहुवेल करशुं' 'इच्छं।'

प्रतिलेखनाविधि—

खमा० इच्छा० 'पडिलेहण करुं' 'इच्छं' कहकर मुहपत्ति चरवला, कटासन (बैठका), कन्दोरा और पहिरी हुई धोती, इन पांच उपकरणों की पडिलेहणा करना। बाद में खमा० देकर इरियावही का काउसग्ग करना, ऊपर प्रकट लोगस्स कहना। फिर खमा० 'इच्छकारी भगवन् पसाय करी पडिलेहणा पडिलेहावोजी' 'इच्छं' कह कर स्थापनाचार्य की पडिलेहणा कर, स्थापनाचार्य की पडिलेहणा दूसरे ने कर ली हो अथवा गुरुमहाराज के स्थापनाचार्य के सामने क्रिया की जाती हो तो एक बडेर श्रावक के अप्रतिलेखित उत्तरासन की पडिलेहणा करना। बाद में खमा० इच्छा० 'उपधिमुहपत्ति पडिलेहुं' 'इच्छं' कह मुहपत्ति की पडिलेहणा कर, फिर खमा० इच्छा० 'उपधि सदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'उपधि पडिलेहुं' 'इच्छं' कह कर बाकी के पास में रखे हुए तमाम वस्त्रों की 'पडिलेहणा' करे।

पडिलेहणा करने के बाद इरियावही कर एक पौषधिक

काजा लेवे और दूसरी बार इरियावही करके "अणुजाणह जस्सुग्गहो" ये शब्द बोल कर उस परठ देवे, परठने के बाद 'वोसिरे' यह पद तीन बार बोल, फिर सब अविधि आशातना का 'मिच्छामि दुक्कड' देकर देववन्दन करें।

५ पोषध लेने के पहले पडिलेहणा करने की विधि—

इरियावही करके खमा० इच्छा० 'पडिलेहणा करु?' 'इच्छं' कह कर मुहपत्ति, कटासन, चरवला, और दूसरे तमाम वस्त्रों की पडिलेहणा एक साथ कर लेनी चाहिये. फिर इरियावही कर काजा लेना और दूसरी इरियावही कर विधिपूर्वक परठना चाहिये।

जिसने पोसह लेने के पहले पडिलेहणा कर ली हो उस को पोसह लेने के बाद सिर्फ पडिलेहना के आदेश लेने चाहिए और जहां 'मुहपत्ति पडिलेहण' का आदेश हो वहां मुहपत्ति की पडिलेहणा करनी चाहिए, दूसर उपकरणों की फिर पडिलेहणा करने की जरूरत नहीं है, और न काजा लने परठने की ही जरूरत है। मात्र अविधि आशातना का 'मिच्छामि दुक्कड' देकर देववन्दन करना चाहिये।

१-ऊनी झाडू से जमीन झाडने से जो कूडा कचरा इकट्ठा होता है उसे 'काजा' कहते हैं।

२-'परठने' का तात्पर्य त्यागने—छोडने से है।

६ पोषध लेने के बाद 'राइय' प्रतिक्रमण—

जिसे पोषध करना हो उसे पहले रात्रिकप्रतिक्रमण अवश्य कर लेना चाहिये, परन्तु किसीने कारणविशेषसे प्रतिक्रमण न किया हो तो उसे पोसह लेने के बाद भी पडिलेहणा करके देववन्दन करने के पहले नीचे लिखे मुजब राइयप्रतिक्रमण कर लेना चाहिये।

इरियावही कर खमासमण दे आदेशपूर्वक कुसुमिणी दुसुमिणी का काउस्सग्ग करना, आगे की विधि नित्य मुजब करनी, मात्र सात लाख के स्थान इच्छा० 'गमणागमणे आलोउं' 'इच्छं' कह कर नीचे लिखा हुआ गमणागमणे का पाठ बोलना—

गमणागमणे—

"ईर्यासमिति, भाषासमिति, एषणासमिति, आदानभण्ड-निक्खेवणासमिति, पारिष्ठापनिकासमिति, मनगुप्ति, वचनगुप्ति कायगुप्ति ए पांच समिति त्रणगुप्ति आठ प्रवचनमाता श्रावक तणे धर्मे सामायिक पोसह लीधे रूडी रीते पाली नहीं, खंडना विराधना थई होय ते सविहु मन, वचन, कायाए करी तस्स मिच्छामि दुक्कडं।"

अन्तमें 'भगवानहं' आदि कहने के पहले खमा० इ-

च्छा० 'बहुवेल संदिसाहुं' 'इच्छं' खमा० इच्छा० 'बहुवेल करशुं' 'इच्छं' कह कर फिर 'भगवानहं' आदि कहके 'अड्ढाइ ज्जेसु' कहना और बाद में सब के साथ देववन्दन करना।

७ देववंदन विधि—

प्रथम खमासमणपूर्वक इरियावही करना, 'लोगस्स' कह के उत्तरासन कर खमा० इच्छा० 'चैत्यवन्दन करु ?' 'इच्छं' कह कर चैत्यवन्दन, नमुत्थुणं और 'जय वीयराय' (आभवमखंडा) तक कहना, फिर खमा० इच्छा० 'चैत्यवन्दन करु ?' 'इच्छं' कह कर चैत्यवन्दन, नमुत्थुणं, अरिहंतचेइयाणं, अन्नत्थ, १ नवकार का काउस्सग्ग और १ स्तुति, इसी प्रकार लोगस्स, पुक्खरवरदीवड्ढे और सिद्धाणं बुद्धाणं के अंत में एक एक नवकार का काउस्सग्ग और एक एक स्तुति कहनी। चतुर्थ स्तुति कहने के बाद बैठ कर नमुत्थुणं कहना और फिर पहले ही की तरह 'अरिहंतचेइयाणं' आदिसे लेकर 'सिद्धाणं बुद्धाणं' और वेयावच्चगराणं' तक के सूत्र और चार स्तुतियां कहनी।

दूसरी बार चतुर्थ स्तुति कहने के बाद फिर नमुत्थुणं दोनों जावंति और स्तवन कह के 'आभवमखंडा' तक 'जयवीयराय' कहना। फिर खमा० इच्छा० 'चैत्यवंदन करु' 'इच्छं' कह कर चैत्यवंदन और नमुत्थुणं कह कर 'जयवीयराय' संपूर्ण कहना और अविधि आशातना का मिच्छामि दुक्कडं देकर सज्झाय करना।

८ सज्झायविधि—

खमा० इच्छा० 'सज्झाय करुं' 'इच्छं' कह कर उकडु पगा पर बैठ नवकार गिन के एक जन 'मन्नहजिणाणं' सज्झाय कहे और दूसरे सब सुने। सज्झाय के अंत में फिर नवकार गिनने की जरूरत नहीं है।

"मन्नह जिणाणं" सज्झाय—

मन्नह जिणाणमाणं, मिच्छं परिहरह धरह सम्मत्तं।
छव्विह आवस्सयम्मि, उज्जुत्ता होइ पइदिवसं ॥१॥

पव्वेसु पोसहवयं, दाण सील तवो अ भावो अ।
सज्झायनमुक्कारो, परोवयारो अ जयणा य ॥२॥

जिणपूआ जिणथुणणं, गुरुथुअ साहम्मिआण वच्छल्लं।
ववहारस्स य सुद्धी, रहजत्ता तित्थजत्ता य ॥३॥

उवसम-विवेग-संवर, भासासमिई छजीवकरुणा य।
धम्मिअजणसंसग्गो, करणदमो चरणपरिणामो ॥४॥

संघोवरि बहुमाणो, पुत्थयलिहणं पभावणा तित्थे।
सड्ढाण किच्चमेअं, निच्चं सुगुरूवएसेण ॥५॥

९ पोरिसी पढाने की विधि—

पोसहवालो को कभी ६ घडी दिन चढने के बाद पोरिसी पढानी होती है जिसकी विधि इस प्रकार है—

खमा० इच्छा० 'बहुपडिपुन्ना पोरिसी' दूसरा खमा० इच्छा० 'इरियावहिय पडिक्कमामि इच्छं' कह इरियावही कर १ लोगस्स का काउस्सग्ग करना, ऊपर प्रगट 'लोगस्स' बोल खमा० इच्छा० 'पडिलेहण करु ?' 'इच्छं' कह कर मुहपत्ति की पडिलेहण करनी।

१० राइमुहपत्ति पडिलेहण विधि—

गुरुमहाराज का योग होने पर भी राइप्रतिक्रमण उनके समक्ष आदेशग्रहणपूर्वक न किया हो तो पोसहवालो को गुरुमहाराज के समक्ष राइमुहपत्ति पडिलेहनी चाहिये, जिसकी विधि इस प्रकार है—

प्रथम खमासमण दे इरियावही करना, फिर खमा० इच्छा० राइमुहपत्ति पडिलेहु ?' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेहनी फिर दो वंदन देकर इच्छा० राइय आलोउ इच्छं 'आलोएमि जो

१—जहां जहां 'दो वंदन' देने का लिखा हो वहा सर्वत्र "इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए अणुजाणह मे मिउग्गहं निसीहि" इत्यादि संपूर्ण सूत्र दो वार बोल कर द्वादशावर्त वंदन करना चाहिये।

मे राइओ०' इत्यादि पाठ बोल के 'सव्वस्स वि राइ ।' इत्यादि कहना, बाद में गुरु पदस्थ हो तो दो वंदन देकर और सामान्य हो तो एक 'खमासमण' देकर 'इच्छकार' और 'अब्भुट्ठिओह' के पाठसे खमाना। अन्त में फिर दो वन्दन देकर 'इच्छकारी भगवन् पसाय करी पच्चक्खाण का आदेश दीजोजी' कह कर पच्चक्खाण लेना।

इसके बाद दो दो खमासमण, इच्छकार, और अब्भुट्ठि ओह' के पाठ से बाकी के सर्व मुनिराजों को वंदन करना।

११ जिनदर्शन विधि—

पोषध लेने के बाद जिनमंदिर दर्शनार्थ अवश्य जाना चाहिये। उत्तरासन कर, कटासन कंधे पर, चरवला बायी बगल में और मुहपत्ति दाहिने (जीमणे) हाथ में रख कर जीवजयणा पालते हुए अभिगम, निसीहि आदि विधिपालन पूर्वक मंदिरमें प्रवेश करना और मंडप में जा दर्शन, स्तुति कर इर्यावहीप्रतिक्रमणपूर्वक चैत्यवंदनविधि करना, बाद में 'निसीहि' कह कर मंदिर से पीछा पोषधशाला जाना। मंदिर पोषधशाला से १०० कदम से अधिक दूर हो तो आकर इरियावही करना और 'गमणा गमणे' कहना, अन्यथा जरूरत नहीं।

१२ दूसरी बार काजा लेने की विधि—

अगर वर्षाऋतु[1] का समय हो तो पौषधिक को पोरिसी पढ़ाने के बाद और दो पहर का देववंदन करने के पहिले पौषधशाला में दूसरी बार काजा (पूजा) निकालना चाहिये।

इसकी विधि इतनी ही है कि एक जन इरियावही करके मकान में काजा निकाल कर यों ही बाहर पठ दव, फिर इरियावही करने की जरूरत नहीं है।

१३ पच्चक्खाण पारने की विधि—

चौविहार उपवासवालों को तो पच्चक्खाण पारने की जरूरत नहीं है, परंतु जिनको तिविहार उपवास, आयंबिल, निवी अथवा एकाशन हो उनको पूर्वोक्त विधिसे दोपहर का देववंदन करने के बाद नीचे लिखी विधि से पच्चक्खाण पारना चाहिये।

प्रथम इरियावही करके खमा० इच्छा० 'चैत्यवन्दन करुं' 'इच्छं' कहकर 'जगचिन्तामणि' का चैत्यवन्दन, नमुत्थुण, दोनों जावन्ति, उवसग्गहर और सम्पूर्ण जयवीयराय कहना।

१—वर्षाऋतु श्रावणवदि १ से कार्तिक शुदि १५ तक गिना जाती है, परन्तु वर्तमान परम्परा मुताबिक आषाढ शुदि १५ से कार्तिक शुदि १४ तक दूसरी बार काजा लिया जाता है।

बाद में खमा० इच्छा० 'मज्झाय करु' 'इच्छं' कह कर एक नवकार गिन 'मन्नह जिणाण' सज्झाय करना। फिर खमा० इच्छा० 'मुहपत्ति पडिलेहु ?' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेहणा करनी और खमा० इच्छा० पच्चक्खाण पारु ?' 'यथाशक्ति' फिर खमा० इच्छा 'पच्चक्खाण पार्यु' 'तहत्ति' कह कर दाहिना (जीमना) हाथ मुठिवाल कर चरवला के ऊपर स्थापना और एक नवकार गिनकर जो पच्चक्खाण किया हो उस का नाम ले कर नीचे का पाठ बोलना—

"उग्गए सूरे नमुक्कारसहिअं पोरिसी साड्ढपोरिसी सूरे उग्गए पुरिमड्ढमुट्ठिसहिअ पच्चक्खाण कर्युं चउविहार आयबिल, नीवि, एकासन कर्यु तिविहार पच्चक्खाण फासिअं पालिअं सोहिअं, तीरिअं, किट्टिअं, आराहिअं, जं च न आराहिअं तस्स मिच्छामि दुक्कडं।"

उपर का पाठ बोलने के बाद एक नवकार गिनना।

पोरिसी, साढपोरिसी, पुरिमड्ढ अथवा इनके साथ आयबिल, निवी, या एकाशन का पच्चक्खाण किया हो वे ऊपर के पाठ से अपने पच्चक्खाण पारें, परंतु जिनके तिविहार उपवास हो वे नीचे के पाठ से अपना पच्चक्खाण पारें-

"सूर उग्गए उपवास कर्या तिविहार, पोरिसी–साढ पोरिसी पुरिमड्ढ मुट्ठिसहिअं पच्चक्खाण कर्यु पाणाहार, पच्च

क्खाण फासिअ, पालिअ, सोहिअ, तीरिअ, किट्टिअ, आराहिअ ज न न आराहिअ तस्स मिच्छामि दुक्कड।"

प्रत्येक पच्चक्खाण पारनेवालो को अंत में एक एक नवकार गिनना चाहिये।

१८ पानी पीने और भोजन करने की विधि–

पौषधिक को तिविहार उपवास हो और पानी पीना हो तब ऊपर की विधि से पच्चक्खाण पार के आसन पर बैठ याचित अचित्त जल पीना चाहिये और जिस बर्तन से जल पिया हो उसे शुद्धवस्त्र से पोंछ लेना चाहिये और जल के बर्तन को ढक कर रखना चाहिये।

जिसके आंबिल, निवी या एकाशन हो और अपने घर भोजन करने जाना हो उसको ईर्यासमिति पालते हुए जाना और घरमें प्रवेश करके "जयणा मगल" ये शब्द बोल कर बैठने की जगह कटासन नीछा के बैठना, स्थापना स्थाप कर के इरियावही करना और खमासमण देकर 'गमणा गमणे' कहना चाहिये। फिर पाटला, थाली आदि भाजन देख साफ कर स्थिर आसन बैठ भोजन करे। उस समय मुनिराज का योग हो तो उनको दान देकर भोजन करे। आहार उतना ही ले जितना सुखपूर्वक खाया जा सके, क्योंकि भोजन उच्छिष्ट

(जठा) छोडने पर पौषधिक को प्रायश्चित्त लना पडता है भोजन करते समय बोलना नहीं चाहिए, कोइ चीज लेनी हो तो इशारे से मांगे अथवा पानी से कुल्ला करके बोले।

जिसको घर न जाना हो वह पौषधशाला में ही पुत्रादि द्वारा लाया आहार करें। घर जाकर स्थापना स्थापने, इरियावही करने आदि की जो विधि कही है वह पोषधशाला में भोजन करने वालो को करने की जरूरत नहीं। बाकी सब बातें दोनों जगह समान भावसे करनी चाहिये।

भोजन के बाद मुख शुद्ध करके 'दिवसचरिम तिविहार' का पच्चक्खाण कर लना चाहिये और जहा बैठ कर आहार किया हो वहा काजा निकाल लेना चाहिये।

भोजन के लिये घर जाने वाला को भोजन करके तुरत पोषधशाला आ जाना चाहिये और सबको आहार करने के बाद इरियावही कर 'जगचिन्तामणि' से लेकर 'जयवीयराय' पर्यन्त चैत्यवन्दन करना चाहिये।

१—आज कल यही प्रवृत्ति अधिक चल रही है इस लिये विधि में लिखना पडा है वास्तव में पोषधिक को दूसरे का लाया हुआ आहार पानी ग्रहण करना ठीक नहीं स्वय लाना चाहिये अथवा अन्य पौषधिक से मगवाना चाहिये, क्योंकि दूसरे अव्रती का लाया हुआ आहार पानी ग्रहण करना पोषध का दोष माना गया है।

१५ मल मूत्र की शंका दूर करने की रीति-

औदारिक शरीर मल मूत्र का स्थान है इस कारण पोष धवालों को भी इन शरीर शंकाओं को दूर करना पडता है, परंतु पोषध में यह काम जयणापूर्वक करना चाहिये, इस लिये पौषधिक को अचित्त (गर्म किया हुआ) जल, छोटी कुंडिया और पोंछनी आदि चीजें पहले से ही याच कर रख लेना चाहिये।

जब शंका निवृत्ति के लिये जाना हो, पहले पहनने का वस्त्र बदल देना चाहिये, मुहपत्ति कमर में-कंदोरे में भरा देनी चाहिये और चरवले को बायी (डाबी) बगल में रख, कंबलकाल में कंबल ओढ कर, अन्यथा बगैर कंबल के एकान्त में जहा बैठने की जगह हो कुंडिया को पोंछनी से पोंछ कर उसमें लघुशंका (पैशाब) करे और बाहर अथवा जहा खुली जगह हो उसको परठ (फेंक) दे।। परठने की जगह जाकर पहले कुंडि को जमीन पर रख मन में "अणुजाणह जस्सुग्गहो" ये शब्द बोले, बाद में परठे और परठने के बाद फिर कुंडी को नीचे रख कर मन में तीन बार 'वोसिरे' यह शब्द बोले। बादमें कुंडि को स्थान पर रख दे।

बाडा अथवा खुला बडा मैदान हो और मनुष्यों की दृष्टि अधिक न पडती हो तो बिना कुंडि के भी लघुशंका निर्जीव [illegible] जा सकती है।

शका निवृत्ति करने के बाद हाथ धो डालना चाहिये।

बडी शका (टट्टी) भी इसी विधिसे जाना चाहिये। यहा शुद्धि के स्थान जल का लोटा लेकर जहा टट्टी जाने की जगह हो, जाना और बैठने के पहले "अणुजाणह जस्सुग्गहो" तथा उठने के बाद तीन बार 'वोसिरे' शब्द पूर्ववत् बोलना चाहिये। शकानिवृत्ति कर स्थान पर आ के हाथ पग शुद्ध करना और पहरने का वस्त्र बदलना चाहिये। बादमें स्थापनाचार्य के सम्मुख इरियावही कर 'गमणा गमणे' कहना।

१६ चौथे पहर की प्रतिलेखनाविधि–

पौषधिक उक्त जरूरी कामो से निवृत्त होने के बाद स्वाध्याय–ध्यान या धर्म चर्चा में समय बीतावे और दिन के तीन पहर बीतने के बाद दूसरी बार पडिलेहणा कर जिसकी विधि नीचे मुजब है।

खमा० इच्छा० 'बहुपडिपुन्ना पोरिसी' फिर खमा० इच्छा० 'इरियावहियं पडिक्कमामि' 'इच्छं' कह कर इरिया वही करना, बाद में खमा० इच्छा० 'पडिलेहण करूं?' 'इच्छं' फिर खमा० इच्छा० 'पोषणशाला प्रमार्जुं' इच्छं' कह के उपवासवाला मुहपत्ति, कटासन और चरवला की पडिलेहण करे और जिमने आयबिल, एकाशन आदि किया हो वह उपर्युक्त

तीन चीज़ों के उपरान्त कटोरे और धोती की भी इसी समय पडिलेहण करे।

बादमें पांच उपकरणों की पडिलेहणा करनेवाले इरिया-वही करके और तीन उपकरण पडिलेहने वाले बिना इरिया-वही किये ही 'खमासमण' देकर 'इच्छकारी भगवन् ! पसाय करी पडिलेहणा पडिलेहावो जी' इस प्रकार आदेश माग के मुनिराज का योग हो और स्थापनाचार्य की पडिलेहणा उन्होंने कर दी हो तो बडेरे श्रावक के उत्तरासन की पडिलेहणा करे, अगर स्थापनाचार्य की पडिलेहणा न हुई हो तो होने तक ठहर जाय, बादमें उत्तरासन पडिलेहे, अगर गुरुमहराज का योग न हो और स्थापनाचार्य के आगे पोसह किया हो तो यहा स्वयं स्थापनाचार्य की पडिलेहण करे, फिर खमा० इच्छा० 'उपधिमुहपत्ति पडिलेहुं' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेहण करे, बाद में खमा० इच्छा० 'सज्झाय करुं' 'इच्छं' कह एक नवकार गिन उकडु बैठ कर 'मन्नह जिणाणं' सज्झाय कहे। बाद में खाने वाले दो वंदन देकर पानी न पीना हो तो पाणाहार का और पानी पीना हो तो मुट्ठिसहियं का पच्चक्खाण करे। तिविहार उपवासवालों को वंदन देने की जरूरत नहीं, वे खमासमण दे के 'इच्छकारी भगवन् पसाय करी पच्चक्खाण का आदेश दीजो जी' कह कर पाणाहार का पच्चक्खाण करे। चउविहार उपवास-वालों को यहा पच्चक्खाण करने की जरूरत नहीं है। जिसने प्रातःकाल तिविहार उपवास का पच्चक्खाण किया हो परंतु

पानी न पिया हो और पीना भी न हो तो यहा पर चउविहार उपवास का पच्चक्खाण कर ले। फिर खमा० इच्छा० 'उपधि सदिसाहु' 'इच्छ' खमा० इच्छा० 'उपधि पडिलेहु' 'इच्छ' कह कर बाकी सर्व वस्त्रों की पडिलेहण करे। पडिलेहण करके सब अपने अपने वस्त्रादि उपकरण उठा कर खडे हो जायें और उनमें से एक जन इरियावही करके काजा ले शुद्ध कर दूसरी बार इरियावही कर विधिपूर्वक परठ देवे और अन्त में सर्व अविधि आशातना का मिच्छामि दुक्कड दें।

१७ मुट्ठिसहिअ पच्चक्खाण पारने की विधि-

पडिलेहण में जिसने मुट्ठिसहिअ का पच्चक्खाण किया हो और पानी पीना हो वह पडिलेहण करके पहले मुट्ठिसहिअ का पच्चक्खाण पारे।

मुट्ठिसहिअ का पच्चक्खाण पारने मे विशेष विधि नहीं है, कटासनपर बैठ दाहिने (जीमने) हाथ की मुट्ठि वाल कर चरवले पर रखे और एक नवकार गिन कर "मुट्ठिसहिअ पच्चक्खाण फासिअ, पालिअ, सोहिअ, तीरिअ, किट्टिअ, आराहिय, ज च न आराहिय तस्स मिच्छामि दुक्कड" यह पाठ बोल पच्चक्खाण पारे और यह भी न बने अथवा याद न हो तो मुट्ठिवाल के तीन नवकार गिनने से भी चल सकता है। पीछे देववन्दन के पहले पहले पानी पी लेवे, क्योंकि देववन्दन करने के बाद

पानी नहीं पिया जाता। बाद में सब मिलकर तीसरी बार का देववन्दन करे।

१८ दैवसिक प्रतिक्रमण—

प्रतिक्रमण पोसहवालों और दूसरों के लिये एक ही है, परन्तु उसमें जहां जो फरक आता है वह यहां बताया जाता है।

पौषधिक श्रावक को प्रतिक्रमण के समय सामायिक लेने की, पच्चक्खाणमुहपत्ति पडिलेहणे की और पच्चक्खाण लेने के लिये दो वन्दन देने की जरूरत नहीं है, क्यों कि उनकी सामायिक ली हुई है और पच्चक्खाण की क्रिया पडिलेहण के समय की हुई है। हां, पाणाहार का पच्चक्खाण पहले न किया हो तो उस समय कर ले। बाकी पौषधिक को इरियावही करके प्रतिक्रमण का चैत्यवन्दन शुरू करना चाहिये और दैवसिक या पाक्षिक जो प्रतिक्रमण हो विधिपूर्वक करना चाहिये। उसमें सात लाख और अठारह पापस्थान की जगह पौषधिक "इच्छाकारेण संदिसह भगवन् गमणागमणे आलोउं ?" 'इच्छं' कह कर "इरिया समिति, भासासमिति०" इत्यादि 'गमणागमणे' का पाठ बोले और 'करेमि भन्ते' के पाठ में 'जाव नियमं' के स्थान में 'जाव पोसहं' शब्द बोले।

१९ पोषध पारने की विधि—

प्रतिक्रमण समाप्त होने के बाद पोसह पारने के पहले दण्डासन, कुण्डिया, पानी विगैरह चीजें जिसके पोषध न हो उस गृहस्थ को सुपुर्द कर दे और फिर इस विधि से पोसह पारे।

पहले खमासमणपूर्वक इरियावही करे और चउक्कसाय से ले जयवीयरायपर्यन्त चैत्यवन्दनसूत्र बोले। फिर खमा० इच्छा० 'मुहपत्ति पडिलेहु?' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेह, बाद में खमा० इच्छा० 'पोसह पारु ?, यथाशक्ति, खमा० इच्छा० 'पोसह पार्यो ?, तहत्ति कहके एक नवकार गिन दाहिना (जीमना) हाथ चरवला के ऊपर स्थापन कर नीचे लिखा हुआ 'सागरचन्दो' का पाठ कहे—

सागरचन्दो—

"सागरचन्दो कामो, चन्दवडिंसो सुदसणो धन्नो ।
जेसिं पोसहपडिमा, अखण्डिआ जीविअन्ते वि ॥१॥

धन्ना सलाहणिज्जा, सुलसा आणंदकामदेवा य ।
जास पससइ भयवं, दढव्वयत्तं महावीरो ॥२॥"

पोसह विधिए लीधो, विधिए पार्यो, विधि करता जे कई,

अविधि हुओ होय ते सविहु मन वचन कायाए करी मिच्छा-
मि दुक्कड ।

फिर खमा० इच्छा० मुहपत्ति पडिलेहु ? 'इच्छ' कह कर मुहपत्ति पडिलेहण करे और खमा० इच्छा० 'सामायिकपारु?' यथाशक्ति, खमा० इच्छा० 'सामायिक पार्युं' 'तहत्ति' कहके चरवले पर हाथ स्थापन कर नवकार गिन नीचे लिखा सामायिक पारने का पाठ बोले—

"सामाइअवयजुत्तो, जाव मणे होइ नियमसजुत्तो।
छिन्नइ असुह कम्म, सामाइअजत्तिआवारा ॥१॥
सामाइयमि उ कए, समणो इव सावओ हवइ जम्हा।
एएण कारणण, बहुसो सामाइय कुज्जा ॥२॥"

सामायिक विधे लीधु, विधे पार्युं, विधि करतां जे कइ अविधि हुओ होय ते सविहु मने वचने कायाए करी मिच्छा मि दुक्कड ।"

रात्रिपोपध–

१ पौषधिक प्रकार

रात्रिपोषध वाले दो प्रकार के होते हैं-एक तो आठ प॰ का पोषध लेने वाले और दूसरे शामको रत्रिपोषध लेने वाले आठ पहर का पोषध लने वाला जो फिर रात्रिपोषध उच्चरः की जरूरत नहीं है।

शाम को रात्रिपोषध लने वाले भी दो तरह के होते हैं-कोई प्रात चार पहर का पोषध लेकर शामको रात्रिपोषध उच्चरते हैं और कोई केवल शाम को ही रात्रिपोषध लेते हैं। इनमें जो दिनके पौषधिक शामको रात्रिपोषध उच्चरते हैं उन को शाम की पडिलेहण के समय इरियावही से लेकर 'बहुवेल करशु' तक की तमाम विधि दिवसपोषध की विधि मुजब ही करनी चाहिये, सिर्फ 'बसणं संदिसाहु' 'बसणं ठाउं' ये दो आदेश लेने के बाद एक खमासमण दे के 'इच्छाकारण संदिसह भगवन् सज्झायमां ठुं' इस प्रकार का एक ही आदेश लेना और एक नवकार गिनना चाहिये, तीन नहीं। परन्तु जिनके दिवसपोषध नहीं है वे रात्रिपोषध लेते समय भी 'बहुवेल करशु' पर्यंत की तमाम विधि दिवसपोषधविधि के अनुसार करें।

गामकी पडिलेहण और देववन्दन सब पोषधिक एकसाथ समान रीति से करें।

२ स्थंडिलपडिलेहणा

सभी प्रकार के रात्रिपौषधिक को जल, पथारी के लिए संथारिया–उत्तरपट्टा, कानो में डालन के लिये कुण्डल और दंडासन आदि जरूरी उपकरण पास में रख लेना चाहिये। इतना ही नहीं किंतु रात्रि में मात्रा परठने और स्थंडिल जाने योग्य नजदीक, मध्यम और दूर ऐसे तीन स्थानो को देख रखना चाहिये। आधुनिक प्रवृत्ति मुजब संथारा करने की जगह पोषधशाला के द्वार के आस पास की भूमि और पोषधशाला से १०० हाथ तक के प्रदेश को अनुक्रम से नजदीक मध्यम और दूर का स्थान माना जाता है। इन स्थानो की प्रतिलेखना आज कल नीचे मुजब २४ मण्डलों द्वारा की जाती है।

प्रथम इरियावही करके खमा० इच्छा० 'स्थंडिल पडिलेहु?' 'इच्छं' कह कर चरवला दाहिने हाथमें ले उपर्युक्त स्थानो की तरफ फिराता हुआ नीचे का पाठ बोले—

(१)

१ आगाढे आसन्ने उच्चार पासवणे अणहियासे।

२ आगाढे आसन्ने पासवणे अणहियासे।

३ आगाढे मज्झे उच्चार पासवणे अणहियासे ।
४ आगाढ मज्झ पासवणे अणहियासे ।
५ आगाढे दूर उच्चार पासवणे अणहियासे ।
६ आगाढ दूरे पासवणे अणहियासे ।

(२)

१ आगाढे आसन्ने उच्चार पासवणे अहियासे ।
२ आगाढे आसन्ने पासवणे अहियासे ।
३ आगाढ मज्झे उच्चार पासवणे अहियासे ।
४ आगाढ मज्झे पासवणे अहियासे ।
५ आगाढे दूर उच्चार पासवणे अहियासे ।
६ आगाढे दूर पासवणे अहियासे ।

(३)

१ अणागाढे आसन्ने उच्चारे पासवणे अणहियासे ।
२ अणागाढे आसन्ने पासवणे अणहियासे ।
३ अणागाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अणहियासे ।
४ अणागाढे मज्झे पासवणे अणहियासे ।
५ अणागाढे दूरे उच्चारे पासवणे अणहियासे ।
६ अणागाढ दूरे पासवणे अणहियासे ।

(४)

१ अणागाढे आसन्ने उच्चार पासवणे अहियासे ।
२ अणागाढे आसन्ने पासवणे अहियासे ।
३ अणागाढे मज्झे उच्चारे पासवणे अहियासे ।
४ अणागाढे मज्झे पासवणे अहियासे ।
५ अणागाढे दूरे उच्चार पासवणे अहियासे ।
६ अणागाढे दूरे पासवणे अहियासे ।

ऊपर जो ६–६ मण्डला के ४ पाठ दिये गये हैं उन प्रत्येक में पहला दूसरा तीसरा चौथा और पांचवा छठा ये दो दो वाक्य अनुक्रम से निकट, मध्यम और दूर के स्थण्डिलों की प्रतिलेखना के प्रतिपादक हैं इस वास्ते प्रत्येक पट्क में इन दो दो वाक्यों को बोलते समय नजदीक मध्यम और दूर के स्थंडिल की प्रतिलेखना की भावना से उस तरफ चरवला फिराना चाहिये। आज कल की प्रवृत्ति में पहले छ मण्डल करते समय चरवला पथारी के स्थान की तरफ फिराते हैं, दूसरे छ मण्डलों में पोषधशाला के भीतर द्वार के पास, तीसरे छ में द्वार के बाहर और चौथे छ' मण्डल करते समय पोषधशाला के बाहर सौ हाथ के अन्दर चरवला फिरा कर प्रतिलेखना की भावना की जाती है ।

३ दैवसिक प्रतिक्रमण

दैवसिकप्रतिक्रमण सभी पौषधिकों के लिये समान है इस वास्ते 'दिवसपोषध' के अधिकार में कहे मुजब ही रात्रि पोषधवाला को भी दैवसिकप्रतिक्रमण कर लेना चाहिये। हां, इतना जरूर है कि रात्रिपोषधवालों को प्रतिक्रमण के पूर्ण होने पर इरियावही या चउक्कसायादिविधि करने की जरूरत नहीं है, क्योंकि यह विधि उनको संथारापोरिसी पढाते समय करने की है।

४ संथारा पोरिसी पढाने की विधि—

लगभग एक पहर रात तक का समय पौषधिक को सज्झाय-ध्यान या धर्मचर्चा में बीताना चाहिये, और बाद में पूर्वप्रतिलेखित स्थान में दण्डासन या चरवले से प्रमार्जन कर संथारा करे। पूर्वकाल में संथारा दर्भ का किया जाता था परन्तु आज कल ऊनी संथारिया या कम्बल बीछा कर उस पर एक सूती कपडा (उत्तरपट्टा) बीछा लेते हैं।

संथारा बीछा कर नीचे लिखी विधि से संथारा पोरिसी पढाई जाती है।

खमा० इच्छा० 'बहुपडिपुन्ना पोरिसी' फिर खमासमण पूर्वक इरियावही करे। बाद में खमा० इच्छा० 'बहुपडिपुन्ना

पोरिसी राइयसंथारए ठामि' 'इच्छं' कह चउक्कसाय का चैत्य-वन्दन और नमुत्थुणं से जयवीयरायपर्यन्त विधि कर, फिर खमा० इच्छा० 'संथारापोरिसी विधि भणावाना मुहपत्ति पडिलेहुं ?' 'इच्छं' कह मुहपत्ति पडिलेहण कर, पीछे "निसीहि निसीहि निसीहि नमो खमासमणाणं गोयमाइणं महामुणीणं" यह पाठ, एक नवकार और करेमि भन्ते बोल, इस प्रकार इस पाठ को एक नवकार, तथा करेमिभन्ते के साथ तीन वार बोलकर फिर नीचे का पोरिसी पाठ पढ़े—

"अणुजाणह जिट्ठज्जा—अणुजाणह परमगुरू,
गुरुगुणरयणेहि मण्डियसरीरा ।
बहुपडिपुन्ना पोरिसी, राइअसंथारए ठामि ॥१॥
अणुजाणह संथारं, बाहुवहाणेण, वामपासेणं ।
कुक्कुडिपायपसारण, अतरंत पमज्जए भूमिं ॥२॥
संकोइअसंडासा, उव्वट्टंते य कायपडिलेहा ।
दव्वाइउवओगं, ऊसासनिरुम्भणालोए ॥३॥
जइ मे हुज्ज पमाओ, इमस्स देहस्सिमाइ रयणीए ।
आहारमुवहिदेहं, सव्वं तिविहेण वोसिरिअं ॥४॥
चत्तारि मंगलं—अरिहन्ता मङ्गलं, सिद्धा मङ्गलं,
साहू मङ्गलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मङ्गलम् ॥५॥
चत्तारि लोगुत्तमा—अरिहन्ता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा,
साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो ॥६॥

पौषधिक के रात्रिकप्रतिक्रमण में जो फेर फार है वह "पो
लेने के बाद राइयप्रतिक्रमण" नामक 'दिवसपोषध' के
प्रकरण में बता दिया है।

६ प्राभातिक प्रतिलेखना–

रात्रिपौषधिका को प्राभातिक प्रतिक्रमण करके सूर्यो
होने के लगभग समय में प्रतिलेखना करनी चाहिये।

इस प्राभातिक प्रतिलेखना की विधि अक्षरशः "प्रति
लेखना विधि– नामक 'दिवसपोषध' के ४ थे प्रकरण
लिखे मुजब है। भेदमात्र इतना ही है कि यहा पोषध उचर
के अनन्तर होने से 'इरियावही' किये विना ही पडिलेह
शुरू की जाती है और यहा खमासमणपूर्वक इरियावही करने
के बाद खमा० इच्छा० 'पडिलेहण करु?' इत्यादि आदे
मागे जाते हैं, बाकी तमाम विधि एक ही है।

७ देववन्दन तथा सज्झाय–

प्रतिलेखना के बाद रात्रिपौषधिक को "देववन्दन विधि"
नामक ७ वे प्रकरण में लिखित विधि मुजब देववन्दन और
"सज्झायविधि" नामक ८ वें प्रकरण में लिखित विधि मुजब
सज्झाय करना चाहिये। बाद में दण्डासन, कुण्डी, पानी,
कुण्डल, कम्बल, आदि जो चीज याच कर ली हों वे सब
पोषधरहित–गृहस्थ को सौप दे। बाद में पोषध पारे।

८ रात्रिपोषध पारने की विधि–

रात्रिपोषध और दिवसपोषध के पारने की विधि में कुछ भी अन्तर नहीं है। भेदमात्र इतना ही है कि दिवसपोषध पारते समय इरियावही करके 'चउक्कसाय' से ले 'जयवीय-राय" पर्यन्त चैत्यवन्दन कर बाद में खमासमणपूर्वक पोषध पारने की मुहपत्ति पडिलेहते हैं। इसके आगे दोनों प्रकार के पोषध पारने की विधि "पोषध पारने की विधि" नामक १९ वें प्रकरण में लिखे मुजब है।

प्रकीर्णक

१ पोषध व्रत के पांच अतिचार—

(१) शय्या-संथार की भूमि की पडिलेहणा न करे, अथवा अविधि से पडिलेहण करे।

(२) शय्या-संथार की भूमि की प्रमार्जना न करे, अथवा अविधि से प्रमार्जन करे।

(३) स्थण्डिलभूमि (लघुनीति–बडी नीति जाने की जगह) की प्रतिलेखना न करे, अथवा अविधि से प्रतिलेखना करे।

(४) स्थंडिलभूमि की प्रमार्जना न करे, अथवा अविधि से

(५) पोषध विधिपूर्वक पूरा न करे, पारणा की चिन्ता करे, घर के कामों की चिन्ता करे, पोषध के १८ दोष न टाले।

सर्व पौषधिकों को पोषधव्रत के उपर्युक्त पांच अतिचार टालने का प्रयत्न करना चाहिये।

२ पोषधव्रत के १८ दोष—

(१) अव्रती गृहस्थ का लाया हुआ आहार पानी ग्रहण करे।
(२) सरस आहार के लोभ से पोषध करे।
(३) पोषध के निमित्त पहले सरस आहार करे।
(४) पोषध में अथवा पोषध के लिये पहले शरीर विभूषा करे।
(५) पोषध के निमित्त वस्त्र धुलाये।
(६) पोषध के निमित्त आभूषण घडावे अथवा पहिरे।
(७) पोषध के निमित्त वस्त्र रंगाये।
(८) शरीर पर से मैल उतारे।
(९) अकालशयन करे-निद्रा करे।
(१०) स्त्रीकथा करे।
(११) आहारकथा करे।
(१२) राजकथा करे।

(१३) ?शकथा करे।
(१४) प्रतिलेखन-प्रमार्जन किए विना मल मूत्र परठे।
(१५) किसी की निन्दा करे।
(१६) मातापिता पुत्र भाई आदि से सांसारिक बातें करे।
(१७) चौरसम्बन्धी वार्तालाप करे।
(१८) स्त्रियों के अङ्गोपाङ्ग सरागदृष्टि से देखे।

ऊपर लिखी हुई १८ बातें पोषध में करे तो पौषधिक को दोष लगता है इसलिये इनका त्याग करना चाहिये।

३ सामायिक के ३२ दोष—

(मन के १०)

(१) विधि समझे बगैर सामायिक करे।
(२) यश कीर्ति की आशा से सामायिक करे।
(३) धन की इच्छा से सामायिक करे।
(४) सामायिक करने का गर्व करे।
(५) लोकनिन्दा के भय से सामायिक करे।
(६) सामायिक करके पौद्गलिक सुखप्राप्ति का निदान करे।
(७) सामायिक के फल में संशय करे।
(८) कषाययुक्त चित्त से सामायिक करे।
(९) गुरु का अथवा स्थापनाचार्य का विनय न करे।
(१०) [illegible] से सामायिक न करे।

(वचन के १०)

(१) कुवचन बोले ।
(२) उपयोगशून्य अविचारित भाषण करे ।
(३) किसी के ऊपर असत्य कलङ्क लगावे ।
(४) शास्त्रविरुद्ध बोले-उत्सूत्र भाषण करे ।
(५) सूत्रपाठ पूरा न बोले ।
(६) किसी के साथ कलह करे ।
(७) राजकथादि चार विकथा करे ।
(८) किसी की ठट्ठा मश्खरी करे ।
(९) सूत्रपाठ अशुद्ध बोले ।
(१०) सूत्रपाठ का उच्चारण जल्दी जल्दी करे ।

(काया के १२)

(१) पग ऊपर पग चढ़ा कर बैठे या ऊंचे आसन बैठे ।
(२) चपलता से बार बार आसन बदले ।
(३) हिरन की तरह चपलदृष्टि से चारों ओर देखा करे ।
(४) सावद्य कार्य करने का संकेत करे ।
(५) स्तम्भ आदि का अवष्टंभ (ओठा) लेकर बैठे ।
(६) बिना कारण हाथ पग पसारे और सकोचे ।
(७) अङ्गड़ाई ले (आलस मरडे)
(८) अंगुली आदि को मरोड कर कटके पाडे ।

'रजोहरणी गोच्छक' तक के २५ बोल शरीरपडिलेहणा के हैं, इसलिये इनको बोलते समय इनके आगे ( ) ऐसे कोष्ठक में लिखित अङ्ग-विभाग में मुहपत्ति को फिरा कर उसकी पडिलेहणा की जाती है।

पडिलेहण में बोलों का उपयोग

ऊपर जो मुहपत्तिपडिलेहणा के बोल कहे हैं वे पुरुषों की अपेक्षासे समझना चाहिये। स्त्रियां अङ्गपडिलेहणा के बोल में से मस्तक के ३, हृदय के ३ और दो भुजाओं के ४ इन १० बोलों को छोड कर शेष १५ बोलती हैं।

धोती, उत्तरासन, कम्बल आदि वस्त्रों की पडिलेहणा करते समय भी मुहपत्तिके २५ बोल कहने चाहिये। कटासन चरवला और सूती कन्दोरा इनको २५ बोलों में से कम से क्रमश पन्द्रह, दस और दस बोलों से पडिलेहने चाहिये।

• पोषध में जरूरी उपकरण—

नियम-पोषध करने वाले को १ मुहपत्ति, १ चरवला, १ कटासन, १ धोती, १ सूती कन्दोरा, १ उत्तरासन, १ लघुनीति तथा बडीनीति जाते समय पहिनने योग्य धोती और १ नाक साफ करने के लिये वस्त्र का टुकडा इतने उपकरण पास में रख कर पोषध लेना चाहिये।

(३) [illegible]
([illegible]) [illegible]
(३) [illegible]
(२) [illegible]
(३) [illegible]
(३) [illegible]
(३) [illegible]

[illegible]

[illegible] दोनों [illegible] में [illegible] किया हुए बोलना चाहिए। [illegible] 'मुद्रा' [illegible] 'पताका' [illegible] हाथ [illegible] अनामिका [illegible] में [illegible] हाथ [illegible] हथेली ने किया हुए [illegible] जाते हैं। 'पताक' [illegible] हथेली ने ऊपर की तरफ [illegible] जाता है, और 'त्रिपताक' [illegible] अंगुलियों की तरफ [illegible] जाता है। यहाँ तक [illegible] है। 'काम' [illegible]

'नमस्कायनी रक्षा करू' तक के २५ बोल शरीरपडिलेहणा के हैं, इसलिये इनको बोलते समय इनके आगे ( ) ऐसे कोष्ठक में लिखित अङ्ग-विभाग में मुहपत्ति को फिरा कर उसकी पडिलेहणा की जाती है।

पडिलेहण में बोलों का उपयोग

ऊपर जो मुहपत्तिपडिलेहणा के बोल कहे हैं वे पुरुषों की अपेक्षासे समझना चाहिये। स्त्रियां अंगपडिलेहणा के बोलों में से मस्तक के ३ हृदय के ३ और दो भुजाओं के ४ इन १० बोलों को छोड कर शेष ४० बोलती हैं।

धोती, उत्तरासन, कम्बल आदि वस्त्रों की पडिलेहणा करते समय भी मुहपत्तिके २५ बोल कहने चाहिये। कटासन चरवला और सूती कन्दोरा इन्हीं २५ बोलों में से शुरू के क्रमशः पन्द्रह, दश और दश बोलों से पडिलेहने चाहिये।

५ पोषध में जरूरी उपकरण–

दिवस-पोषध करने वाले को १ मुहपत्ति, १ चरवला, १ कटासन, १ धोती, १ सूती कन्दोरा, १ उत्तरासन, १ लघुनीति तथा बडीनीति जाते समय पहिरने योग्य धोती और १ नाक साफ करने के लिये वस्त्र का टुकडा, इतने उपकरण पास में रख कर पोषध लेना चाहिये।

रात्रिपोषध करने वाले को उक्त ८ उपकरणों के उपरान्त नीचे लिखे हुए उपकरण भी लेने चाहिये–१ ऊनी कम्बल, (ठण्डी की मौसम हो तो २ भी रख सकते हैं) १ उत्तरपट्टक सूती, १ कुण्डल जोडी, १ दण्डासन, १ चूनाडाला हुआ पानी, १ लोटा। इससे भी ज्यादा किसी उपकरण की जरूरत हो तो रख लेना चाहिये।

६ कम्बल-काल

आषाढ शुदि १५ से कार्तिक शुदि १४ तक ६ घडी, कार्तिक शुदि १५ से फागुन शुदि १४ तक ४ घडी और फागुन शुदि १५ से आषाढ शुदि १४ तक २ घडी का कम्बलकाल है, इसलिये प्रातः इतनी कची घडी दिन चढने के पहले और सायं इतनी घडी दिन शेष रहे उसके बाद पौषधिक को कम्बल ओढे बगैर खुले आकाश में न जाना चाहिये।

७ अचित्त-जल काल

आषाढ सुदि १५ से कार्तिक शुदि १४ तक ३ पहर, कार्तिक शुदि १५ से फागुन शुदि १४ तक ४ पहर और फागुन शुदि १५ से आषाढ शुदि १४ तक ५ पहर पर्यन्त अग्नि से 'अचित्त' किया हुआ जल 'अचित्त' रहता है। उक्त काल के बाद वह फिर पूर्ववत् 'सचित्त' हो जाता है, इस वास्ते समय पूरा होने के पहले ही उसमें थोडा सा कली का चूना–जिससे

पानी का रंग छाछ की आछ जैसा हो जाय—डाल देना चाहिये ताकि वह २४ पहर तक 'अचित्त' ही रहे।

८ जानने योग्य बातें—

(१) चार अथवा आठ पहर का पोषध करने वाले को उस दिन कम से कम एकाशन का तप तो अवश्य करना चाहिये।

(२) गुरु के योग में पोषध गुरुमुख से ही लेना चाहिये। यदि देर होने के भय से स्वयं उचर ले तो भी बाद में मुहपत्तिपडिलेहणा के पूर्व फिर गुरुमुख से उच्चरना चाहिये।

(३) पडिलेहणा उकडु पगा पर बैठ कर करनी चाहिये, उस समय बोलना न चाहिये, उत्तरासन रखना न चाहिये, जीवजन्तु की जयणा करनी चाहिये।

(४) मुहपत्ति आदि पांच उपकरणों की पडिलेहणा स्थापनाचार्य की पडिलेहणा के पहले भी हो सकती है, परन्तु 'इच्छाकारी भगवन् पसायकरी पडिलेहणा पडिलेहावो जी'' इसके आगे की पडिलेहणाविधि स्थापनाचार्य की प्रतिलेखना होने के बाद ही की जा सकती है।

(५) पोषध में मध्याह्न का देववन्दन किये बगैर पच्च० नहीं पारते।

(६) पौषधिक और अपौषधिक सभी को एकाशन निवी या आयंबिल करने के बाद 'दिवसचरिम तिविहार' का पच्चक्खाण करना चाहिये।

(७) दूसरी बार की पडिलेहणा में उपवास आदि तपवाला को कन्दोरा और पहरने की धोती सबके पीछे पडिलेहनी चाहिये।

(८) मुख्यवृत्त्या पौषधिक को रात्रि में स्थण्डिल जाने का निषेध है, परन्तु कारणविशेष में जाना पड़े तो पोषध शाला से सौ कदम के अन्दर जाना चाहिये।

(९) काल में कम्बल ओढे विना खुली जगह में जाने बैठने, सोने का पौषधिक को निषेध है।

(१०) पौषधिक को मुहपत्ति और चरवला हर समय अपने पास रखना चाहिये और सौ हाथ के उपरान्त कहीं भी जाना हो तो कम्बल साथमें रख कर जाना चाहिये।

॥ इति ॥



'पोषधविधि'का परिशिष्ट—

दशावकाशिक व्रत लेने और पारनेकी विधि—

श्रावक के बारह व्रतोंमें ५ अणुव्रत और ३ गुणव्रत बार बार लिये नहीं जाते, परन्तु ४ शिक्षाव्रत अभ्यासरूप होने से बार बार लिये और पारे जाते हैं।

सामायिक और पोषधव्रत के लेने तथा पारनेकी विधि 'पोषधविधि' में लिखी जा चुकी है, और 'अतिथिसंविभागव्रत' किस प्रकार किया जाय इसकी रीति भी उसके वर्णनमें दी गई है। अब रहा 'दशावकाशिकव्रत' सो इस के लेने और पारनेकी विधि यहां पर लिखी जाती है।

दशावकाशिकव्रत लेने की विधि में दशभेदसे प्रत्या... है। गुजरात में यह व्रत लेने के पहले द्रव्य, क्षेत्र और भाव से सांसारिक प्रवृत्तियों का मनमें नियम ... के बाद गुरुमुखसे अथवा स्वमुखसे—

"देसावगासिय उवभोग परि...

भोगेण सहसागारेण महत्तरागारेण सव्वसमाहिवत्तियागारेण वोसिरइ"

यह आलावा बोल कर दसावगासिक उचरते हैं और बादमें तत्काल अथवा समयान्तरमें सामायिक करते हैं। कुल १० सामायिक करके दशावकाशिक पूरा करते हैं।

मारवाड में कहीं कहीं तो ऊपर मुजब ही देशावकाशिक किया जाता है, परन्तु कई स्थानों में 'पोषध' की ही तरह यह व्रत भी इरियावहीप्रतिक्रमणपूर्वक मुहपत्तिपडिलेहणा करके खमा० इच्छा० 'देसावगासिक संदिसाउं', खमा० इच्छा० 'देसावगासिक ठाउं' 'इच्छं' कह नवकार गिन के नीचेका आलावा बोल कर उचरते हैं—

'अह नं भंते तुम्हाणं समीवे दसावगासियं उवभोग परिभोगं पच्चक्खामि, दुविहं तिविहेणं—मणेणं वायाए काएण न करेमि न कारवेमि, तं देसावगासियं चउव्विहं पन्नत्तं—दव्वओ, खित्तओ, कालओ, भावओ। दव्वओ णं दसावगासियं सव्वदव्वाइं अहिगिच, खित्तओ णं जाव पोसहसाला ए वा, कालओ णं जाव नियमं वा दिवसं, भावओ णं जाव एस परिणामो न परिवडइ, तस्स भंते पडिक्कमामि निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ॥"

१ उच्चरनेवाला 'वोसिरामि' वाले जो स्वमुखसे उच्चरता हो तो केवल 'वोसिरामि' ही बोले।

इस के बाद सामायिकविधिसे सामायिक उच्चरते है और शाम को जब देसावकाशिक पारते है उसी समय सामायिक भी पारते हैं।

देसावकाशिक पारते समय इरियावही, मुहपत्तिपडिलेहणा और आदेश लेना आदि विधि पोषध की तरह की जाती है और चरवले पर हाथ स्थापन कर नवकार गिन के 'सागर चंदो' की जगह नीचे की गाथा बोली जाती है—

"जं जं मणेण बद्धं, जं जं वायाए भासियं पावं।

जं जं काएण कयं, मिच्छामि दुक्कडं तस्स ॥"

इस के बाद सामायिक पारते है। इति।



